प्रकाशकीय

आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा

आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा.

"हुक्म संघ के आचार्य"

1 आचार्य श्री हुक्मीचदजी म सा – दीक्षा वि स 1870, स्वर्गवास वि स 1917
ज्ञान-सम्मत क्रियोद्धारक साधुमार्गी परम्परा के आसन्न उपकारी।

2 आचार्य श्री शिवलालजी म सा – दीक्षा वि स 1891, स्वर्गवास वि स 1933
प्रतिभा–सम्पन्न प्रकाण्ड विद्वान परम तपस्वी, महान शिवपथानुयायी।

3 आचार्य श्री उदय सागरजी म सा – दीक्षा 1918, स्वर्गवास वि स 1954
विलक्षण प्रतिभा के धनी, वदीमान–मर्दक, विरक्तो के आदर्श विलक्षण।

4 आचार्य श्री चौथमलजी म सा – दीक्षा 1909, स्वर्गवास वि.स 1957
महान क्रियावान, सागर सम गभीर, सयम के सशक्त पालक शात–दात, निरहकारी, निर्ग्रन्थ शिरोमणि।

5 आचार्य श्री श्रीलालजी म सा – दीक्षा 1944, स्वर्गवास वि स 1977
सुरा–सुरेन्द्र–दुर्जय कामविजेता, अद्भुत स्मृति के धारक, जीव–दया के प्राण।

6 आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा. – दीक्षा 1947, स्वर्गवास वि स 2000
ज्योतिर्धर महान क्रातिकारी, क्रातदृष्टा, युगपुरुष।

7 आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा – दीक्षा 1962, स्वर्गवास वि स 2019
शात क्राति के जन्मदाता, सरलता की सजीव मूर्ति।

8 आचार्य श्री नानालालजी म सा – दीक्षा 1996, स्वर्गवास वि स 2056
समता–विभूति विद्वद्शिरोमणि जिनशासन प्रद्योतक धर्मपाल प्रतिवोधक, समीक्षण ध्यानयोगी।

9 आचार्य श्री रामलालजी म सा – दीक्षा 2031, आचार्य वि स 2056 से
आगमज्ञ तरुण तपस्वी तपोमूर्ति उग्रविहारी सिरीवाल प्रतिवोधक व्यसनमुक्ति के प्रवल प्रेरक, वालव्रह्मचारी प्रशातमना।

अर्थ–सहयोगी परिचय

श्रेष्ठीवर्य समतासाधक, शासननिष्ठ समाजसेवी, सुश्रावक स्व. फतेचन्दजी डागा गंगाशहर

सुश्रावक स्व फतेचन्दजी डागा दत्तक पुत्र स्व शेरमलजी डागा पुत्र स्व चादमलजी डागा गाव रामसर से गगाशहर आए और अपने सद्गुणो के बल पर गगाशहर–भीनासर और बीकानेर सहित पूरे मरुक्षेत्र मे एक प्रतिष्ठित, सुधार्मिक, समाजसेवी के रूप मे विख्यात हो गए। स्व फतेचदजी डागा सहज, सौम्य, मिलनसार, स्पष्टवक्ता समतादर्शी, उदारमना और हुक्मसघ के प्रति सर्वभावेन समर्पित थे। स्व आचार्य श्री नानेश की आपने अपूर्व सेवा की और वर्तमान आचार्य प्रवर श्री रामलालजी म सा के प्रति आपकी अनन्य श्रद्धा थी। आपका कर्मक्षेत्र कूचबिहार जिले का तूफानगज था। दिनाक 8 मार्च 2004 को श्री फतेचदजी डागा का 81 वर्ष की आयु मे देहावसान हो गया। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती धापूदेवी डागा का निधन आपके महाप्रयाण से 10 वर्ष पूर्व ही हो गया था किन्तु आपने इस असह्य आघात को भी समभाव से सहन किया।

आपकी धर्मपत्नी श्रीमती धापूदेवी डागा भी एक आदर्श सुश्राविका थी। दया–धर्म और सत–सती वृन्द की सेवा मे आपकी गहन अभिरुचि थी। आपने अपनी सतती को ऐसे सत् सस्कार प्रदान किए कि आज भी आपकी कूख सराही जाती हे।

सौभाग्यशाली डागा दम्पति ने 6 पुत्रो और एक पुत्री को जन्म दिया। आपकी सतती को जन्मजात सेवा सघनिष्ठा, धर्माचरण व्यावसायिक कौशल और उदारता के सस्कारो की धरोहर प्राप्त हुई।

आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री चम्पालालजी डागा सुशिक्षित, सुसस्कारित और अनथक परिश्रमी व्यक्तित्व के धनी है। अपने जीवन के उषाकाल मे ही जैन कालेज छात्रसघ की धुरी बनकर उभरे ओर युवावस्था मे प्रवेश करते–करते गगाशहर नगरपालिका के पार्षद बनकर लोकसेवा मे प्रवृत हुए। वत्सल श्री चम्पालालजी श्री अ भा साधुमार्गी जेन सघ के चितक मत्री महामत्री कोषाध्यक्ष व उपाध्यक्ष पद को सुशोभित करते हुए गत 35 वर्षो से अविश्रान्त सेवा दे रहे है। सम्प्रति आप सघ के मुखपत्र श्रमणोपासक के सम्पादक हे। [illegible] दीपाकर [illegible] के अध्यक्ष श्री नइ लेन ओसवाल [illegible] उपाध्यक्ष ट्रस्टी वरिष्ठ रोटेरियन जन पाठशाला सभा क

सदस्य श्री जवाहर विद्यापीठ भीनासर के अध्यक्ष राजस्थान सरकार द्वारा पुरस्कृत भामाशाह ओर अनेक सस्थाओ मे प्रमुख भूमिका निभा रहे हें।

डागा परिवार की प्रथम कुलवधू श्रीमती सुन्दर देवी डागा सुधार्मिक सुरुचि सम्पन्न, सदा प्रसन्न ओर अतिथिवत्सलय महिला रत्न थी। आप गगाशहर के श्री भवरलाल जी बोथरा की सुपुत्री थी। आपने सुदीर्घ बीमारी म भी अदम्य आत्मशक्ति का परिचय दिया। आपके असामायिक निधन से परिवार को गहन क्षति हुई।

डागा परिवार के द्वितीय रत्न श्री धनराज जी डागा सप्रति बॅगलोर एक प्रसिद्ध उद्योगपति ओर श्री अ भा साधुमार्गी जेन सघ के पूर्व राष्ट्रीय उपाध्यक्ष ह। श्री धनराज जी के साथ उनके दोनो अनुज श्री जेठमलजी एव श्री जयचन्दलाल जी भी बेंगलोर के राजनेतिक–सामाजिक–धार्मिक जीवन मे अपनी सेवा सहयोग और उदारता के लिए विख्यात हें।

श्री कमलचन्द डागा श्री अ भा साधुमार्गी जेनसघ के पूर्व उपाध्यक्ष ओर दिल्ली सघ के उपाध्यक्ष हें। अग्रणी समाजसेवी हें। सबसे छोटे श्री विमलचदजी डागा का कर्मक्षेत्र बीकानेर हे। आप अनेक राजनेतिक सामाजिक सस्थाओ से जुडे हुए हें। आप केन्द्रीय फिल्म सेसर बोर्ड के ओर दूरसचार समिति के पूर्व सदस्य हें।

सेठ स्व फतेहचदजी डागा की इकलोती पुत्री श्रीमती सूरजदेवी सिपानी भी धर्मनिष्ठ सुश्राविका हें। आपके दामाद श्री रिधकरणजी सिपाणी बॅगलोर के प्रसिद्ध उद्योगपति हें ओर सघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष पद को सुशोभित कर चुके हें।

स्व फतेचदजी धापूदेवी डागा परिवार के देशव्यापी सेवाकार्यो मे से कुछ निम्न प्रकार हें – डागा गेस्ट हाऊस गगाशहर सेठ शेरमल फतेचद डागा राजकीय बालिका विद्यालय गगाशहर आचार्य श्री नानेश उच्च माध्यमिक विद्यालय भवन दाता आचार्य श्री नानेश धार्मिक चिकित्सालय गगाशहर का निर्माण जहा परामर्श ओर उपचार भी नि शुल्क दिया जाता हें। डागा परिवार द्वार देश भर मे धर्मशाला चिकित्सालय व स्कूल मे भवन दान किये गये हें। इस प्रकार देशभर मे डागा परिवार के सेवा कार्यों की पुण्य सलिता सतत प्रवाहनान रहती ह।

डागा परिवार का यह प्रशस्त सुयश जन–जन को सेवा–शिक्षा ओर सस्कार की प्ररणा दकर सदाचारी समाज ओर राष्ट्र जीवन की प्रेरक शक्ति बना ह। डागा परिवार इसी प्राकर कालजयी सेवा कार्यों का समर्पित रहकर जीवन को सुवासित करता रह मगल मनीषा।

कार्तिक शुक्ला 1

अक्सर लोग सरल काम को कठिन और कठिन काम को सरल समझ बेठते है। यह बुद्धि का विकार है। इसी बुद्धि–विकार के कारण परमात्मा का स्वरूप समझना कठिन कार्य जान पडता है। वस्तुत परमात्मा का स्वरूप समझना सरल है।

तुम कौन हो? तुम माता के उदर मे से नही आये हो, वरन् परलोक से आये हो और परलोक मे जाने वाले हो। इस प्रकार तुम अविनाशी हो। अपने आपको समझने का यत्न करो।

पानी भरने के लिए गई हुई पाच–सात सहेलिया हास्य–विनोद करती है बातचीत करती है फिर भी उनका ध्यान तो सिर पर रखे घडे मे ही रहता है। इसी प्रकार जब मन को परमात्मा मे एकाग्र कर लिया जाता हे तो दूसरे कार्य भी रुकते नही है।

तुम जिसकी सेवा करते हो उस पर ऐहसान मत जताओ। उपकार समझ कर नही वरन् कर्त्तव्य समझ कर सेवा करो। ऐसा करने से तुम्हारे चित्त मे अहकार नही जनमेगा।

कार्तिक शुक्ला 2

सासारिक पदार्थो को प्राप्त करने के लिये अगर परमात्मा से प्रार्थना करोगे तो याद रखो ससार के पदार्थ तुम्हे लात मार कर चलते बनेगे ओर तुम्हारी तृष्णा ज्यो की त्यो बनी रहेगी।

अपना भला चाहते हो तो दूसरो का भला चाहो। दूसरो का बुरा चाहना अपना बुरा चाहना है।

पश्चात्ताप करने से पाप का प्रक्षालन तभी होता हे जब पुन पाप [illegible] न हो। गगास्नान से सब पाप धुल जाएगे ऐसा सोचकर [illegible] प्रवृत्ति करने वालो का अनुकरण मत करो।

व्यक्तिगत लाभ–अलाभ से पहले समूहगत लाभ–अलाभ का विचार करना उचित है। व्यक्ति की हानि होगी तो एक की हानि होगी। अत समष्टिगत स्वार्थ व्यक्तिगत स्वार्थ की अपेक्षा प्रधान हे।

कार्तिक शुक्ला 3

तुम्हे आज जो तन–धन की प्राप्ति हुई हे सो धर्म के प्रताप से ही। ऐसी अवस्था मे धर्म के लिए क्या तन–धन को समर्पण नही कर सकते?

हे प्रभो! मेरी जीभ मे जितनी शक्ति हे, उस सब को सग्रह करके मै तेरा ही गुणगान करूगा। तेरा गुणगान करने मे मै कभी तृप्ति नही मानूगा।

जैसे प्रकाश की विद्यमानता मे अन्धकार नही ठहर सकता, उसी प्रकार अन्त करण मे परमात्मा को स्थापित करने से पाप नही ठहर सकता।

दु खो के बचने के लिए परमात्मा का स्मरण करना एक प्रकार की कायरता है। परमात्मा का स्मरण दु ख–सहन करने की क्षमता प्राप्त करने के लिए करना उचित है।

हजारो साधन भी जब रक्षा करने मे असमर्थ सिद्ध होते है तो क्या यह सिद्ध नही होता कि पुण्य की अदृश्य शक्ति ही वास्तव मे प्राणी की रक्षा करती हे?

कार्तिक शुक्ला 4

अहकार से बुद्धि भी अहकारमय बन जाती है ओर ऐसी बुद्धि आत्मा को पतित करती हे। अहकार–बुद्धि आत्मा के हित की किसी बात का ध्यान नही रखती। वह सीधी बात को उल्टी ओर उल्टी बात को सीधी वतलाती हे।

मन वाणी ओर क्रिया को शुद्ध करके जब परमात्मा की प्रार्थना की जाती हे तो शान्ति प्राप्त होती ही हे। परमात्मा निमित्त कारण हे ओर आत्मा उपादान कारण। आत्मा शुद्ध होगा तो परमात्मा के द्वारा अवश्य शान्ति मिलगी।

जिसके शरीर पर अशुचि लगी हे उसे राजा से मिलन मे सकाच हाता ह ओर राजा भी उससे नही मिलता इसी प्रकार जब तक आत्मशुद्धि न हा तव तक परमात्मा स भट नहीं हा सकती।

एकान्तवास भयकर होता है। लेकिन एकान्तवास के साथ अगर ज्ञान–भाव हो तो वह अत्यन्त लाभपद भी सिद्ध होता है।

कार्तिक शुक्ला 5

तुम्हारे अन्त करण मे मेत्रीभावना होगी तो जिसे तुम विरोधी समझते हो उसमे भी वही भावना उत्पन्न हुए बिना न रहेगी। तुम्हे सिह हिसक जान पडता है, इस का कारण यही है कि तुम्हारे भीतर हिसा की भावना है। तुम्हारे भीतर की हिसा ही सिह और साप को हिसक बनाती है।

ज्ञानीजन मृत्यु को भी महोत्सव मानते है। उनकी दृष्टि मे शरीर–पीजरे से आत्मा का छुटकारा होना बुरी बात नही है।

एक प्रकार से मृत्यु ही कल्याण का मार्ग है। कल्पवृक्ष की कल्पना तो दूर की हे, मगर मृत्यु साक्षात् कल्पवृक्ष है। मृत्यु से यथेष्ट फल प्राप्त किया जा सकता है क्योकि मृत्यु से यथेष्ट फल प्राप्त किया जा सकता है, क्योकि मृत्यु के समय जैसे भाव होगे वैसा फल मिलेगा।

जैसे कच्चे घडे को आग मे पकाने के पश्चात् ही उसमे पानी रह सकता हे उसी प्रकार मृत्यु का ताप सहने के पश्चात् ही आत्मा समाधिमरण के कारण शान्ति प्राप्त करता है।

कार्तिक शुक्ला 6

दूसरे के अधिकार को अपहरण करके यश प्राप्त करने की इच्छा मत करो जिसका अधिकार हो उसे वह सौप कर यश के भागी बनो।

जो अपने पापो को स्वच्छ हृदय से प्रकट करके पवित्र बन जाता है वह परमात्मा को प्यारा लगता है। अपने पापो का गोपन करने वाला अधिक पापी बनता हे।

सन्तान तो पशु भी उत्पन्न करते है। इसमे मनुष्य की कोई विशेषता नही है। मनुष्य की विशेषता सन्तान का समुचित रूप से पालन–पोषण करके सुसस्कारी बनाने मे हे।

किसी स्वजन की मृत्यु के पश्चात छाती पीटना ओर रोना प्रगाढ अविवेक का लक्षण हे। ऐसा करने से न मृतात्मा वापिस लौटता है ओर न रोने वाले का दुख ही दूर हो सकता हे। ऐसे प्रसगो को ससार का वास्तविक स्वरूप बतलाने वाला बोध–पाठ मानना चाहिए।

कार्तिक शुक्ला 7

जब तक तुम्हारा मस्तिष्क ओर हृदय निदा ओर प्रशसा को समान रूप से नही ग्रहण करता, समझना चाहिए कि तुमने तब तक परमात्मा को पहिचाना ही नही है।

प्रशसा और निन्दा सुनकर हर्ष और विषाद की उत्पत्ति बुद्धि के विकार के कारण होती है। बुद्धि का यह विकार परमात्मा की प्रार्थना से निश्शेष हो जाता है।

जिस दिन पृथ्वी पर पतिव्रता का अस्तित्व नही रहेगा, उस दिन सूर्य, पृथ्वी और समुद्र अपनी–अपनी मर्यादा त्याग देगे।

जो पुरुष परधन और परस्त्री से सदैव यत्नपूर्वक बचता रहता है उसका कोई कुछ भी नही बिगाड सकता।

तुम्हारे सुसस्कारो को दुस्सस्कार दबा देते हैं। और तुम गफलत मे पडे रहते हो। दृढता के साथ अपने सुसस्कारो की रक्षा करो तो आत्मा की बहुत उन्नति होगी।

कार्तिक शुक्ला 8

जिसका हृदय पापो को नष्ट करने के लिये अत्यन्त दृढतापूर्वक तेयार हो गया हे, वह भूतकाल मे कैसा ही बडा पापी क्यो न रहा हो अवश्य ही पापो को नष्ट करके निष्पाप बन सकता हे।

तुम्हारे इस बहुमूल्य जीवन का समय निरन्तर–अविश्रान्त गति से व्यतीत होता जा रहा हे। जो समय जा रहा हे वह फिर कभी नही मिलेगा। इसलिये हे मित्र, प्रमाद मे समय मत गवाओ। कोई ऐसा कार्य करो जिससे तुम्हारा और दूसरो का कल्याण हो।

सच्चा पति वही हे जो पत्नी को पवित्र वनाता हे ओर सच्ची पत्नी वही ह जो अपने पति को पवित्र बनाती हे। सक्षेप मे जो अपने दाम्पत्य–जीवन को पवित्र वनाते हें वही सच्चे पति–पत्नी हैं।

क्रोध और अहकार का जीतने वाला पुरुष महान् हे। क्रोध–विजयी पुरुप ही लोकप्रिय वन सकता हे।

कार्तिक शुक्ला 9

जीभ सभाल कर बोलने का पहला स्थान पति–पत्नी की बातचीत मे है। जो घर मे जीभ सभाल कर बोलता है वह बाहर भी जीभ सभाल कर बोलेगा, जो घर मे जीभ पर काबू नही रख सकता वह बाहर भी काबू नही रख सकेगा।

परमात्मा का मौखिक नामस्मरण करने से सच्चा शरण नही मिलता। परमात्मा द्वारा निर्दिष्ट धर्ममार्ग पर चलने मे ही सच्चा शरण है।

जिसके अन्त करण मे परमात्मा के प्रति अनन्य विश्वास है, जो हृदय से परमात्मा को मानता है और जिसे परमात्मा के अस्तित्व मे लेशमात्र भी सदेह नही है, उसे ही परमात्मा की प्रार्थना करने का सच्चा अधिकार है।

केतकी के साथ प्रीति जोडकर भ्रमर दूसरी जगह नही जाता और केतकी की सुगध लेने मे ही लीन रहता है–दुर्गंध की ओर नही जाता, इसी प्रकार तुम अपने विषय मे देखो कि परमात्मा के प्रति प्रीति जोडने के बाद तुम्हारा मन दुर्गुणो–पापो की ओर तो प्रवृत्त नही होता?

कार्तिक शुक्ला 10

गन्ना खेत मे लगा हुआ भी मीठा रहता है और घानी मे पेरते समय भी मीठा रहता है। सोना चाहे खान मे हो, चाहे गले मे धारण किया हो, सोना ही रहता है। इसी प्रकार धर्मात्मा चाहे सुख मे हो, चाहे दु ख मे हो, धर्मात्मा ही रहता है।

चमगादड दिन मे नही देख सकता तो क्या हम दिन मे देखना छोड देते है? तो फिर किसी मिथ्यादृष्टि के मिथ्यात्व को देख कर हम अपना सम्यक्त्व क्यो छोड दे?

जिस वीर्य से तीर्थकर जेसे महान् पुरुषो की उत्पत्ति हो सकती है उस वीर्य का अनावश्यक व्यय करना केसे उचित कहा जा सकता है? ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले तो प्रशसा के पात्र हे ही किन्तु जो वीर्य का दुरुपयोग नही होने देता और नीति को पालन करता हे वह भी धन्यवाद का पात्र है।

खरे सोना पाने के लिए धूल त्याग देना कठिन नही हे उसी प्रकार [illegible] का त्याग करना और सत्य–शील को स्वीकार करने के लिए तुच्छ [illegible] का त्याग करना क्या बड़ी बात हे?

कार्तिक शुक्ला 11

भोग–विलास की सामग्री जब तुम्हारे हृदय को आकर्षित करने लगे तब इतना विचार अवश्य कर लेना कि हमारे मोज–शोक के लिए कितने जीवो को, कितना कष्ट पहुचता हे?

जो पुरुष स्त्री को गुलाम बनाता हे, वह स्वय गुलाम बन जाता हे। जो पुरुष स्त्री को 'देवी बनाता है, वह 'देव' बन जाता हे।

सम्पत्ति पाकर सज्जन पुरुष अधिक नम्र हो जाता है, ओर अपने उत्तरदायित्व के भार को अनुभव करता हे।

सच्चा साधु वह है जो वदना–नमस्कार करने से प्रसन्न नही होता ओर गालिया सुनकर क्रुद्ध नही होता। समभाव साधु का सर्वस्व है। इससे विरुद्ध बर्ताव करने वाला साधु साधुता को अपमानित करता हे।

पक्षी अपनी शक्ति के अनुसार आकाश मे बहुत ऊचे उडते है फिर भी आकाश का पार नहीं पाते। इसी तरह छद्मस्थ परमात्मा के स्वरूप के विषय मे अनेक तर्कवितर्क ओर कल्पनाए करते हैं किन्तु परमात्मा के स्वरूप का पार नही पा सकते।

कार्तिक शुक्ला 12

साधारणतया ससार के सभी प्राणी कोई न कोई क्रिया करते हें। लेकिन अज्ञानपूर्वक की जाने वाली क्रिया से कुछ भी आध्यात्मिक लाभ नही होता। जो क्रिया ज्ञानानुसारिणी नही हे वह प्राय निष्फल ही सिद्ध होती हे।

सकल्प–शक्ति एक महान शक्ति हे। अगर तुम्हारा सकल्प सच्चा ओर सुदृढ हे तो निश्चय ही तुम्हारे दु खो का अन्त आये बिना नही रह सकता। हा ढीले सकल्प से कुछ होता–जाता नही हे।

शरीर रथ है। इन्द्रिया इस रथ के घोडे हें। मन सारथी हे। आत्मा रथ मे विराजमान रथी हे। रथ ओर रथी को अलग–अलग न मानना अधापन हे।

जब कोई तुम्हारी निदा करने लगे तो आत्म–निरीक्षण करने लगो। इससे बडे लाभ होगे।

जसे पनिहारी हसती–बोलती जाती हे पर सिर पर रखी खेप को नही भूलती इसी प्रकार सम्यग्दृष्टि पुरुष सासारिक कार्य करता हुआ भी भगवान का नही भूलता।

कार्तिक शुक्ला 13

उपवास शरीर और आत्मा—दोनो के लिए लाभप्रद है। हमेशा पेट मे आहार भरते रहोगे और उसे तनिक भी विश्राम न लेने दोगे तो पेट मे विकार उत्पन्न हुए बिना नही रहेगा। अतएव शरीर और आत्मा को स्वस्थ रखने के लिए उपवास अत्यन्त उपयोगी है।

लोग सासारिक सुख को पकडने का जितना प्रबल प्रयत्न करते है, सुख उतनी ही तेजी के साथ उनसे दूर भागता है।

साकल की एक कडी खीचने से जैसे सारी साकल खिच आती है, उसी प्रकार परमात्मा की कोई भी शक्ति अपने मे खीचने से समस्त शक्तिया खिच आती है।

तुम मानते हो कि हम महल और धन—दौलत आदि के स्वामी हैं, पर एक बार एकाग्र चित्त से सोचो कि वास्तव मे ही क्या तुम उनके स्वामी हो? कही वह तुम्हारे स्वामी तो नही है? तुम उनके गुलाम ही तो नही हो?

जो निर्बल है वही दुख का भागी होता है। बलवान् को कौन सता सकता है? बेचारे बकरे की बलि चढाई जाती है। शेर की बलि कोई नही चढाता।

कार्तिक शुक्ला 14

सस्कार की दृढता के कारण माता के साथ दुराचार सेवन करने का स्वप्न मे भी विचार नही आता, यही सस्कार अगर पर—स्त्री मात्र के विषय मे दृढ हो जाय तो आत्मा का बहुत उत्थान हो।

वीर्य मनुष्य का जीवन—सत्व है। वीर्य का ह्रास होने से जीवन का ह्रास होता है। ऐसी स्थिति मे वीर्य का दुरुपयोग करने से बडा दुर्भाग्य और क्या कहा जा सकता है?

उपास्य की उपासना के लिए उपासना को साधनो का अवलम्बन लेना पडता है। आत्मा प्राणो को व्यर्थ न मान कर अगर ईशवर—उपसना का साधन मानेगा तो प्राण ईश्वर के प्रति समर्पित रहेगे। ओर जब समस्त प्राण ईश्वर के प्रति समर्पित रहेगे तो मुखमडल पर ऐसी दीप्ति —तेजस्विता प्रकट होगी कि उसके आगे ससार के समस्त तेज फीके पड जायेगे।

वह सम्पत्ति सम्पत्ति नही, विपत्ति, हे जो आत्मा ओर परमात्मा के बीच मे दीवाल बन कर खडी हो जाती हे ओर दोनो के मिलन मे वाधा डालती है।

कार्तिक शुक्ला 15

पलक मारना बन्द करके, अपने नेत्रो को नाक के अग्र भाग पर स्थापित करो। जब तक पलक न गिरेगे मन एकाग्र रहेगा। मगर यह द्रव्य–एकाग्रता हे। आखो की ज्योति को अन्तर्मुखी बना लो तो आत्मा मे अपूर्व प्रकाश दिखाई देगा।

वास्तव मे वह अनाथ है, जो दूसरो का नाथ होने का अभिमान करता हे। सनाथ वह हे जो अपने को दूसरो का नाथ नही मानता और अपने आत्मा के सिवाय दूसरो को अपना नाथ नही समझता।

जितने महापुरुष हुए है, सब इस पृथ्वी पर ही हुए हे। इस पृथ्वी पर रहते हुए अपना और पराया कल्याण जितना किया जा सकता है, उतना अन्यत्र कही नही, देवलोक मे भी नही। देवलोक मे सभी जीव सुखी हैं। वहा किस पर करुणा की जाएगी। करुणा करने का स्थान तो यह भूमि हे। अतएव आत्महित करने के साथ परहित करने मे उत्साह रखो–ऐसा उत्साह जो कभी कम ही न हो।

मार्गशीर्ष कृष्णा 1

अनेकानेक प्रयत्न करने पर भी जो वस्तु प्राप्त होना कठिन हे वह आत्मसयम से सहज ही प्राप्त हो जाती हे।

सूर्य स्वय प्रकाशमय हे किन्तु वादलो के आवरण के कारण उसका प्रकाश दब जाता हे। जव वादल हट जाते हे तो सूर्य फिर ज्यो का त्यो प्रकाशमय हो उठता हे। इसी प्रकार आत्मा ज्ञानमय हे किन्तु कर्मजन्य पदार्थो पर अपना स्वामित्व स्थापित करने के कारण उस पर अज्ञान का आवरण चढा ह। आवरण हटने पर आत्मा ज्ञानमय हे। वादलो को हटाना आत्मा के अधिकार मे ह। देह भिन्न ओर आत्मा भिन्न हे। शरीर खडित तथा विनाशशील ह आर आत्मा अखडित तथा अविनाशी हे– शरीर जड ओर आत्मा चेतन हे। इस प्रकार का विवक उत्पन्न होते ही अज्ञान विलीन हा जाता हे।

वास्तव मे काम, क्रोध आदि विकार ही दु:खरूप है। परमात्मा का स्मरण और भजन करते रहने से यह विकार पास मे नही फटकने पाते और तब दु:ख भी शेष नही रहता।

मार्गशीर्ष कृष्णा 2

क्यो जी, तुम जिन भोगविलासो को सुख का कारण मानते हो, उन्हे ज्ञानी पुरुषो ने क्यो त्यागा है? भोगविलास अगर सुख के कारण होते तो ज्ञानी क्यो त्यागते? अगर उन त्यागी पुरुषो के प्रति तुम्हारी आस्था है तो उनका अनुकरण क्यो नही करते?

जिस वस्तु के साथ तुम अपना सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हो, पहले उससे पूछ देखो कि वह तुम्हे त्याग कर चली तो नही जाएगी?

इसी प्रकार अपने कान–नेत्र, नाक आदि से पूछ लो कि वे बीच मे दगा तो नही देगे? अगर दगा देते है तो तुम उन्हे अपना कैसे मान सकते हो?

तुम दूसरो को अपना मित्र बनाते फिरते हो, लेकिन क्या कभी अपनी जीभ को भी मित्र बनाने का प्रयत्न किया है? अगर तुम्हारी जीभ तुम्हारे साथ शत्रुता रखती है तो दूसरा मित्र क्या रक्षा कर सकेगा? इसके विपरीत अगर तुम्हारी जीभ मित्र है तो ससार तुम्हारा मित्र बन जाएगा।

मार्गशीर्ष कृष्णा 3

नीति और धर्म यह दोनो जीवन–रथ के दो चक्र है। दोनो मे से एक के अभाव मे जीवन की प्रगति रुक जाती है।

हे आत्मन! क्या तुझे अपनी पूर्वकालीन स्थिति का भान है? जरा स्मरण तो कर तू ने कहा–कहा के कितने चक्कर लगाये हैं? अब, जब ठिकाने पर आया है तो पागलो की तरह बेभान न हो।

परमात्मा की प्रार्थना को गोण और दुनियादारी के कामो को मुख्य मत मानो। दुनियादारी के काम छूट नही सकते तो कम से कम उन्हे गौण और परमात्मा की प्रार्थना को प्रधान मानो। इतने से भी तुम्हारा कल्याण होगा।

विवेक–ज्ञानी पुरुष अपने शरीर का पालन करता हुआ भी तीन [illegible] को तुच्छ मानता है। वह आत्मा और धर्म को ही सारभूत

गिनता हे। आत्मा ओर शरीर का विवेक समझने वाला कभी पाप का भागी नही वनता। वह सासारिक वस्तुओ के प्रलोभन मे पडकर ठगाता नही हे।

मार्गशीर्ष कृष्णा 4

ईशप्रार्थना दो प्रकार की हे असली ओर नकली। जिस प्रार्थना का उद्भव अन्तरतर से होता हे जो हृदय के रस से सरस होती हे वह असली प्रार्थना हे। ओर जो जीभ से निकलती हे वह नकली एव लोकदिखाऊ प्रार्थना हे। अन्तरतर से निकली हुई प्रार्थना से ही अन्तरग की शुद्धि होती हे।

भोग भोग लेने से मनुष्य–शरीर की सार्थकता नहीं होती। भोगो को भोगना तो पाशविक जीवन व्यतीत करना हे। भोगो की इच्छा पर विजय पाना ही मानव–शक्ति की सार्थकता हे।

जेसे दीपक के प्रकाश के सामने अन्धकार नही रह सकता उसी प्रकार शील के प्रकाश के सामने पाप का अन्धकार नही ठहर सकता। मगर पाप के अन्धकार को मिटाने ओर शील के प्रकाश को फेलाने के लिए दृढता धेर्य आर पुरुषार्थ की अपेक्षा रहती हे।

धर्म कोई वाहर की वस्तु नहीं हे। वह अन्दर से पेदा होता हे। खराब कामो से वचना ओर सदाचार के साथ सवध जोडना ही धर्म हे।

मार्गशीर्ष कृष्णा 5

परमात्मा की शरण लेने से निश्चय ही दुख का विनाश होता हे ओर वह दुख का विनाश सदा के लिए ही होता हे।

वालको के कोमल दिमाग मे कल्पना का जो भूत घुस जाता हे, वही समय पाकर असली भूत का रूप धारण कर लेता हे।

भ्रमर ओर फूल सूर्य और कमल तथा पपीहा ओर मेघ मे जेसा प्रेम–सवध हे वैसा ही सवध जव भक्त ओर भगवान् मे स्थापित हो जाता हे तभी प्रार्थना सच्ची होती हे।

कुटुम्व का भार उठाने की शक्ति न होने पर भी सन्तान उत्पन्न करना ओर अपनी विषय–वासना पर नियत्रण न रखना अपनी मुसीवत वढा लेना ह। एसी स्थिति म व्रह्मचर्य का पालन ही सर्वश्रेष्ठ उपाय हे। कृत्रिम साधनो का प्रयाग करना दश और समाज क प्रति ही नहीं वरन अपने जीवन के प्रति भी द्राह करना हैं।

मार्गशीर्ष कृष्णा 6

कुत्ते जिस घर मे हिल जाते है, बार–बार आते है। उसी प्रकार काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि विकार जिसके हृदय मे हिल जाते है, बार–बार आते रहते हे। महात्मा पुरुष उनके आने का द्वार ही बद कर लेते है।

भक्त के लिए परमात्मा का आकर्षण वैसा ही है जैसे लोहे के लिए चुम्बक का।

जो पुरुष केवल अपना ही स्वार्थ देखता है वह वास्तव मे अपने ही स्वार्थ का नाश करता है। जो परोपकार करता है वह आत्मोपकार करता है।

तुम स्वय सत्कार्य नही कर सकते तो सत्कार्य करने वाले की प्रशसा तो कर सकते हो? उसे उत्साह दे सकते हो, धन्यवाद दे सकते हो। इतना करके भी अपना कल्याण कर सकते हो।

ससार मे 'लेने' मे आनन्द मानने वाले बहुत है तो 'देने' मे आनन्द मानने वाले भी है। वह धन्य है जो दूसरो की रक्षा के लिए अपने प्राण भी दे देते हे।

मार्गशीर्ष कृष्णा 6

परिग्रह आत्मा पर लदा हुआ वह बोझ हे जो आत्मा को उन्नत नही होने देता ओर मोक्ष की ओर नही जाने देता।

इन्द्रियो के दमन करने का अर्थ इन्द्रियो का नाश करना नही। जैसे घोडे को मनचाहा न दौडने देकर लगाम द्वारा काबू मे रखा जाता है, उसी प्रकार इन्द्रियो को विषयो की ओर न जाने देना इन्द्रिय दमन कहलाता हे।

आत्मा और शरीर को तलवार और म्यान की तरह समझ लो तो फिर क्या चाहिए? समझ लो कि आत्मविजय की चाबी तुम्हारे हाथ मे आ गई हे।

कैसी ही आपत्ति क्यो न आ पडे धैर्यपूर्वक उसे सहन करने ओर हर समय भी धर्म की रक्षा करने मे ही सच्ची वीरता हे।

[illegible] से प्रेमपूर्वक काम लेना एक बात हे ओर लाल–लाल [illegible] लेना दूसरी बात ह। प्रेमपूर्वक काम लेने से स्वामी आर [illegible] रहता ह।

मार्गशीर्ष कृष्णा 7

सासारिक पदार्थो का सग्रह कर रखने वाला–उनके प्रति ममता रखने वाला–उन्ही पदार्थों को महत्व देता हे। वह आत्मा की ओर सद्गुणो की अवहेलना करता है। वह सन्मान भी उसी का करता हे जिसके अधिकार मे सासारिक पदार्थों की प्रचुरता होती है।

तुम सम्पत्ति को अपनी ही मानकर दबा बेठोगे तो लोग तुमसे वह सम्पत्ति छीनने का प्रयत्न करेगे। अगर गेद की तरह सम्पत्ति का आदान–प्रदान करते रहोगे तो जैसे फैकी हुई गेद लौट कर फैकने वाले के पास आती है, उसी तरह दूसरे को देते रहने पर –त्याग करने पर–सम्पत्ति लौट–लौट कर तुम्हारे पास आएगी।

चिउटी, हाथी के बराबर नही चल सकती तो क्या चलना छोड बेठती है? अगर तुम दूसरे की बराबर प्रगति नही कर सकते तो हर्ज नही। अपनी शक्ति के अनुसार ही चलो, पर चलते चलो। एक दिन मजिल तय हो ही जाएगी।

बार–बार ठोकर खाकर तो मनुष्य को सावधान हो ही जाना चाहिए। ठोकरे खाने के बाद भी जो सावधान नही होता वह बडा मूर्ख हे।

मार्गशीर्ष कृष्णा 8

जिसका हृदय सत्य के अभेद्य कवच से अवगुठित हे मुह फाडे खडी मोत की विकरालता उसका क्या बिगाड सकती हे?

जहा परिग्रह हे, वहा आलस्य हे अकर्मण्यता हे। परिग्रही व्यक्ति दूसरो के श्रम से लाभ उठाने की ही घात मे रहता हे। इसीलिए वह आलसी और विलासी हो जाता हे।

पुण्य के फलस्वरूप सम्पत्ति प्राप्त होती हे। वह इस बात की परीक्षा के लिए हे कि इसके हृदय मे मोक्ष की चाह हे या नही? जिसे मोक्ष की कामना होगी वह प्राप्त सम्पत्ति को भी त्याग देगा।

(आनन्द श्रावक के समान) हे कोई ऐसा धर्मात्मा गृहस्थ जो वस्तु की लागत आर दुकान का खर्च लेकर ही शुद्ध समाजसेवा की भावना से

व्यापार करता हो? ऐसा गृहस्थ लोक मे आदरणीय होगा और वह जिस धर्म का अनुयायी होगा उसकी पशसा भी कराएगा।

मार्गशीर्ष कृष्णा 9

मनुष्य अपने हृदय मे बुरे विचारो और दुष्कर्मो की आधी लाकर आत्मा को चारो ओर से धूल से आच्छादित न कर ले तो आत्मा उसे सर्वदा सत्य–मार्ग ही दिखलाएगा।

परिग्रह समस्त दु खो का कारण है। वह परिग्रहवान् को भी दु ख मे डालता है और दूसरो को भी। परिग्रह से व्यक्तित्व की भी हानि होती है ओर समाज की भी। यह आध्यात्मिक हानि का भी कारण है और शारीरिक हानि का भी।

सम्पत्ति के लिए जीवन मत हारो। जीवन को सम्पत्ति के लिए मत समझो। सम्पत्ति पर जीवन निछावर मत करो। सम्पत्ति के लिए धर्म को धता मत बताओ। धन को बडा मत मानो धर्म को बडा समझो। दोनो मे से एक के जाने का अवसर आवे तो धर्म को मत जाने दो। धर्मरहित सम्पत्ति घोर विपत्ति है।

मार्गशीर्ष कृष्णा 10

जिन तोपो ओर मशीनगनो के नाम मात्र से लोग काप उठते हे, जिनकी गडगडाहट की भयकर ध्वनि से लोगो के रोगटे खडे हो जाते हें और गर्भवती स्त्रियो के गर्भ गिर जाते है, वही तोपो और मशीनगने सत्य का बल पाप्त करने वाले आत्मबली का एक रोम भी नही हिला सकती।

परिग्रहशील व्यक्ति धर्मकार्य नही कर सकता। जो जितना अधिक परिग्रही है वह धर्म से उतना ही दूर है। वह लोक–दिखावे के लिए भले ही धर्माचरण करे परतु उसमे पूर्ण धार्मिकता नही हो सकती।

जो सादगी से जितना दूर हे ओर फैशन को अपनाता हे वह उतना ही अधिक दूसरो को दुख मे डालता हे।

[illegible] आभूषण सुख और सिगार की सामग्री समझे जाते हे क्या उनके [illegible] नहीं होना पडता? क्या उनकी रक्षा क लिए चिन्तित नही [illegible] शरीर के लिए भार नही ह?

मार्गशीर्ष कृष्णा 11

ससार के समस्त पापकार्यो ओर समस्त अनर्थो के मूल मे परिग्रह की भावना ही दिखाई देती हे। इस प्रकार परिग्रह सव पापो का मूल ओर सव अनर्थो की खान हे।

सम्पत्ति कितनी ही अधिक क्यो न हो, मरने के समय तो त्यागनी ही पडेगी। जिसके पास ज्यादा सम्पत्ति हे उसे मरने के समय उतना ही ज्यादा दु ख होगा। तो फिर पहले से ही उसका त्याग क्यो न कर दिया जाय ताकि मृत्यु के समय और मृत्यु के बाद भी आनन्द रहे?

सम्पन्न लोग अपनी आवश्यकताए घटा दे, उतना ही अन्नवस्त्र आदि काम मे ले जितना अनिवार्य हे और ऐसी वस्तुओ का निरर्थक सग्रह न कर रखे तो दूसरो को इनके लिए कष्ट ही क्यो उठाना पडे?

वहुतेरे लोग वस्त्रो को भी सिगार का साधन समझ वेठे हैं। इस कारण वे अधिक ओर मूल्यवान् वस्त्र पहनते हें ओर उनका सग्रह कर रखते हें। जवकि वहुत से लोग नगे वदन कडाके की सर्दी मे ठिठुरते–ठिठुरते प्राण दे देते हें।

मार्गशीर्ष कृष्णा 12

भोजन के साथ मन वाणी ओर स्वभाव का पूर्ण सवध हे। जो जेसा भोजन करता हे उसके मन वाणी ओर स्वभाव मे वेसा ही सद्गुण या दुर्गुण आ जाता हे। कहावत हे–'जेसा आहार वेसा विचार उच्चार ओर व्यवहार। इस प्रकार आहार के विपय मे सयम रखना आवश्यक हे ओर ऐसे आहार से वचते रहना भी आवश्यक हे जो विकृतिजनक हो जिसके लिये महान् पाप हुआ या होता हे ओर जो लोक म निन्द्य माना जाता हे।

एक ओर कुछ लोग राजसी सुख–सामग्री भोगते हें ओर दूसरी ओर वहुत स लाग अन्न के विना त्राहि–त्राहि करते ह। इस प्रकार ससार मे वडी विपमना फली हुई ह ओर डस विपमता का कारण हे–कुछ लोगो का अपनी अ वश्यञ्कताए अत्यधिक वढा लेना।

जा ला [illegible] जीवन के लिय अनावश्यक अन्न–वस्त्र आदि क न मिलने [illegible] स कष्ट पा रह हैं उनक लिय वही उत्तरदायी ह जा [illegible]

ऐसी चीजो का दुरुपयोग करते है, अधिक उपयोग करते हे, या सग्रह कर रखते हे।

मार्गशीर्ष कृष्णा 13

जब कोई मनुष्य सत्य से विरुद्ध कार्य करना चाहता है तो उसकी आत्मा भीतर ही भीतर सकेत करती है कि यह कार्य बुरा है, यह कार्य करना उचित और कल्याणकर नही है। भले ही पाप–पुज से आच्छादित हृदय तक आत्मा की यह शब्दहीन पुकार न पहुचे, परन्तु कैसा भी घोर पापी मनुष्य क्यो न हो उसे इस मधुर सन्देश का आभास मिल ही जाता है।

परपदार्थो का सयोग होने से पहले आत्मा को जो शाति और स्वतत्रता प्राप्त रहती है, पदार्थो का सयोग होने पर वह चली जाती है। फिर भी कितने अचरज की बात है कि लोग शान्ति और स्वतत्रता पाने के लिए अधिक से अधिक वस्तुए जुटाने मे ही जुटे रहते है।

परिग्रह को दु ख तथा बन्धन का कारण मानकर इच्छा–परिमाण का व्रत स्वीकार करने वाला विस्तीर्ण मर्यादा नही रखता, सकुचित मर्यादा रखता है, क्योकि उसका ध्येय परिग्रह को सर्वथा त्यागना है।

मार्गशीर्ष कृष्णा 14

जो त्रिकाल मे शाश्वत है, जिसे आत्मा निष्पक्ष भाव से अपनावे, जिसके पूर्ण रूप से हृदय मे स्थित हो जाने पर भय, ग्लानि, अहकार, मोह, दभ ईर्षा द्वेष काम क्रोध लोभ आदि कुत्सित भाव निश्शेष हो जावे, जिसके प्राप्त होने पर आत्मा को वास्तविक शान्ति प्राप्त हो, वह सत्य हे।

मनुष्य कुसग मे पडकर बुरी बाते अपने हृदय मे न भर ले ओर जन्म से ही सत्य के वातावरण मे पले तो सम्भवत वह असत्याचरण का विचार भी न करे। यदि बालक के सामने सत्य का ही आचरण किया जाय ओर सत्य का उपदेश न भी दिया जाय तो वह सत्य का ही अनुगामी बनेगा।

जो जितना परिग्रही हे वह उतना ही निर्दय ओर कठोरहृदय हे। जो [illegible] और उदार नहीं है वह दूसरो को दुखी देखकर भी अपने पास [illegible] रख सकता है? कोई दुखी है तो रहे परिग्रही तो यही [illegible] न हो।

मार्गशीर्ष कृष्णा 30

सत्य विचार, सत्यभाषण ओर सत्य व्यवहार करने वाला मनुष्य ही उत्कृष्ट सिद्धि प्राप्त कर सकता है। जिस मनुष्य मे सत्य नही हे समझना चाहिए कि उसकी देह निर्जीव काष्ठ–पाषाण की तरह धर्म के लिए अनुपयोगी हे।

असत्याचरण से मनुष्य को प्रकट मे चाहे कुछ लाभ दिखाई देता हो, परन्तु वह क्षणिक और अस्थायी है। इस की ओट मे ऐसी हानिया छिपी रहती है जो उस समय दिखाई नही देती।

क्या सचमुच ही शरीर आत्मा का हे? ऐसा है तो आत्मा की इच्छा के विरुद्ध शरीर मे रोग और बुढापा क्यो आता है?

जिस शरीर को आत्मा अपना मानता है, उसी शरीर मे रहने वाले कीटाणु भी अपना मानते है! वास्तव मे वह किसका है?

मार्गशीर्ष शुक्ला 1

लोभ के वश होकर सत्य–असत्य का विचार न करना जाली दस्तावेज बनाना ओर गरीबो का गला काटना ही लोगो ने व्यापार समझ लिया हे। वे यह नही सोचते कि इस तरह द्रव्योपार्जन करने वाले कितने आनन्द उडा सकते हे? ओर भविष्य मे उसका क्या परिणाम होगा?

ज्ञान ससारबन्धन मे मुक्त करने वाला हे, लेकिन जब उसके कारण किचित् भी अभिमान हो उठता हे तो वह भी परिग्रह बन जाता हे ओर अधोगति का कारण होता हे।

नाभि मे सुगन्ध देने वाली कस्तूरी होने पर जेसे मृग घास–फूस को सूघ–सूघ कर उसमे सुगन्ध खोजता–फिरता हे, उसी प्रकार आत्मा अपने भीतर के सुख को भूलकर दृश्यमान वाह्य जगत् मे सुख की खोज करता–फिरता हे।

जीव ओर पुद्गल मे साम्य नही हे फिर भी अज्ञानी जीव पुद्गलो मे स्नेह करता ह उन्हे स्वमय मानता हे ओर ऐसा ही व्यवहार करता हे। इसी कारण आत्मा अपने को भूल कर जड–सा वन गया हे।

मार्गशीर्ष शुक्ला 2

झूठ सब पापो से बढकर पाप हे और सत्य सब धर्मो से बढकर धर्म हे। अन्य पाप विशेषत सत्य को न समझने के कारण होते है।

आत्मबल किसी भी बल से कम नही है बल्कि इस बल के सामने भौतिक बल तुच्छ हेय और नगण्य है।

आत्मा बुद्धि पर शासन नही कर सकता, इसलिए बुद्धि से उसे अच्छी सम्मति नही मिलती वरन् मन की इच्छा के अनुसार उसे सम्मति मिलती है। मन इन्दियानुगामी हो जाता है अत वह इन्द्रियो की रुचि के अनुसार इच्छा करता है। इस प्रकार इन्द्रिय, मन और बुद्धि के अधीन होकर आत्मा विषयो मे ही सुख मानने लगता है।

ससार मे ऐसा एक भी व्यक्ति मिलना कठिन है जिसकी इच्छा इच्छानुसार पदार्थ मिलने से नष्ट हो गई हो। पदार्थो का मिलना तो इच्छा–वृद्धि का कारण है, ठीक उसी प्रकार जैसे ईंधन आग बढाने का कारण।

मार्गशीर्ष शुक्ला 3

कितने ही लोगो ने भ्रान्त धारणा बना रखी हे कि झूठ का आसरा लिये बिना काम नही चल सकता। लेकिन सत्य बोलने की प्रतिज्ञा लेने वाला निर्विघ्न अपना व्यवहार चला सकता हे, और झूठ बोलने की प्रतिज्ञा लेने वाले को कुछ घटे व्यतीत करना कठिन हो जाएगा।

जो रखी हुई धरोहर को न दे और जो बिना रखे मागे, वह दोनो ही चोर के समान हे।

दोष की सत्यता पर विचार किये बिना ही किसी को दोषी प्रकट करना अत्यन्त अनुचित हे। कभी–कभी तो ऐसा करना घोर से घोर पाप बन जाता है।

आज अधिकाश लोग जीभ पर अकुश रखने का पयत्न शायद ही करते है। इसी कारण किसी से दोष हुआ हो या न हुआ हो उस पर हठपूर्वक [illegible] किया जाता है।

तलवार का घाव अच्छा हो सकता हे लेकिन झूठे कलक का भयकर घाव उपाय करने पर भी कठिनाई से ही भर सकता हे।

मार्गशीर्ष शुक्ला 4

सत्याग्रह के वल की तुलना ओर कोई वल नही कर सकता। इस वल के सामने मनुष्यशक्ति तो क्या देवशक्ति भी हार मान जाती हे।

अत्याचार के द्वारा एक वार अत्याचार मिटा हुआ मालूम होता हे, लेकिन वह निर्मूल नही होता। वह समय पाकर भयकर रूप से ज्वालामुखी की तरह फट पडता हे ओर उसकी लपटे प्रतिपक्षी का विनाश करने के लिए पहले की अपेक्षा भी अधिक उग्रता से लपलपाने लगती हें।

सत्पुरुष के प्रभाव से अग्नि शीतल हो जाती हे, विष अमृत बन जाता है और अस्त्र–शस्त्र फूल से कोमल हो जाते हें। जब इतना हो जाता हे तो क्रूर प्राणियो की क्रूरता दूर होने मे सन्देह ही क्या है?

प्राणो पर घोर सकट आ पडने पर भी आत्मबली धेर्य से विचलित नही होता ओर प्रसन्नतापूर्वक अपने प्राण त्याग देता हे।

मार्गशीर्ष शुक्ला 5

जन्म–मरण करते–करते आत्मा ने अनन्त काल व्यतीत किया हे, फिर भी उसे शान्ति नही मिली। वास्तव मे जब तक आत्मा चचलता मे हे, स्थिरता नही आई है तव तक आत्मशान्ति नही मिल सकती।

यह शरीर तो एक दिन छूटने को ही है। सभी को मरना हे, परन्तु वृक्ष उखड जाने पर पक्षी के समान ऊर्ध्वगति करना ठीक हे या बन्दर के समान पतित होना ठीक हे?

सुन्दर महल मे रहने पर भी ओर मिष्ट भोजन करने पर भी मन व्याकुल हुआ तो दु ख उत्पन्न होता हे। इसके विपरीत घास की झौपडी मे रहते हुए भी ओर रूखा–सूखा भोजन करने पर भी मन निराकुल हुआ तो सुख उत्पन्न होता हे।

यो तो तुम गाय को नही मारोगे परन्तु तुम्हारे सामने गाय के चमडे के वने सुन्दर ओर मुलायम वूट रखे जाए अथवा गाय की चर्वी वाले कपडे तुम्हे दिये जाए तो उनका उपयोग तो नही करोगे?

ो इससे आपकी कृपणता ही प्रकट होती है।

जिसका मन रजोगुण और तमोगुण से अतीत हो जाए [illegible]
ो जाय समझना चाहिए कि वह सच्चा तपस्वी है और उसका मन [illegible]
। ऐसे तपस्वी का मन फलता है।

अगर हम आलसी होकर बैठ रहेंगे तो आत्मविकास कैसे कर सकेंगे? साथ ही एक दम छलांग मार कर ऊपर चढ़ने का प्रयत्न करेंगे तो नीचे गिरने का भय हे। अतएव मध्यम मार्ग का अवलम्बन करके क्रमपूर्वक आत्मविकास करना ही श्रेयस्कर हे।

मार्गशीर्ष शुक्ला 7

तुच्छ चीजो के लिए मन का प्रयोग करके आत्मा परमात्मा को भूल रहा है। मन परमात्मा मे एकाग्र हो जाएगा तो तुच्छ वस्तुओ की क्या कमी रह जाएगी?

जो भूतकाल का खयाल नही करता ओर भविष्य का ध्यान नही रखता सिर्फ वर्तमान मे सुख मे ही डूब रहता है, वह चक्कर मे पड जाता हे।

धन तुम्हारे लिए हे या तुम धन के लिए हो? अगर तुम समझ गये हो कि धन तुम्हारे लिए हे तो तुम धन के गुलाम केसे बन सकते हो?

तप करने वाले की वाणी पवित्र ओर प्रिय होती है। जो प्रिय, पथ्य और सत्य बोलता हे, उसी का तप वास्तव मे तप है। असत्य या कटुक वाणी कहने का तपस्वी को अधिकार नही हे। तपस्वी अपनी अमृतमय वाणी द्वारा भयभीत को निर्भय बना देता है।

मार्गशीर्ष शुक्ला 8

दया श्रेष्ठ हे पर ज्ञान के विना उसका पालन नही हो सकता। वही दया श्रेष्ठ है जो ज्ञानपूर्वक की जाती हे। इसी प्रकार ज्ञान भी वही श्रेष्ठ हे जिससे दया का आविर्भाव होता हो। ज्ञान ओर दया का सबध वृक्ष ओर उसके फल के सबध के समान है। ज्ञान वृक्ष हे तो दया उसका फल हे, ज्ञानरहित दया और दयारहित ज्ञान सार्थक नही है।

जैसे काल का अन्त नही हे वेसे ही आत्मा का भी अत नही हे। यह बात जानते हुए भी दो दिन टिकने वाली चीज के लिए प्रयत्न करना ओर अनन्त काल तक रहने वाले आत्मा के लिए कुछ भी प्रयत्न न करना कितनी गम्भीर भूल है?

ससार का प्रत्येक पदार्थ, जो एक प्रकार से कल्याणकारी माना जाता है, दूसरे प्रकार से अकल्याणकारी साबित होता है। मगर धर्मदेशना ऐसी वस्तु है जो एकान्तत कल्याणकारिणी हे।

मार्गशीर्ष शुक्ला 9

चित्त तो चचल हे, चचल था और चचल रहेगा परन्तु योग की क्रिया द्वारा चचल चित्त भी स्थिर किया जा सकता है। अगर उसे पूरी तरह स्थिर न कर सको तो कम से कम इतना अवश्य करो कि चित्त को बुरी बातो की ओर मत जाने दो।

बालक कुसगति मे जाता हो तो उसे रोकना पडता हे। इसी प्रकार यह मन खराब सगति मे न चला जाय, इस बात की खूब सावधानी रखनी चाहिए।

घर का कचरा साफ करने वाली स्त्री यह नही सोचती कि में किसी पर ऐहसान या उपकार कर रही हू। इसी प्रकार साधु को भी धर्मकथा करके ऐहसान नही करना चाहिए, न अभिमान ही करना चाहिए। साधु को निर्जरा के निमित्त ही सब कार्य करना चाहिए।

आत्मकल्याण के लिए आध्यात्मिक ज्ञान की आवश्यकता हे। तुम अपने बालको को शान्ति पहुचाना चाहते हो तो उन्हे आध्यात्मिक ज्ञान देना उचित हे।

मार्गशीर्ष शुक्ला 10

परमात्मा का स्मरण करने के लिए किसी [illegible] आवश्यकता नही है। इसका अभ्यास तो स्वाभाविकता [illegible] जब परमात्मा के स्मरण का अभ्यास स्वाभाविकता [illegible] अभ्यास की तरह स्वाभाविक बन जाय तो समझना चाहिए कि परमात्मा का भजन स्वाभाविक रूप से हो रहा है।

परमात्मा का नाम न लेने पर भी परमात्मा का स्मरण करने के अनेक उपायो मे से एक उपाय है—प्रामाणिकतापूर्वक अपने कर्तव्य का [illegible] करना।

कोई पुरुष चाहे जैसा हो कोई स्त्री कैसी भी हो उसकी निन्दा करने से हमे क्या लाभ होगा? हम यही क्यो न देखे कि हम कैसे है? [illegible] के दोष न देखकर अपने ही दोषो को दूर करने मे भलाई है।

अगर तुम्हारा कोई पडोसी दुखी है तो इसमे तुम्हारा भी दोष है।

मार्गशीर्ष शुक्ला 11

जान–बूझ कर बुरे काम करने वाले के हृदय की आख खुली है यह केसे कहा जा सकता हे? वह तो देखते हुए भी अधा हे। हा जो हृदय की आख खुली रखकर सत्कार्य मे प्रवृत्ति करता हे वह शिव अर्थात् कल्याणकारी बन जाता हे।

ससार मे परिवर्तन न हो तो उसका अस्तित्व ही न रहे। बालक जन्म लेने के बाद यदि बालक ही बना रहे उसकी उम्र मे तनिक भी परिवर्तन न हो तो जीवन की मर्यादा केसे कायम रह सकती हे?

सदेव विवेक–बुद्धि से काम लेने वाले के लिए उपदेश की आवश्यकता ही नही रहती। उसका विवेक ही उसके लिए बडा उपदेशक हे।

अनादि काल से आत्मा कर्मो के साथ ओर कर्म आत्मा के साथ बद्ध हे फिर भी प्रयोग द्वारा जेसे दूध मे से घी अलग किया जा सकता हे उसी प्रकार पुरुषार्थ द्वारा आत्मा ओर कर्मो का भी पृथक्करण हो सकता हे।

मार्गशीर्ष शुक्ला 12

जितनी अधिक सादगी होगी, पाप उतना ही कम होगा। सादगी मे ही शील का वास हे। विलासिता वढाने वाली सामग्री महापाप का कारण हे। वह विलासी को भी भ्रष्ट करती हे ओर दूसरो को भी।

आपके घर मे विधवा वहिने शीलदेविया हे, उनका आदर करो, उन्हे पूज्य मानो, उन्हे दुखदायी शब्द मत कहो। वह देविया पवित्र हैं, पावन हैं, मगलरूप हैं। उनके शकुन अच्छे हें। शील की मूर्ति क्या कभी अमगलमयी हो सकती है?

समाज की मूर्खता ने कुशीलवती को मगलमयी ओर शीलवती को अमगला मान लिया हे। यह केसी भ्रष्ट बुद्धि हे?

सम्पूर्ण श्रद्धा से कार्य मे सफलता मिल जाती है ओर अविश्वासी को सफलता इसलिए नही मिलती कि उसका चित्त डावाडोल रहता हे। उसके चित्त की अस्थिरता ही उसकी सफलता मे वाधक हे।

मार्गशीर्ष शुक्ला 13

वह प्रजा नपुसक है, जो अन्याय को चुपचाप सहन कर लेती हे ओर उसके विरुद्ध चू तक नहीं करती। ऐसी प्रजा अपना ही नाश नही करती परन्तु उस राजा के नाश का भी कारण बन जाती हे जिसकी वह प्रजा हे।

जो मनुष्य अपना दोष स्वीकार कर लेता हे उसकी आत्मा वहुत ऊची चढ जाती हे।

जो धर्म की रक्षा करना चाहता हे उसे वीर बनना पडेगा। वीरता के विना धर्म की रक्षा नही हो सकती।

जव तक गरीव आपको प्यारे नही लगेगे तब तक आप ईश्वर को प्यारे नही लगेगे।

मतान्ध होना मूर्खता का लक्षण हे। विवेक के साथ विचार करने मे ही मानवीय मस्तिष्क की शोभा हे।

मार्गशीर्ष शुक्ला 14

सग्रहशीलता ने समाज मे वेषम्य का विष पेदा कर दिया हे ओर वेपम्य ने समाज की शान्ति का सर्वनाश कर दिया हे।

अगर सच्चे कल्याण की चाहना है तो सब वस्तुओ पर से ममत्व हटा लो। 'यह मेरा है' इस बुद्धि से ही पाप की उत्पत्ति होती है। 'इद न मम' अर्थात यह मेरा नही है ऐसा कहकर अपने सर्वस्व का यज्ञ कर देने से अहकार का विलय हो जायेगा और आत्मा मे अपूर्व आभा का उदय होगा।

अगर साप और सिह को अपनी सफाई पेश करने की योग्यता मिली होती तो वे निडर होकर तेजस्वी भाषा मे कह सकते थे–'मनुष्यो! हम जितने क्रूर नही, उतने क्रूर तुम हो। तुम्हारी क्रूरता के आगे हमारी क्रूरता किसी गिनती मे ही नही है।

माता अपने बालक के लिए खाद्य–सामग्री सचित कर रखती है और समय पर उसे खिलाकर प्रसन्न होती है। वैश्य का सग्रह भी ऐसा ही होना चाहिए। देश की प्रजा उसके लिए बालक के समान है।

मार्गशीर्ष शुक्ला 15

किसी भी दूसरे की शक्ति पर निर्भर मत बनो। समझ लो, तुम्हारी एक मुट्ठी मे स्वर्ग है, दूसरी मे नरक है। तुम्हारी एक भुजा मे अनन्त ससार है और दूसरी मे अनन्त मगलमयी मुक्ति है। तुम्हारी एक दृष्टि मे घोर पाप है और दूसरी दृष्टि मे पुण्य का अक्षय भडार भरा है। तुम निसर्ग की समस्त शक्तियो के स्वामी हो, कोई भी शक्ति तुम्हारी स्वामिनी नही है। तुम भाग्य के खिलौना नही हो वरन् भाग्य के निर्माता हो। आज का तुम्हारा पुरुषार्थ कल भाग्य बनकर दास की भाति सहायक होगा।

इसलिए हे मानव! कायरता छोड दे, अपने ऊपर भरोसा रख। तू सब कुछ है, दूसरा कुछ नही है। तेरी क्षमता अगाध है। तेरी शक्ति असीम है। तू समर्थ हे। तू विधाता है। तू ब्रह्मा है। तू शकर है। तू महावीर है। तू बुद्ध है।

पौष कृष्णा 1

जिस शिक्षा की बदौलत गरीबो के प्रति स्नेह, सहानुभूति और करुणा का भाव जागृत होता है जिससे देश का कल्याण होता हे, और विश्वबन्धुता की दिव्य ज्योति अन्त करण मे जाग उठती है वही सच्ची शिक्षा है।

स्त्री, पुरुष का आधा अग हे। क्या सम्भव हे कि किसी का आधा अग बलिष्ठ ओर आधा अग निर्बल हो? जिसका आधा अग निर्बल होगा उसका पूरा अग निर्बल होगा।

स्त्रिया जग–जननी का अवतार हैं। इन्ही की कूख से महावीर बुद्ध राम, कृष्ण आदि उत्पन्न हुए हे। पुरुष समाज पर स्त्री समाज का वडा उपकार है। उस उपकार को भूल जाना घोर कृतघ्नता है।

भवितव्यता का सिद्धान्त आप मे पोच ही नहीं हे वरन् वह मानव–समाज की उद्योगशीलता मे बडा रोडा है और लोगो को निकम्मा एव आलसी बनाने वाला है।

पौष कृष्णा 2

अहिसा कायर बनाती है या कायरो का शस्त्र है, यह बात वही कह सकता है जिसने अहिसा का स्वरूप और सामर्थ्य नही समझ पाया है। अहिसा का व्रत वीरशिरोमणि ही धारण कर सकते है। जो कायर है वह अहिसा को लजावेगा–वह अहिसक बन नही सकता। कायर अपने को अहिसक कहे तो कौन उसकी जीभ पकड सकता हे? पर वास्तव मे वह सच्चा अहिसक नही है। यो तो अहिसावादी एक चिउटी के भी व्यर्थ प्राण–हरण करने मे थर्रा उठेगा, क्योकि वह सकल्पजा हिसा है। पर जब नीति या धर्म खतरे मे होगा, न्याय का तकाजा होगा और सग्राम मे कूदना अनिवार्य हो जायेगा तब वह हजारो मनुष्यो के सिर उतार लेने से भी न चूकेगा।

कायरता से तामसी अहिसा उत्पन्न होती हे। अपनी स्त्री पर अत्याचार होते देखकर जो क्षति पहुचने या अपने मर जाने के डर से चुप्पी साध कर बैठ जाता है, अन्याय और अत्याचार का प्रतिकार नही करता, लोगो के टोकने पर जो अपने को दयालु प्रकट करता है, ऐसा नपुसक तामसी अहिसा वाला है। वह निकृष्ट अहिसा है। इस अहिसा की आड लेने वाला व्यक्ति ससार के लिए भार है।

पौष कृष्णा 3

जब मनुष्य मदिरा की तरह असत्य का सेवन आरम्भ करता है, तब सोचता है कि मे इस पर कब्जा रखूगा। लेकिन कुछ ही दिनो मे असत्य उसके जीवन का मूलमन्त्र बन जाता है।

जीवित रहना अच्छा है मगर धर्म के साथ। कदाचित् धर्म जाने की स्थिति उत्पन्न हो जाए तो उससे पहले जीवन का समाप्त हो जाना ही श्रेष्ठ है।

सत्य–मार्ग पर चलना तलवार की धार पर चलने के समान कठिन भी है और फूलो की सेज पर सोने के समान सरल भी है।

पतिव्रता स्त्री के नेत्रो मे वह शक्ति होती है कि वह जिस को पुत्र की तरह प्रेम की दृढ दृष्टि से देख ले तो उसका शरीर वज्रमय हो जाय और यदि क्रोध की दृष्टि से देखले तो भस्म हो जाय।

पौष कृष्णा 4

यो तो ससार असार कहलाता है पर ज्ञानी पुरुष इस असार ससार मे से भी सम्यक् सार खोज निकालते है। ससार मे किचित् भी सार न होता तो जीव मोक्ष कैसे प्राप्त कर पाते? अज्ञान का नाश होने पर ससार मे से सार निकाला जा सकता है।

तुमने दूसरे अनेक रसो का आस्वादन किया होगा, एक बार शास्त्रो के रस को भी तो चख देखो। शास्त्र का रस चखने के बाद तुम्हे ससार के सभी रस फीके जान पडेगे।

एक ओर से मन को अप्रशस्त मे जाने से रोको और दूसरी ओर उसे परमात्मा के ध्यान मे पिरोते जाओ। ऐसा करने पर मन वश मे किया जा सकेगा।

तुम्हारी जो वाणी दूसरे के हृदय को चोट पहुचाती है, वह चाहे वास्तविक हो, फिर भी सत्य नही है। उसकी गणना असत्य मे ही की गई है।

पौष कृष्णा 5

तलवार की शक्ति राक्षसो के लिए काम मे आती है। दैवी प्रकृति वाली प्रजा मे प्रेम ही अपूर्व प्रभाव डाल देता हे।

लक्ष्मी प्राप्त करके ऋद्धि सम्पत्ति ओर अधिकार पा करके भी जो दिव्य ज्ञान रूपी तृतीय नेत्र प्राप्त कर शिव–रूप न वना उसकी लक्ष्मी

बिल्कुल व्यर्थ हे, उसका अधिकार धिक्कार योग्य हे ओर उसकी समस्त ऋद्धि–सम्पत्ति उसी का नाश करने वाली हे।

अगर आपके पास धन हे तो उसे परोपकार मे लगाओ। धन आपके साथ जाने वाला नही हे। धन के मोह मे मत पडो।

धर्म की नीव नीति हे। नीति के बिना धर्म की प्रतिष्ठा नही हो सकती। नीति को भग करने वाला धर्म को नही दिपा सकता।

सुन्दर से सुन्दर विचार भी जीवन मे परिणत किये बिना लाभदायक नही हो सकता।

पौष कृष्णा 6

अर्थ को ही अपने जीवन की क्षुद्र सीमा मत बनाओ। अर्थ के घेरे से बाहर निकलो ओर देखो, तुम्हारा इतिहास कितना उज्ज्वल हे, कितना तेजस्वी हे, कितना वीरतापूर्ण हे!

जिस 'जेनधर्म' के नाम मे ही विजय का सगीत सुनाई दे रहा हे, जिसका आराध्य सिह से अकित 'महावीर' हे जिसका धर्म विजयिनी शक्ति का स्रोत हे, उसे कायरता शोभा नही देती। उसे वीर होना चाहिये।

मनुष्य की प्रतिष्ठा उसके सद्‌गुणो पर ही अवलबित रहनी चाहिये। धन से प्रतिष्ठा का दिखावा करना मानवीय सद्‌गुणो के दिवालियापन की घोषणा करने के समान हे।

जिसके मुखमण्डल पर ब्रह्मचर्य का तेज विराजमान होगा उसके सामने आभूषणो की आभा फीकी पड जायेगी। चेहरे की सौम्यता बलात् उसके प्रति आदर का भाव उत्पन्न किये बिना न रहेगी।

पौष कृष्णा 7

ससार के विभिन्न पथ या सम्प्रदाय सत्य को प्राप्त करने का प्रयत्न करते हें, परन्तु ज्ञान की अपूर्णता के कारण अखण्ड सत्य को न पाकर सत्य का एक अग ही उन्हे उपलब्ध होता हे। सत्य के एक अग को ही सम्पूर्ण सत्य मान लेने से धार्मिक विवाद खडा हो जाता हे।

सभी धर्म वाले अपनी–अपनी धुन मे मस्त हें। वह एक दूसरे को झूठा ठहराते हें इसी कारण वे स्वय झूठे ठहरते हें। सब इकट्ठे होकर

स्वरूप मालूम हो सकता है।

स्याद्वाद ऐसी मशीन है जिसमे सत्य के खण्ड–खण्ड मिलाकर अखण्ड अर्थात् परिपूर्ण सत्य ढाला जाता है। स्याद्वाद का सम्यक् प्रकार से उपयोग किया जाय तो मिथ्या प्रतीत होने वाला दृष्टिकोण भी सत्य प्रतीत होने लगता है। जगत् के धार्मिक और दार्शनिक दुराग्रहो को समाप्त करने के लिए स्याद्वाद के समान और कोई उपाय नही है।

पौष कृष्णा 8

जो आत्माराम मे रमण करता है, जिसे सच्चिदानन्द पर परिपूर्ण श्रद्धाभाव उत्पन्न हो चुका है, वह मरने से नही डरता, क्योकि वह समझता है–मेरी मृत्यु असम्भव है। मै वह हू, जहा किसी भी भौतिक शक्ति का प्रवेश नही हो सकता।

जिस मनुष्य का आत्मविश्वास प्रगाढ हो जाता है, उसके लिए ऐसा कोई काम नही रहता, जिसे वह कर न सकता हो। लाखो–करोडो रुपया खर्च करने पर भी जो काम बखूबी नही होता, उसे आत्मबली बात की बात मे कर डालता है। आत्मबलशाली के सामने समस्त शक्तिया हाथ जोडे खडी रहती है।

जैसे आप जाल मे फसने वाली मछलियो पर करुणा करते हैं उसी प्रकार ज्ञानी जन सारे ससार पर करुणा करते है। वह कहते है–ऐ मनुष्यो! कुछ आत्मकल्याण का काम करो। खाने–पीने पर अकुश रखो। दूसरो को आनन्द पहुचाओ। ऐसा करने से तुम्हारा मनोरथ जल्दी पूरा होगा।

भोजन करने वाले को थोडा–बहुत भजन भी करना चाहिए।

पौष कृष्णा 9

अज्ञानी पुरुष को जिन पदार्थो के वियोग से मर्मवेधी पीडा पहुचती है ज्ञानी जन को उनका वियोग साधारण–सी घटना प्रतीत होती है। ज्ञानवान् पुरूष सयोग को वियोग का पूर्वरूप मानता है। वह सयोग के समय हर्ष–विभोर नही होता और वियोग के समय विषाद से मलिन नही होता। दोनो अवस्थाओ मे वह मध्यस्थभाव रखता है। सुख की कुजी उसे हाथ लग गई है इस लिए दु ख उससे दूर ही दूर रहते है।

चाहिए के चगुल म फसकर मनुष्य वेतहाशा भागदोड लगा रहा हे। कभी किसी क्षण शान्ति नही, सतोप नही निराकुलता नही। भला इस दोड–धूप मे सुख कैसे मिल सकता हे?

अपनी परछाई के पीछे कोई कितना ही दोडे, वह आगे–आगे दोडती रहेगी, पकड मे नही आ सकेगी। इसी प्रकार तृष्णा की पूर्ति के लिए कोई कितना ही उपाय करे, मगर वह पूरी नही होगी।

एक व्यक्ति जव तक अपने ही सुख को सुख मानता रहेगा जव तक उसमे दूसरे के दु ख को अपना दु ख मानने की सवेदना जागृत न होगी तव तक उसके जीवन का विकास नही हो सकता।

पौष कृष्णा 10

माया का मालिक होना ओर वात हे ओर गुलाम होना ओर बात हे। माया का गुलाम माया के लिये झूठ बोल सकता हे, कपटाचार कर सकता है, मगर माया का मालिक ऐसा नही करेगा। अगर न्याय–नीति के साथ माया रहे तो वह रखेगा, अगर वह अन्याय के साथ रहना चाहेगी तो उसे निकाल बाहर करेगा। यही बात अन्य सासारिक सुख–सामग्री के विषय मे समझ लेना चाहिए।

जड साइस के चकाचोंध मे पडकर साइस के निर्माता–आत्मा को नहीं भूल जाना चाहिए। अगर तुम साइस के प्रति जिज्ञासा रखते हो तो साइस के निर्माता के प्रति भी अधिक नहीं तो उतनी ही जिज्ञासा अवश्य रखो।

दृश्य को देखकर दृष्टा को भूल जाना वडी भारी भूल हे। क्या आप वतलाएगे कि आपकी उगली की हीरे की अगूठी अधिक मूल्यवान् हे या आप?

तुम्हे जितनी चिन्ता अपने गहनो की हे उतनी इन गहनो का आनन्द उठाने वाले आत्मा की हे? गहनो का जितना ध्यान हे, कम से कम उतना ध्यान आत्मा का रहता हे?

पौष कृष्णा 11

सीता को आग ने क्यो नही जलाया? क्या अग्नि ने पक्षपात किया था? उसे किसने सिखाया कि एक को जला ओर दूसरे को नही? शस्त्र का

काम काट डालना है पर उसने कामदेव श्रावक को क्यो नही काटा? शस्त्र क्या अपना स्वभाव भूल गया था? विष खाने से मनुष्य मर जाता है। मगर मीराबाई क्यो न मरी? क्या विष अपना कर्त्तव्य चूक गया था?

सत्य यह है कि कि आत्मबली के सामने अग्नि ठडी हो जाती है, शस्त्र निकम्मा हो जाता है और विष अमृत बन जाता है।

मत समझो कि आपकी और दूसरो की आत्मा मे कोई मौलिक अन्तर है। आत्मा मूल स्वभाव से सर्वत्र एक समान है। जो सच्चिदानन्द आपके घट मे है वही घट-घट मे व्याप रहा है। इसलिए समस्त प्राणियो को आत्मा के समान समझो। किसी के साथ वैरभाव न करो। किसी का गला मत काटो। किसी को धोखा मत दो। दगाबाजी से बाज आओ। अन्याय से बचो। परस्त्री को माता के रूप मे देखो।

पौष कृष्णा 12

तुम अपना जीवन सफल और तेजोमय बनाना चाहते हो तो गदी पुस्तको को कभी हाथ मत लगाना, अन्यथा वे तुम्हारा जीवन मिट्टी मे मिला देगी।

एक आदमी भरे समुद्र को लकडी के टुकडे से उलीच रहा था। किसी ने उससे कहा-'अरे पगले! समुद्र इस प्रकार खाली कैसे होगा?' तब उसने उत्तर दिया-भाई, तुम्हे पता नही है। इस समुद्र का अन्त है मगर इस आत्मा का अन्त नही है। कभी न कभी खाली हो ही जायेगा।

आधे मन से, ढिलमिल विचार से, किसी कार्य को आरभ मत करो। चचल चित्त से कुछ दिन काम किया और शीघ्र ही फल होता हुआ दिखाई न दिया तो छोड-छोडकर दूर हट गये, यह असफलता का मार्ग है। इससे किया-कराया काम भी मिट्टी मे मिल जाता है।

दर्पण आपके हाथ मे है। अपना-अपना मुह देखकर लगी हुई कालिख पोछ डालिए।

पौष कृष्णा 13

आगे-आगे कदम बढाते रहने से लम्बा रास्ता भी कभी न कभी तय हो जाता है। पीछे पैर धरने से जहा थे वही आ जाओगे। जो कदम आगे रख दिया है उसे पीछे मत हटाओ। तभी आप विजयी होओगे।

मुह से जेसी ध्वनि निकालोगे वेसी ही प्रतिध्वनि सुनने को मिलेगी। अगर कटुक शब्द नही सुनना चाहते हो अपने मुह से कटुक शब्द मत निकालो।

माता के स्तन का दूध पीना बालक का स्वभाव हे पर जो बालक स्तन का खून पीना चाहता हे वह केसा वालक! वह तो जहरीला कीडा हे।

प्रकृति गाय–भैस आदि से हमे दूध दिलाती हे, लेकिन मनुष्य की लोलुपता इतनी प्रचड है कि वह गाय–भैंस के दूध के बदले गाय–भेंस को ही पेट मे डाल लेता है!

जीवन मे धर्म तभी मूर्त्तरूप धारण करता हे जव अपने सुख का बलिदान करके दूसरो को सुख दिया जाता हे।

पौष कृष्णा 14

जो वक्ता अपने श्रोता का लिहाज करता हे, उसे सत्य तत्त्व का निदर्शन नही कराता, वरन् उसे प्रसन्न करने के लिए मीठी–मीठी, चिकनी–चुपडी बाते करता है, वह श्रोता का भयकर अपकार करता है और स्वय अपने कर्त्तव्य से च्युत होता है।

समस्त प्राणियो को आत्मा के तुल्य देखने पर तुम्हारा हृदय सुख–दु ख की साक्षी अपने आप देने लगेगा। फिर शास्त्रो को देखने की आवश्यकता नही रहेगी। सच्चिदानन्द स्वय ही शास्त्रो का सार बता देगा।

जो तुम्हारी आज्ञा शिरोधार्य नही करते वह सब पर–पदार्थ हैं। जब तक पर–पदार्थो के प्रति ममता का भाव विद्यमान हे, तब तक परमात्मा से मिलने का शोक ही उत्पन्न नही होता ओर जब तक परमात्मा से मिलने का शौक ही नही उत्पन्न हुआ तब तक उससे भेट कैसे हो सकती हे?

क्या ससार मे कोई पुद्‌गल ऐसा हे जो अब तक किसी के उपभोग मे न आया हो? वास्तव मे पुद्‌गलमात्र दुनिया की जूठन हे।

पौष कृष्णा 30

जिस अन्याय का प्रतिकार करने मे तुम असमर्थ हो कम से कम उसमे सहायक तो न वनो! अन्यास से अपने आपको पृथक् रखो।

आप भोजन करते हे पर क्या भोजन बनाना भी जानते हे? अगर नही जानते तो क्या आप पराधीन नही हे? छोटी–छोटी पराधीनताए भी जीवन को बहुत प्रभावित करती है।

दु ख से मुक्त होना चाहते हो तो अच्छी बात है। मगर यह देखना होगा कि दु ख आता कहा से है? दु ख का असली कारण क्या है? तृष्णा ही दु ख का मूल है।

ससार मे धर्म न होता तो कितना भयकर हत्याकाड मचा होता, यह कल्पना भी दु खदायक पतीत होती है। ससार–व्यापी निविड अन्धकार मे धर्म के प्रकाश की किरणो ही एकमात्र आशाजनक है।

पौष शुक्ला 1

कुभार जब मिट्टी लेकर घडा बनाने बैठता है तब वह मिट्टी मे से हाथी–घोडा निकलने की आशा नही रखता। जुलाहा सूत लेकर कपडा बनाता है तो उसमे से ताबा–पीतल निकलने की आशा नही रखता। किसान बडे परिश्रम से खेती करता है, मगर पौधो मे से हीरा–मोती निकलने की आकाक्षा नही करता। तो फिर धर्म का अनुष्ठान करने वाले लोग धर्म से पुत्र या धन की आशा क्यो रखते है? जो जिसका कारण ही नही, वह उसे कैसे पैदा करेगा?

जब धर्म पर श्रद्धा होगी तो ससार के समस्त पदार्थो पर अरुचि उत्पन्न हो जाएगी। साप को पकडने की इच्छा तभी तक हो सकती है, जब तक यह न मालूम हो कि इसमे विष है।

धर्म के नाम पर प्रकट किये जाने वाले भूतकालीन और वर्तमानकालीन अत्याचार वस्तुत धर्मभ्रम या धर्मान्धता के परिणाम हे। धर्म तो सदा सर्वतोभद्र है। जहा धर्म है वहा अन्याय और अत्याचार को अवकाश ही नही।

पौष शुक्ला 2

अन्त करण से उदभूत होने वाला करुणाभाव का शीतल स्रोत दूसरो का सताप मिटाता ही हे। भगवान् महावीर इसी करुणाभाव से प्रेरित होकर धर्मदेशना देने मे प्रवृत्त हुए थे।

धर्म ओर धर्मभ्रम मे आकाश–पाताल जितना अन्तर हे। गधा, सिह की चमडी लपेट देने पर भी सिह नही वन सकता। इसी प्रकार धर्मान्धता कभी धर्म नही हो सकती।

धर्म के अनुयायी कहलाने वाले लोग भी अपन धर्महीन व्यवहार के कारण धर्म की निन्दा कराते हैं। दृढतापूर्वक धर्म का पालन किया जाय तो धर्मनिन्दको पर भी उसका असर पडे विना नही रहेगा।

कदाचित् धर्मपालन करने मे कष्ट उठाने पडते हैं तो क्या हुआ? कष्ट धर्म की कसोटी हे। जिन्होने धर्म के लिए कष्ट उठाये हैं उनसे पूछो कि धर्म के विषय मे वह क्या कहते हे?

पौष शुक्ला 3

कामना करने से ही धर्म का फल मिलेगा अन्यथा नही,– ऐसा समझना भूल हे। बल्कि कामना करने से तो धर्म का फल तुच्छ हो जाता हे ओर कामना न करने से अनन्तगुणा फल मिलता हे।

धर्मरत्न को ओछी कीमत मे न वेचोगे तो फिर आपको किसी भी वस्तु की कमी नही रह जायेगी।

भगवान् की आज्ञा है कि सबको अपना मित्र समझो। अपने अपराध के लिए क्षमा मागो और दूसरो के अपराध को क्षमा कर दो। शत्रु हो या मित्र सब पर क्षमाभाव रखना महावीर भगवान् का महामार्ग हे।

धार्मिक अनुष्ठान का एकमात्र ध्येय आत्मशुद्धि ही होना चाहिये। स्वर्ग के सुखो के लिए प्रयत्न मत करो। स्वर्ग के सुखो के लालच मे फस गये तो मुक्ति से हाथ धो बैठोगे।

पौष शुक्ला 4

जिस वस्तु के विषय मे ज्ञानपूर्वक विचार करने की क्षमता न हो, उसकी ओर दृष्टि न देना ही उचित हे। ऐसा करते–करते मोह कम हो जायेगा।

वास्तव मे कोई मनुष्य ऐसा हो ही नही सकता, जिससे घृणा की जाय या जिसे छूने से छूत लगती हो। सभी प्राणियो की आत्मा सरीखी–परमात्मा के समान–हे ओर शरीर की बनावट के लिहाज से मनुष्य–मनुष्य मे कोई अन्तर नही हे। फिर अस्पृश्यता की कल्पना किस उचित आधार पर खडी हे यह समझ मे नही आता। इसका एकमात्र आधार जातिमद ही हो सकता हे जो हेय हे।

हे पथिक! तुझे परलोक जाना है इसलिए मेरे बतलाये सद्गुण धारण कर लेगा तो तेरा पथ सुगम हो जायेगा। सत्य, प्रामाणिकता, दया, नीति आदि सद्गुण धारण कर लेने से तेरा क्या बिगड जायेगा?

पौष शुक्ला 5

हे जगत् के जीवो! तुम दु ख चाहते हो या सुख की अभिलाषा करते हो? अगर सुख चाहते हो तो दु ख की ओर क्यो भागे जा रहे हो? लौटो, सवेग को साथ लेकर सुख की ओर बढो।

काम, क्रोध आदि कषाय कुत्ते के समान है। इन्हे पहले तो घर मे घुसने ही नही देना चाहिए, कदाचित् घुस पडे तो उसी समय बाहर निकाल देना चाहिए।

जिनका ममत्व गलकर प्राणिमात्र तक पहुच गया है, ससार के समस्त प्राणियो को जो आत्मवत् मानते हैं, जिन्होने 'एगे आया' अर्थात् आत्मा एक है इस सिद्धान्त को अपने जीवन मे घटाया है, उनके लिए सभी जीव अपने है–कोई पराया नही है। ऐसी दशा मे जैसे आप अपने बेटे की चिन्ता करते है, उसी प्रकार उदारभाव वाले ज्ञानी पुरुष प्रत्येक जीव की चिन्ता करते हैं।

पौष शुक्ला 6

तुम्हारे काले बाल सफेद हो गये है, सो तुम्हारी इच्छा से या अनिच्छा से? यह बाल तुम्हे चेतावनी दे रहे हैं कि जब तुम हमे ही अपने काबू मे नही रख सके तो और–और वस्तुओ पर क्या काबू रख सकोगे!

धर्म की नोका तैयार है। ससार के मोह मे न फसकर धर्म–नौका पर आरूढ हो जाओ तो तुम्हारा कल्याण होगा।

हे आत्मन! तू भगवान् की वाणी की उपेक्षा करके कहा भटक रहा है? तुझे ऐसा दुर्लभ योग मिल गया है तो फिर इसे क्यो गवा रहा है?

मै कहता हू और सभी विचारशील व्यक्ति कहते है कि सदाचार ही शिक्षा का प्राण है। सदाचारशून्य शिक्षा प्राणहीन है और उससे जगत् का कल्याण नही हो सकता। ऐसी शिक्षा से जगत का अकल्याण ही होगा। सदाचारहीन शिक्षा ससार के लिए अभिशाप बनेगी।

पौष शुक्ला 7

सच्चे शिक्षको की बदोलत ससार को श्रेष्ठ विभूतिया प्राप्त हो सकती हैं। ससार का उत्थान करने वाली महान् शक्तियो के जन्मदाता शिक्षक ही हे। शिक्षक मनुष्यशरीर के ढाचे मे मनुष्यता उत्पन्न करते हे। शिक्षक का पद जितना ऊचा हे, उसका कर्त्तव्य भी उतना ही महान् हे।

अगर तुम किसी वस्तु के प्रति ममत्व न रखो तो परिग्रह तुम्हारा दास बन जाएगा। ससार की वस्तुओ पर तुम भले ही ममता रखो मगर वह अपने स्वभाव के अनुसार तुम्हे छोडकर चलती बनेगी। ममत्व होने के कारण तब तुम्हे दु ख का अनुभव होगा। अतएव तुम पहले से ही उन वस्तुओ सबधी ममत्व का त्याग क्यो नही कर देते?

ससार की वस्तुए तुम्हे छोडे और तुम उन वस्तुओ को छोडो, इन दोनो मे कुछ अन्तर हे या नही? दोनो का अन्तर समझकर अपना कर्त्तव्य निर्धारित करो।

पौष शुक्ला 8

अगर आप सम्पत्ति मे हर्ष मानेगे तो कल विपत्ति मे विषाद भी आपको घेर लेगा। जो सम्पत्ति को सहज भाव से ग्रहण करता हे वह विपत्ति को भी उसी भाव से ग्रहण करने मे समर्थ होता हे। विपत्ति की व्यथा उसे छू नही सकती। ससार तो सुख–दु ख ओर सम्पत्ति–विपत्ति के सम्मिश्रण से ही है। मन मे हर्ष–शोक करना सच्चे ज्ञान का फल नही हे।

राज्य करना ओर राज्यसत्ता के बलपर सुधार करना साधारण मनुष्य का कार्य हे। ससार के उत्थान का महान् कार्य करने वाले महापुरुषो ने पहले प्राप्त राज्य को ठुकरा दिया था। तभी उन्हे अपने महान् उद्देश्य मे सफलता मिली।

आवरण मे लिपटी हुई शक्तियो को प्रकाश मे लाना शिक्षा का ध्येय हे। मगर शिक्षा की सफलता इस बात मे हे कि वह मनुष्य को ऐसे साचे मे ढाल दे कि वह अपनी शक्तियो का दुरुपयोग न करके सदुपयोग ही करे।

जो विद्या बेगार के रूप मे पढी ओर पढाई जाती हे वह गुलामी नही तो क्या स्वाधीनता सिखलाएगी?

पौष शुक्ला 9

एक ओर चवर–छत्र धारण किये कोई रानी हो और दूसरी ओर महतरानी हो तो दोनो मे से जनसाधारण के लिए उपयोगी कौन है? रानी के अभाव मे किसी का कोई काम नही रुकता मगर महतरानी के अभाव मे जीवन दूभर हो सकता है। इसी कारण तो वह महतरानी–बडी रानी–कहलाती है। अगर आप रानी को ही बडा समझते हैं तो कहना चाहिए कि आप वास्तविकता से दूर हट रहे है।

विचित्र न्याय है। गन्दगी फैलाने वाले आप अच्छे और ऊचे तथा गन्दगी मिटाने वाले(हरिजन) लोग बुरे और हीन। न्याययुक्त बुद्धि से उनके साथ अपने कर्त्तव्य की तुलना करके देखो तो आपकी आखे खुल जाएगी। यो तो मस्तक, मस्तक ही रहता है, हाथ, हाथ ही रहता है और पैर भी पैर ही रहता है, लेकिन मस्तक पैर की उपेक्षा नही करता, वरन् उसकी रक्षा करता है। जैसे इन सभी अगो का परस्पर सबध है वैसे ही चारो वर्णो का भी सबध है।

पौष शुक्ला 10

अब तो मेहतर अपना परम्परागत कार्य करते है, लेकिन कर्मभूमि के आरम्भ मे भगवान् ऋषभदेव ने जब उन्हे यह कार्य सोपा होगा तब क्या समझाकर सोपा होगा? और उन्होने क्या समझकर यह कार्य स्वीकार किया होगा? न जाने क्या उच्चतर आदर्श उनके सामने रहा होगा।

बच्चो की सार–सभाल करने वाली वृद्धा के प्रति घर का मालिक कहता है–'माताजी। यह सब आपका ही पुण्य–प्रताप है। आप ही सबकी सेवा करती है रक्षा करती हैं नही तो तीन ही दिन मे सबकी धज्जिया उड जाए। आपकी बदौलत ही हम आराम की जिन्दगी बिता रहे है।'

भगवान् ऋषभदेव ने इनके आदिपुरुषो को ऐसा ही तत्त्व न समझाया होगा? जिस प्रकार समाज मे सेवाभावी मनुष्य को बहुमान दिया जाता है, उसी प्रकार क्या भगवान् ने बहुमान देकर उन्हे यह काम न सौपा होगा? आजकल की तरह सफाई करने वाले लोग उस समय घृणा की दृष्टि से देखे गये होते तो कौन अपने को स्वेच्छापूर्वक घृणास्पद बनाता?

पौष शुक्ला 11

चारो वर्ण अपना--अपना कार्य करते हैं और सभी कार्य समाज के लिए उपयोगी हे। ऐसी स्थिति मे किसी को किसी के प्रति घृणाभाव रखने का क्या अधिकार हे?

चाहे चन्द्र से आग वरसने लगे ओर पृथ्वी उलट जाय किन्तु सत्पुरुष झूठ कदापि नही कह सकते।

जो आत्मा ओपाधिक मलिनता को एक ओर हटाकर अन्तर्दृष्टि होकर, अनन्यभाव से अपने विशुद्ध स्वरूप का अवलोकन करता हे ओर समस्त विभावो को आत्मा से भिन्न देखता है, उसे सोऽह के तत्त्व की प्रतीति होने लगती है। बहिरात्मा पुरुष की दृष्टि मे स्थूलता होती है, अतएव वह शरीर तक, इन्द्रियो तक या मन तक पहुचकर रह जाता हे, उसे इन शरीर आदि मे ही आत्मत्व का भान होता है, मगर अन्तरात्मा पुरुष अपनी पैनी नजर से, शरीर आदि से परे सूक्ष्म आत्मा को देखता है। आत्मा मे असीम तेजस्विता असीम बल, अनन्त ज्ञानशक्ति ओर अनन्त दर्शनशक्ति देखकर वह विस्मित–सा हो रहता है। उस समय उसके आनन्द का पार नही रहता।

पौष शुक्ला 12

जितना कर सकते हो, उतना ही कहो और जो कुछ कहते हो उसे पूर्ण करने की अपने ऊपर जिम्मेदारी समझो।

तुझे मानव शरीर मिला है, जो ससार का समस्त वेभव देने पर भी नही मिल सकता। सम्पूर्ण ससार की विभूति--एकत्र की जाय और उसके बदले यह स्थिति प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाय तो क्या ऐसा होना सम्भव है?

क्या यह भाग्यशालिनी जिह्वा तुझे परनिन्दा मिथ्याभाषण और उत्पात करने--कराने के लिए मिली है? अगर नही, तो क्या आशा की जाय कि तू झूठ नही बोलेगा?

जिस धर्मगुरु के चरणो मे अपना जीवन अर्पण करना चाहते हो, जिसे प्रकाशस्तम्भ मानकर नि शक आगे बढना चाहते हो जिसे भव–भव का मार्गप्रदर्शक बना रहे हो ओर जिसकी वाणी के अनुसार अपनी जीवन–साधना प्रारम्भ करना चाहते हो, उसकी परीक्षा करने की आवश्यकता नही समझते?

पौष शुक्ला 13

अगर तुम फेशन के फदे से बाहर नही निकल सकते तो कम से कम उनकी निन्दा तो मत करो जिन्होने फैशन का मोह छोडकर स्वेच्छापूर्वक सादगी धारण की है, जीवन को सयत बनाया है और विलासिता का त्याग किया है।

मै बार बार कहता हू कि सब अनर्थो का मूल विलासिता है।

अपने क्षुद्र प्रयत्न पर अहकार न करना। अहकार किया तो दु ख नही मिटेगा। जो कुछ करते हो उसे परमात्मा के पवित्रतम चरणो मे समर्पण कर दो और उसी से विनम्रभाव से, उज्ज्वल अन्त करण से, अपनी सम्पूर्ण श्रद्धा एकत्र करके दु ख दूर करने की प्रार्थना करो।

परमात्मा से उस मूलभूत दु ख के विनाश की प्रार्थना करना चाहिये जो और किसी के मिटाये नही मिट सकता और जिसके मिट जाने पर ससार की असीम सम्पदा भी किसी काम की नही रहती।

पौष शुक्ला 14

जब तुम परमात्मा से ससार की कोई वस्तु मागते हो तो समझो कि दु ख मागते हो।

आज अपूर्व अवसर है। कौन जानता है कि जीवन मे ऐसा धन्य दिवस कितनी बार आएगा या आएगा ही नही? इसलिए इसका सदुपयोग करके अन्त करण की मलिनता धो डालो। आत्मा को स्वच्छ स्फटिक के समान बना लो। ऐसा करने से आपका महान् कल्याण होगा। क्षमा का सुदृढ कवच धारण करके निर्भय बन जाओ।

वैर से ही वेर बढता है। आपके हृदय का वैर आपके शत्रु की वैराग्नि का ईधन है। जब उसे ईधन नही मिलेगा तो वह आग कब तक जलती रहेगी? आज नही तो कल अवश्य बुझ जाएगी।

आप धनवान् है तो क्या हुआ, गरीबो का आपके ऊपर ऋण है।

पौष शुक्ला 15

क्या गाठ काटे विना भरपेट भोजन नही मिल सकता? न्याय–नीति से आजीविका चलाने वाले क्या भूखो मरते हे? वेचारे बछडे को उसकी माता

का थोडा–सा दूध पी लेने दोगे तो क्या तुम्हारे वाल–बच्चे विना दूध ही रह जाएगे?

अगर सब जीवो को मित्र बनाने से काम नही चलेगा तो क्या सबको शत्रु बनाने से ससार का काम ठीक चलेगा? सबको शत्रु बनाने से ही ठीक काम चल सकता हो तो आप भी सबके शत्रु समझे जाएगे ओर ऐसी दशा मे ससार मे एक क्षण का भी जीवन कठिन हो जाएगा।

मनाने वाला हो तो मन क्या नही मान लेता? वह सभी कुछ समझ लेता है, समझाने वाला चाहिए। विवेक से कार्य करने वालो के लिए मन अबोध शिशु के समान है।

उत्साही पुरुष पर्याप्त साधनो के अभाव मे भी, अपने तीव्र उत्साह से कठिन से कठिन कार्य भी साध लेता है।

माघ कृष्णा 1

जिन गरीबो ने नाना कष्ट सहन करके आपको रईसी दी है ओर जिन पशुओ की बदौलत आप पल रहे है, उनके प्रति कृतज्ञ होकर प्रत्युपकार क्यो नही करते? साहूकार कहलाकर भी ऋण चुकाना आपको अभीष्ट नही है?

विवाह का उद्देश्य चतुष्पद बनना नही चतुर्भुज बनना है। विवाह पाशविकता का पोषण नही करता, उसे सामर्थ्य का पोषक होना चाहिए।

अनीति का प्रतिकार न करना राजा के लिए कलक का टीका हे। युद्ध के भय से जो राजा अन्याय, अत्याचार होने देगा, वह पृथ्वी को नरक बना डालेगा और अपने धर्म को कलकित करेगा।

हे आत्मा, तू परमात्मा को सुमर। तू और परमात्मा दो नही–एक है। अब तू चेत जा।

माघ कृष्णा 2

केवल धन के उपार्जन और रक्षण मे न लगे रहो। मनुष्यजीवन जड पदार्थो की उपासना के लिए नही है। दयादान की ओर ध्यान दो।

जो पुरुष पूर्णरूप से आत्माभिमुख हो जाता हे उसकी आत्मा ही उसका विश्व बन जाता है। उसे अपनी आत्मा मे जो रमणीयता प्रतीत होती

है, वह अन्यत्र कही नही। आत्मा मे अध्यवसायो के उत्थान और पतन की जो परम्परा निरन्तर जारी रहती है, उसे तटस्थभाव से निरीक्षण करने वाले आत्मदृष्टा को बाहरी दुनिया की ओर ध्यान देने की फुर्सत ही नही रहती।

तत्त्वज्ञानी पुरुष विषयभोग से इसी प्रकार दूर भागते है, जैसे साधारण मनुष्य काले नाग को देखकर।

विवेकपूर्ण वैराग्य की स्थिति मे किसी को समझा–बुझाकर ससार मे नही फसाया जा सकता।

माघ कृष्णा 3

जीवन के वास्तविक उत्कर्ष के लिए उच्च और उज्ज्वल चरित्र की आवश्यकता है। चरित्र के अभाव मे जीवन की सस्कृति अधूरी ही नही, शून्यरूप है।

जो माता–पिता अपने बालक को धर्म की शिक्षा ही न देगे उनका बालक विनीत किस प्रकार बन सकेगा?

ससार के लोग झूठ ही कहते है कि हमे मरने का ज्ञान है। जिसे मृत्यु का स्मरण होगा वह बुरे काम क्यो करेगा? वह अन्याय, अत्याचार और पाप केसे कर सकता है?

जो जन्मा है वह मरेगा ही। जिसका उदय हुआ है, वह अस्त भी होगा। जो फूला हे, वह कुम्हलाएगा ही।

तप मे अपूर्व अद्भुत और आश्चर्यजनक शक्ति हे। तपस्या की आग मे आत्मा के समस्त विकार भस्म हो जाते हे और आत्मा सुवर्ण की तरह प्रकाशमान हो उठता हे।

माघ कृष्णा 4

जिसकी आत्मा मे ज्ञान का प्रकाश फेल जाता है, जो जगत् के वास्तविक स्वरूप को समझ लेता हे उसे ससार असार प्रतीत होने लगता हे। ससार की समस्त सम्पदा और विनोद एव विलास की विविध सामग्री उसका चित्त अपनी ओर आकर्षित नही कर सकती। ससारी लोगो द्वारा कल्पित मूल्य और महत्व उसके लिए उपहास का पात्र है। वह बहुमूल्य समझे जाने वाले हीरे को पाषाण के रूप मे देखता हे। भोग को रोग मानता हे। ऐसे विरक्त

पुरुष को वासनाओ के वन्धन मे वधे हुए साधारण मनुष्यो की वुद्धि पर तरस आता हे।

वालक को गुडिया की तरह सिगार कर ओर अच्छा भोजन देकर मा–वाप छुट्टी नही पा सकते। जिसे उन्होने जीवन दिया हे, उसके जीवन का निर्माण भी उन्हे करना हे। जीवन–निर्माण का अर्थ हे सस्कार–सम्पन्न वनाना ओर वालक की विविध शक्तियो का विकास करना। शक्तियो का विकास हो जाने पर वे सन्मार्ग मे लगे, सत्कार्य मे उनका प्रयोग हो ओर दुरुपयोग न हो, यह सावधानी रखना भी माता–पिता का कर्त्तव्य हे।

माघ कृष्णा 5

सन्तान के प्रति माता–पिता का क्या कर्त्तव्य हे, उन पर कितना महान् उत्तरदायित्व है, यह बात माता–पिता को भलीभाति समझ लेना चाहिए। सन्तान का सुख ससार मे बडा सुख माना जाता हे तथापि सन्तान को अपने मनोरजन और सुख का साधन मात्र बनाकर उसकी स्थिति खिलोना–जैसी बना डालना उचित नही हे।

ज्यो ज्यो मास–मदिरा का प्रचार बढता जाता हे त्यो–त्यो रोग बढते जाते हे, नई–नई आश्चर्यजनक बीमारिया डाकिनो की तरह पेदा हो रही है, उम्र का औसत घटता जाता है, शरीर की निर्बलता बढती जाती हे इन्द्रियो की शक्ति क्षीण से क्षीणतर होती जा रही हे, देखते–देखते चटपट मोत आ घेरती है, फिर भी अन्धी दुनिया को होश नही आता। क्या प्राचीन काल मे ऐसा था? नही तो फिर 'पूर्व' की ओर–उदय की दिशा मे–प्रकाश के सन्मुख न जाकर लोग 'पश्चिम' की तरफ–अस्त की ओर–मृत्यु के मुह की सीध मे क्यो जा रहे हें? जीवन की लालसा से प्रेरित होकर मोत का आलिगन करने को क्यो उद्यत हो रहे है?

माघ कृष्णा 6

वाहर से ज्ञान ठूसना शिक्षा नही हे। सच्ची शिक्षा हे–वालक की दवी हुई शक्तियो को प्रकाश मे ले आना सोई हुई शक्तियो को जगा देना बालक के मस्तिष्क को विकसित कर देना, जिससे वह स्वय विचार करने की क्षमता प्राप्त कर सके।

ससार की माया(धन–दौलत) गेद के समान है। अगर खिलाडी की तरह इसे देते रहे तब तो ठीक है–खेल चलता रहेगा अगर इसे पकडकर बैठ गये तो खेल भी बन्द हो जाएगा और धप्पे भी खाने पडेगे।

पुण्यवान् होने का अर्थ आलसी होना नही है। आलस्य मे डूबे रहना तो पुण्य का नाश करना है।

दुख के साथ सघर्ष करते–करते आत्मा मे एक प्रकार की तेजस्विता का पादुर्भाव होता है अन्तकरण मे दृढता आती है, हृदय मे बल आता है और तबीयत मे मस्ती आती है।

माघ कृष्णा 7

दुखो को सहन करने मे विजय का मधुर स्वाद आता है। अतएव दुख हमारे शत्रु नही मित्र हैं। शत्रु वह मानसिक वृत्ति है जो आत्मा को दुखो के सामने कायर बनाती है और दुखो से दूर भागने के लिए प्रेरित करती है। सत्वशाली पुरुष दुखो से बचने की प्रार्थना नही करता, वरन् दुखो पर विजय प्राप्त करने योग्य बल की प्रार्थना करता है।

दुखो का रोना मत रोओ। हाय दुख, हाय दुख, मत चिल्लाओ। ससार मे अगर दुख हे तो उन पर विजय प्राप्त करने की क्षमता भी तुम्हारे भीतर मौजूद है। रोना तो स्वय ही एक प्रकार का दुख है। दुख की सहायता से ही क्या दुखो को जीतना चाहते हो?

जगत् की प्रचलित व्यवस्था मे दुख का ही प्रधान स्थान है। दुख ससार का व्यवस्थापक है।

दुखरूपी विशाल मशीन मे ही ससार की सारी व्यवस्था ढली है।

माघ कृष्णा 8

सुख के ससार मे विलास के कीडे उत्पन्न होते हैं और दुख की दुनिया मे दिव्यशक्ति से सम्पन्न पुरुषो का जन्म होता हे।

अगर आपको निश्चय हो गया है कि वेरभाव त्याज्य है उससे सताप उत्पन्न होता हे ओर आत्मा कलुषित होती है तो आपको उसका त्याग कर ही देना चाहिए चाहे दूसरा त्याग करे या न करे। आप त्याग करेंगे तो [illegible]

[illegible] त्याग होगा वह त्याग करेगा तो उसका कल्याण होगा। यह कोई सौदा नही है कि वह दे तो मै दू।

तुम्हारे पूर्वजो ने तुम्हे जो प्रतिष्ठा इस विश्व मे दिलाई है क्या वह तुम अपनी सतति को नही दिला सकोगे? अगर न दिला सके तो सपूत नहीं कहलाओगे। सपूत बनने के लिए पाप से डरो। नीति को मत छोडो धर्म को जीवन मे एक-रस कर लो।

ईश्वर के विषय मे अगर सुदृढ विश्वास हो गया तो वह सभी जगह मिलेगा। विश्वास न हुआ तो कहीं नही मिलेगा।

माघ कृष्णा 9

जिसे परमात्मा की नित्यता और व्यापकता पर विश्वास होगा, उससे पापकर्म कदापि न होगा। जब कभी उसके हृदय मे विकार उत्पन्न होगा और कपट करने की इच्छा का उदय होगा तभी वह सोचेगा—ईश्वर व्यापक है उसमे भी है मुझमे भी है। मैं कैसे कपट करू?

जो परमात्मा का अस्तित्व स्वीकार नहीं करता, वह आत्मा की सत्ता को अस्वीकार करता है और आत्मा को अस्वीकार करने वाला अपना ही निषेध करता है और फिर अपना निषेध करने वाला वह कौन है?

पर—पदार्थ का सयोग हुआ और उसमें अहभाव या ममभाव धारण किया कि दु ख की उत्पत्ति होती है। उस दु ख को मिटाने के लिए जीव फिर नवीन पदार्थों का सयोग चाहता है और परिणाम यह होता है कि दु ख बढता ही चला जाता है।

माघ कृष्णा 10

ससार—वासना के वशवर्ती होने के कारण कई लोग धर्मसेवन भी वासनाओ की पूर्ति के उद्देश्य से ही करते हैं। कनक और कामिनी के भोग मे सुविधा और वृद्धि होने के लिए ही वह धर्म का आचरण करते हैं। ऐसे लोगो का अन्त करण वासना की कालिमा से इतना मलीन हो गया है कि परमात्मा का मनमोहन रूप उस पर प्रतिबिम्बित नही हो सकता।

सच्ची धार्मिकता लाने के लिए नीतिमय जीवन बनाने की अनिवार्य आवश्यकता है। नीति धर्म की नीव है।

रात्रि–भोजन अत्यन्त ही हानिकारक है। क्या जैन और क्या वैष्णव– सभी ग्रन्थो मे रात्रि–भोजन को त्याज्य माना गया है। आजकल के वैज्ञानिक भी रात्रि–भोजन को राक्षसी भोजन कहते है। रात्रि मे पक्षी भी खाना–पीना छोड देते है। पक्षियो मे नीच समझे जाने वाले कौए भी रात मे नही खाते। हा, चमगादड रात्रि को खाते हैं, परन्तु क्या आप उन्हे अच्छा समझते हैं? आप उनका अनुकरण करना पसन्द करते हैं?

माघ कृष्णा 11

पनचक्की आटे का असली सत्व आप खा जाती है और आटे का नि सत्व कलेवर ही बाकी रखती है। पनचक्की मे पिसकर निकला हुआ आटा जलता हुआ होता है। वह मानो कहता है–'मेरा सत्व चूस लिया गया है और मै बुखार चढे हुए मनुष्य की तरह कमजोर हो गया हू।'

आप सामायिक करते हैं, धर्मध्यान करते हैं, सो तो अच्छी बात है, पर कभी इस ओर भी ध्यान देते हैं कि आपके घर मे पानी छानने के कपडे की क्या दशा है?

ईश्वर को ढूढने के लिए इधर–उधर मत भटको। पृथ्वीतल बहुत विशाल है और तुम्हारे पास छोटे–छोटे दो पैर हैं। इनके सहारे तुम कहा–कहा पहुच सकोगे? फिर इतना समय भी तुम्हारे पास कहा है?

मन को शान्त और स्वस्थ बनाओ। फिर देखोगे तो ईश्वर तुम्हारे ही निकट–निकटतर दिखाई देगा।

माघ कृष्णा 12

देखा जाता हे कि मनुष्य की आकृति धारण करने वाला प्राणी पशु की अपेक्षा भी बुरे काम करता है। गधो ने बुरे काम किये और उनके लिए कानून बना यह आज तक नही सुना।

ससार पर निगाह दौडाइए तो आपको समझने मे तनिक भी देरी नही लागी कि मनुष्य को मनुष्य से जितना भय हे उतना किसी भी अन्य जीवधारी से नही हे। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य के लिए कितना विकराल हे?

मनुष्य का जितना निर्दयतापूर्वक सहार मनुष्य ने किया और कर रहा है उतना कभी किसी ने नही किया।

पशु पशुओ को मारने के लिए कभी फौज नही बनाता। मगर मनुष्यो ने करोडो मनुष्यो की जो फौज बना रखी है वह किसलिए है? मनुष्यो का ही सहार करने के लिए।

पशु कम से कम वस्तुओ पर अपना निर्वाह करता है। वह पेट भर खाने के सिवाय कोई सग्रह नही करता मगर मनुष्य की सग्रहलालसा का कही ओर–छोर नही।

माघ कृष्णा 13

मनुष्यत्व की श्रेष्ठता इस कारण नही है कि मनुष्य अपनी विशिष्ट बुद्धि से बुरे कामो मे पशुओ को भी मात कर दे, वरन् वह प्राणी–जगत का राजा इसलिए है कि सद्‌गुणो को धारण करे, धर्म का पालन करे, स्वय जीवित रहते हुए दूसरो के जीवन मे सहायक हो।

जो लोग ईश्वर को आखो से ही देखना चाहते हे ओर देखे बिना उस पर विश्वास नही करना चाहते, वे भ्रम मे पडे हुए हे। ईश्वर को देखने के लिए दिव्यदृष्टि की आवश्यकता हे।

लोभ, लालच, काम, क्रोध आदि से मलीन हृदय की पुकार परमात्मा के पास नही पहुचती। स्वच्छ हृदय से ईश्वर की प्रार्थना करने से ही मनोवाछित कार्य की सिद्धि होती हे।

हृदय ही वह भूमिका हे जिस पर दु ख का विकराल विषवृक्ष उगता अकुरित होता ओर फूलता–फलता हे।

माघ कृष्णा 14

जिसका चित्त ईश्वर पर मोहित होकर ससार की ओर वस्तुओ से हट जायेगा, जो एकमात्र परमात्मा को ही अपना आराध्य मानेगा जो परमात्म–प्राप्ति के लिए अपने सर्वस्व को हसते–हसते ठुकरा देगा, वह परमात्मा को ही 'मोहनगारो मानेगा।

परमात्मा 'मोहनगारो' नही है तो भक्तजन किसके नाम पर ससार का विपुल वेभव त्याग देते हे? अगर ईश्वर मे आकर्षण न होता तो बडे–बडे चक्रवर्ती ओर सम्राट उसकी खोज के लिए वन की खाक क्यो छानते फिरते?

अगर भगवान किसी का मन नही मोहते तो प्रहलाद को किसने पागल बना रखा था? मीरा ने किस मतलब से कहा था– 'मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरो न कोई।'

मछली को जल मे क्या आनन्द आता है, यह बात तो मछली ही जानती है, उसी से पूछो। दूसरा कोई क्या जान सकता है? इसी प्रकार जिन्हे परमात्मा से उत्कट प्रेम है, वही बतला सकते है कि परमात्मा मे क्या आकर्षण है। केसा सौन्दर्य है। और कैसी मोहक शक्ति है। क्यो उन्हे परमात्मा के ध्यान बिना चैन नही पडता।

माघ कृष्णा 30

अगर आपने धन–सबधी चिन्ता मिटाने के लिए त्रिलोकीनाथ से प्रार्थना की तो क्या आपने त्रिलोकीनाथ को पहचाना है? परमात्मा से यही चाहा तो उसे त्रिलोकीनाथ समझा या सेठ–साहूकार समझा?

कई लोग शारीरिक रोग मिटाने के लिए परमात्मा की प्रार्थना किया करते हे। उनकी समझ मे भगवान् डाक्टर या वैद्य है। ऐसे लोग परमात्मा की महिमा नही समझते।

विश्वास रखो, ईश्वर के दरबार मे सतोष करके रहोगे तो रोटी दौडकर आएगी।

ईश्वर जब मिलेगा तब अपने आप मे ही मिलेगा। उसकी भेट विश्वास मे है।

जहा सदेह आया, चित्त मे चचलता उत्पन्न हुई कि ईश्वर दूर भाग जाता है।

माघ शुक्ला 1

जेसे मलीन काच मे मुह नही दीखता। उसी प्रकार लोभ और तृष्णा से भरे हुए हृदय को न्याय नही सूझता।

हे पूजक! क्या तू हाड मास नख या केश हे? अगर तेरी यही धारणा है तो तू ईश्वर की पूजा के लिए अयोग्य हे मास का पिड अशुचि है वह ईश्वर की पूजा मे नही टिक सकता।

देह जिसका हे वह स्वय देह नही हे, वह देही हे निश्चय समझो–में हाथवान हू, स्वय हाथ नही हू।

जिसने आत्मा का असली स्वरूप समझ लिया हे, उसने परमात्मा पा लिया है। परमात्मा की खोज आत्मा मे तन्मय होने पर समाप्त हो जाती है।

वर्तमान मे न भूल, भविष्य की ओर देख।

माघ शुक्ला 2

मनुष्य शरीर सुलभ नही हे भाई, धर्मक्रिया करो। धर्म का आचरण न किया तो यह शरीर किस काम का?

लोगो को पुरानी ओर फटी पोशाक वदलने मे जैसा आनन्द होता हे, वैसा ही आनन्द ज्ञानी को मृत्यु के समय–शरीर वदलते समय होता है।

दूसरो के अवगुण देखना स्वय एक अवगुण हे। दुनिया के अवगुणो को चित्त मे धारण करोगे तो चित्त अवगुणो का खजाना बन जायेगा।

अपनी दृष्टि ऐसी उज्ज्वल वनाइए कि आपको दूसरे के गुण दिखाई दे। अवगुणो की तरफ दृष्टि मत जाने दीजिए। हा अवगुण देखने हें तो अपने ही अवगुण देखो।

धर्म जब प्राणो के समान प्रिय जान पडने लगे तभी समझना चाहिए कि हमारे अन्त करण मे धर्मश्रद्धा हे।

माघ शुक्ला 3

विद्या ग्रहण करने मे विनय की ओर विद्या देने मे प्रेम की आवश्यकता रहती है। विनय के बिना विद्या ग्रहण नही की जा सकती ओर प्रेम के अभाव मे विद्या चढती नही है।

हे जीवो! अकडकर मत रहो–अभिमानी मत बनो। नम्रता धारण करो। तुम मे अकडकर रहने की शक्ति हे तो नम्र बनने की भी शक्ति हे। जेसे वालक निष्कपटभाव से अपने पिता के समक्ष सारी वाते स्पष्ट कह देता हे उसी प्रकार गुरु के समक्ष आलोचना करके सब वाते सरलतापूर्वक साफ–साफ कह देनी चाहिए।

कपट करके दूसरे की आखो मे धूल झोकी जा सकती है, परन्तु क्या परमात्मा को भी धोखा दिया जा सकता हे?

जो शक्ति पराई निन्दा मे खर्च करते हो वह आत्मनिन्दा मे ही क्यो नही लगाते?

माघ शुक्ला 4

आप मानव–जीवन मे रहकर दूसरो की जो भलाई कर सकते हैं, परोपकार कर सकते हैं और साथ ही आत्मकल्याण की जो साधना कर सकते है, वह देवलोक मे रहने वाले इन्द्र के लिए भी शक्य नही है। इस दृष्टि से विचार करो कि मानव–जीवन मूल्यवान् है या देवजीवन?

गुणी जनो के प्रति सद्भाव न प्रकट करना अपने लिए दु ख उत्पन्न करने के समान हे।

गुणी पुरुषो के गुण देखने के बदले दोष देखना आत्मा को पतित करना है।

जो पुरुष अपने ज्ञान के अनुसार व्यवहार नही करता– व्यवहार करने की चेष्टा भी नही करता, उसका ज्ञान भी अज्ञान है। अज्ञानी गुरु तुम्हारे भीतर ज्ञान के बदले अज्ञान ही भरेगा।

तुम अपनी कृपणता के कारण धन का व्यय नही कर सकते। परन्तु धन तुम्हारे प्राणो का भी व्यय कर सकता है।

माघ शुक्ला 5

जिस दीपक मे केवल बत्ती होगी या केवल तेल ही होगा, वह प्रकाश नही दे सकेगा। इसी प्रकार ज्ञान के अभाव मे अकेली क्रिया से या क्रिया के अभाव मे अकेले ज्ञान से कल्याण नही हो सकता।

एक राष्ट्र का लाभ जब दूसरे राष्ट्र को हानि पहुचाकर प्राप्त किया जाता है तो वह अनर्थ का कारण बनता हे। इससे राष्ट्रो मे समष्टिभावना नही उत्पन्न होती।

जिस राष्ट्रीयता मे एक राष्ट्र दूसरे का सहायक और पूरक होता हे [illegible] प्रतिस्पर्द्धा के बदले पारस्परिक सहानुभूति की प्रधानता होती हे जहा [illegible]

विश्वकल्याण के दृष्टिकोण से राष्ट्रीय नीति का निर्धारण होता ह वही शुद्ध राष्ट्रीयता है।

अहिसा मे ऐसी अपूर्व शक्ति हे कि सिह ओर हिरन जो जन्म से विरोधी है अहिसक की जाघ पर आकर सो जाते हैं।

माघ शुक्ला 6

मल्ल कुश्ती लडने के बाद और वीर योद्धा युद्ध करने के बाद सन्ध्या समय अपनी शुश्रूषा करने वाले को वतला देता है कि आज सारे दिन मे मुझे अमुक जगह चोट लगी है और अमुक जगह दर्द हो रहा है। शुश्रूषा करने वाला सेवक औषध या मालिश द्वारा उस दर्द को मिटा देता हे ओर दूसरे दिन मल्ल कुश्ती करने के लिए और योद्धा युद्ध करने के लिए तैयार हो जाता है। इसी प्रकार जो सन्त पुरुष अपने दोषो को प्रतिक्रमण द्वारा दूर कर देता है, वह निश्चितरूप से अपने कर्मो को जीत लेता है।

कायर लोग जीभ का दुरुपयोग करते है, वीर पुरुष नही। कुत्ते भौकते है, वीर सिह नही भौंकता।

भोजन का सारभाग वाणी को ही मिलता है। वाणी मे शरीर की प्रध ाान शक्ति रहती है। अतएव वाणी द्वारा शक्ति का निरर्थक व्यय करना अनुचित है। बोलने मे विवेक की बडी आवश्यकता हे।

माघ शुक्ला 7

सच्ची विजय मे किसी के पराजय की कामना नही होती। जिस विजय का मूल्य अन्य का पराजय हे, वह विजय विशुद्ध विजय नही कहला सकती।

विषमभाव रोग के समान हे और समभाव अरोग्यता के समान हे। विषमभाव का रोग समभाव की आराधना से ही मिटता हे।

ससार मे सर्वत्र समभाव की मात्रा पाई जाती हे ओर समभाव के कारण ही ससार का अस्तित्व हे। परन्तु ज्ञानी पुरुष समभाव पर ज्ञान का कलश चढाते हे। ज्ञानपूर्वक होने वाला समभाव ही सामायिक हे।

पत्येक कार्य मे समभाव की आवश्यकता है। समभाव के बिना किसी भी कार्य मे और किसी भी स्थान पर शान्ति नही मिल सकती, फिर भले ही वह कार्य राजनीतिक हो, या सामाजिक हो।

जिसमे समभाव होता है उसका हृदय माता के हृदय के समान बन जाता है।

माघ शुक्ला 8

आत्मा को परमात्मपद पर पहुचाने का उपाय है परमात्मा के ध्यान मे आत्मा का तल्लीन हो जाना। आत्मा जब परमात्मा के स्वरूप मे निमग्न हो जाता है तब वह स्वय परमात्मा बन जाता है।

परमात्मा के पवित्र आसन पर भौतिक विज्ञान की प्रतिष्ठा करने वाले अशान्ति की ही प्रतिष्ठा कर सकते है, सहार को निमन्त्रित कर सकते है और विप्लव का आह्वान कर सकते हैं। उनसे शान्ति की आशा कदापि नही रखी जा सकती।

हे जीव! तू ससाररूपी जेलखाने मे आया है और पत्नी आदि की बेडी तुझे पहनाई गई है। अब तू इस बेडी के बन्धन से छूटना चाहता है या अधिक बधना चाहता है? अरे! यह मनुष्यजीवन बेडी काटने के लिए मिला हे ओर बार–बार यह सुअवसर मिलना कठिन हे।

धर्म से सत्य को पृथक् कर दिया जाय तो धर्म नाममात्र के लिए ही शेष रहेगा।

माघ शुक्ला 9

तुम्हारे पूर्वजो की ओर से तुम्हारे लिए जो आदर्श उपस्थित किया गया हे वह अन्यत्र मिलना कठिन हे। लेकिन तुम उस आदर्श की ओर ध्यान नही देते ओर इधर–उधर भटकते–फिरते हो।

दु ख भोगते समय हाय–तोबा मचाने से अधिक दु ख होता है। अतएव दु ख के समय घबराओ मत। चित्त को प्रसन्न रखने की चेष्टा करो ओर परमात्मा की शरण ग्रहण करो।

स्वय दूसरे के वश मे होकर रहना सर्वोत्तम वशीकरण मत्र हे।

तुम्हारे भीतर वास्तविक शान्ति होगी तो कोई दूसरा तुम्हे अशान्त नही कर सकेगा।

जिन महापुरुषो ने सत्य को पूर्णरूप से प्राप्त कर लिया हे उनमे ओर ईश्वर मे कोई भेद नही रह जाता।

माघ शुक्ला 10

राजा कदाचित् शरीर को बन्धन मे डाल सकता है परन्तु मन को कोई भी बन्धन मे नही बाध सकता। मन तो स्वतन्त्र ही है। अतएव जेल मे भी अगर मन से परमात्मा का स्मरण किया जाय तो जेल भी कल्याण का धाम बन सकता है।

किसी एक सम्प्रदाय, धर्म या मजहब के पीछे जो उन्मत्त है, जो स्वार्थवश अच्छे–बुरे की परवाह नही करता, जो वास्तविकता की उपेक्षा करके हा मे हा मिलाना जानता है, ऐसा मनुष्य सत्य को नहीं पहचान सकता।

मानव–शरीर आत्मा का प्रतिनिधि माना जाता हे। तीर्थंकर, अवतार आदि इसी शरीर मे हुए हैं। ऐसा उत्कृष्ट शरीर पाकर भी यदि विषय–कषाय के सेवन मे इसका उपयोग किया गया तो अन्त मे पश्चात्ताप ही हाथ लगेगा।

आत्मा अमर और अविनाशी है, जबकि शरीर नाशवान् हें। आत्मा को शारीरिक मोह मे फसाकर गिराना उचित नही।

माघ शुक्ला 11

मेरी ऐसी धारणा है कि यदि मनुष्य अपने सुबह से शाम तक के काम किसी विश्वस्त मनुष्य के समक्ष प्रकट कर दिया करे तो उसके विचारो ओर कार्यो मे बहुत प्रशस्तता आ जाएगी। गृहस्थो को और कोई न मिले तो पति–पत्नी आपस मे ही अपने–अपने कार्य एक दूसरे पर प्रकट कर दिया करे। ऐसा करने से उन्हे अवश्य लाभ होगा।

जैसे पृथ्वी के आधार बिना कोई वस्तु नही टिक सकती ओर आकाक्षा के आधार बिना पृथ्वी नही टिक सकती, इसी प्रकार सामायिक का आश्रय पाये बिना दूसरे गुण नही टिक सकते।

पश्चात्ताप करने मे लोगो को यह भय रहता हे कि में दूसरो के सामने हल्का या तुच्छ गिना जाऊगा। मगर इस प्रकार का भय पतन का

कारण है। स्वच्छ हृदय से पश्चात्ताप करने से आत्मा मे अपने दोषो को प्रकट करने का सामर्थ्य आता है और दुर्बलता दूर होती है।

माघ शुक्ला 12

निर्भय होने पर तलवार, विष या अग्नि वगैरह कोई भी वस्तु तुम्हारा बाल बाका न कर सकेगी। वास्तव मे दूसरी कोई भी वस्तु तुम्हारा बिगाड नही कर सकती, सिर्फ तुम्हारे भीतर पैठा हुआ भय ही तुम्हारी हानि करता है।

अगर तुम्हारे अन्त करण मे निन्दा करने की प्रवृत्ति है तो फिर उसका उपयोग आत्मनिन्दा करके निर्दोष बनने मे क्यो नही करते? परनिन्दा करके अपने दोषो की वृद्धि क्यो करते हो? जब दुर्गुण ही देखने हैं तो अपने दुर्गुण देखो ओर उन्ही की निन्दा करो।

जो मनुष्य वचन से लघुता दिखलाता है मगर पाप का त्याग नही करता, वह वास्तव मे लघुता का प्रदर्शन नही करता, ढोग का प्रदर्शन करता है।

जो बुद्धिमान् होगा और जो अपना कल्याण चाहता होगा, वह अपने व्रतो मे पडे हुए छिद्रो को प्रतिक्रमण द्वारा तत्काल बन्द कर देगा।

माघ शुक्ला 13

प्रजा को ऐसी शिक्षा मिलनी चाहिए कि वह राजा या राज्यसत्ता के विरुद्ध भी पुकार कर सके और राजा या राज्यसत्ता को प्रजा की पुकार सुनने के लिए तैयार रहना चाहिए।

भगवान् महावीर की शिक्षा कायरता धारण करने के लिए नही, वीरता प्रकट करने के लिए है।

वीर पुरुष अपनी तलवार से अपनी भी रक्षा करता है और दूसरो की भी रक्षा करता है। इसके विरुद्ध कायर के हाथ की तलवार उसी की हानि करती है और वह तलवार का भी अपमान करता है। तुम्हे वीर–धर्म मिला है। कायरता धारण करके वीर–धर्म का अपमान मत कराओ।

किसी भी वस्तु को केवल स्वाद की दृष्टि से मत अपनाओ। उसके गुणो ओर दोषो का विचार करना आवश्यक हे। काटे मे लगा हुआ मास

मछली को अच्छा लगता हे परन्तु वह मास उसके खाने की वस्तु हे या उसकी मृत्यु का उपाय हे?

माघ शुक्ला 14

आग पर पानी रखने से पानी उवलता हे ओर उवलने पर सन्–सन् आवाज करता हे। यह आवाज करता हुआ पानी मानो कह रहा हे कि मुझमे आग बुझा देने की शक्ति हे, लेकिन मेरे ओर आग के वीच मे यह पात्र आ गया है। मैं पात्र मे वन्द हू और इसी कारण आग मुझे उवाल रही हे ओर मुझे उवलना पड रहा हे।

इसी प्रकार आत्मा सुखस्वरूप हे किन्तु शरीर मे केद होने के कारण वह सन्ताप पा रहा हे। शरीर का वन्धन हट जाने पर दु खो की क्या मजाल कि वे आत्मा के पास फटक सके।

आज ससार मे जो अशान्ति फेल रही हे, उसका मुख्य कारण इच्छाओ का अपरिमित होना है। इच्छाओ की अपरिमितता ने साम्यवाद ओर कम्यूनिज्म को जन्म दिया है। धनवान् लोग पूजी दवाकर वेठे रहे ओर गरीब दु ख पावे, तब गरीबो को धनिको के प्रति ईर्ष्या होना स्वाभाविक है।

माघ शुक्ला 15

परमात्मा के ध्यान से आत्मा का परमात्मा बन जाना कोई अद्भुत बात नही हे। मनुष्य जैसा वनने का अभ्यास करता हे, वेसा ही बन जाता हे फिर आत्मा का परमात्मा बन जाना तो स्वाभाविक विकास हे, क्योकि आत्मा और परमात्मा मूलत समान स्वभाव वाले हैं।

अहिसा का विधि–अर्थ है– मैत्री, बन्धुता, सर्वभूत–प्रेम। जिसने मैत्री या बन्धुता की भावना जागृत नही की हे, उसके हृदय मे अहिसा का सर्वांगीण विकास नही हुआ है।

हमारे अन्दर अनेक त्रुटियो मे से एक त्रुटि यह भी हे कि हम अपनी अन्तरग ध्वनि की ओर कान नही देते। अन्तरात्मा जिस बात को पुकार–पुकार कर कहता हे उसे सुनने और समझने की ओर हमारा ध्यान ही नही जाता।

अहिसा के बल के सामने हिसा गलकर पानी–पानी हो जाती हे।

फाल्गुन कृष्णा 1

अगर तुम भय खाते हो तो समझ लो कि तुम्हारे अन्तर के किसी न किसी कोने मे सत्य के पति अश्रद्धा का भाव मौजूद है। सत्य पर जिसे पूर्ण श्रद्धा हे वह निडर है। ससार की कोई भी शक्ति उसे भयभीत नही कर सकती।

आपको पाप से सचमुच घृणा है तो जैसे आपको अपना पाप असह्य जान पडता है उसी पकार अपने पडौसी का भी असह्य जान पडना चाहिए। आप पापी का उद्धार करके उसे निष्पाप बनाने की चेष्टा कीजिए। यह आपकी सबसे बडी धर्मसेवा होगी।

ससार के सभी मनुष्य समान होकर रहे, इस प्रकार का साम्यवाद कभी समस्त ससार मे फैल सकता है, लेकिन उस समानता के भीतर जब तक बन्धुता न होगी तब तक उसकी नीव बालू पर खडी हुई समझना चाहिए। यही नही बन्धुताविहीन साम्यवाद विनाश का कारण बन सकता है।

फाल्गुन कृष्णा 2

त्याग मे अनन्त बल है अमित सामर्थ्य है। जहा ससार के समस्त बल बेकार बन जाते हे अस्त्र–शस्त्र निकम्मे हो जाते हे, वहा भी त्याग का बल अपनी अद्भुत और अमोघ शक्ति से कारगर होता है।

जिसे तुम कर्त्तव्य मानते हो उसे केवल मानते ही न रहो–बल्कि आचरण मे उतारो। अपने कर्त्तव्य की भावना को व्यवहार मे लाने की चेष्टा करो।

लोगो मे आपस मे लडने की पाशविक वृत्ति इतनी अधिक बढी हुई हे कि वे अपने साथ अपने भगवान् को भी अछूता नही छोडना चाहते। उनका वश चले तो वे साडो की तरह अपने–अपने भगवान को भी लडा–भिडाकर तमाशा देखे।

ससार के सभी प्राणी मेरे भाई हे समस्त ससार मेरा घर हे ओर सारे ससार का वभव ही मेरा वैभव है।

फाल्गुन कृष्णा 3

मित्रो! हमारी बात सुनो। अगर तुम शान्ति ओर सुख के साथ रहना चाहते हो तो अपने झूठे विज्ञान को, हिसारूपी पिशाचिनी के पिता इस विज्ञान को समुद्र मे डुबा दो। हिसा को अभ्युदय का साधन मत समझो।

मनुष्य का मन सिनेमा के दृश्यो की भाति अस्थिर हे। एक भाव उत्पन्न होता है और फिर तत्काल ही दूसरा भाव उसके स्थानपर अपना अधिकार कर बैठता है। विशुद्ध भावना को मलीन भावना उसी प्रकार ग्रस लेती है, जैसे चन्द्रमा को राहु।

पराधीनता की बेडियो को काटने का उपाय है—आत्मनिर्भर बनना। तुम पर — पदार्थो के अधीन रहो—ससार की वस्तुओ को अपने सुख का साधन समझो और फिर पराधीनता से भी बचना चाहो, यह सम्भव नही है। पूर्ण स्वाधीनता पूर्ण स्वावलम्बन से ही आती है।

फाल्गुन कृष्णा 4

मनुष्य अपने बुद्धि—वैभव के कारण पतन के मार्ग मे अधिक कोशल के साथ अग्रसर हो रहा है। ईश्वर ही जाने, कहा उसके मार्ग का अन्त होगा। न जाने किस निविड अन्धकार मे जाकर वह रुकेगा।

कोई पाप छिपाने का प्रयास करे सो भले ही करे, पर पाप छिप नही सकता। उसका कार्य चिल्ला—चिल्लाकर उसके पापो की घोषणा कर देगा।

परमात्मा से भेट करने का सीधा मार्ग उसका भजन करना है।

जिसके चेहरे पर ब्रह्मचर्य का तेज अठखेलिया करता है उसे पाउडर लगाने की आवश्यकता नही रहती। जिसके शरीर के अग—प्रत्यग से आत्मतेज फूट पडता हो उसे अलकारो की अपेक्षा नही रहती।

फाल्गुन कृष्णा 5

हम जिस काम को करना सोचते है ओर जिसमे अच्छाई का अनुभव करते हैं, उस काम को अपने आप नही कर डालते, यह आत्मिक दुर्बलता नहीं तो क्या हे?

जिस प्रकार सूर्य के सामने अन्धकार नही रहता, इसी प्रकार परमात्मा का साक्षात्कार होने पर आत्मा मे कोई भूल शेष नही रहती।

जो लोग अपने अवगुणो को बडे यत्न से छिपाकर अन्त करण मे सुरक्षित रख छोडते है, उनका हृदय उन अवगुणो का स्थायी निवास–स्थान बन जाता है।

प्रत्येक व्यवस्था मे विकार का विष मिल ही जाता है, पर विद्वानो का कर्त्तव्य है कि वे किसी व्यवस्था को समूल नष्ट करने का प्रयत्न करने से पहले उसके अन्तस्तत्व का अन्वेषण करे और उसके विकारो को ही दूर करने की चेष्टा करे।

फाल्गुन कृष्णा 6

सच्चा भक्त वही है जो माया के फन्दे मे न फसे। माया बडी छलनी है। उसने चिरकाल से नही, अनादिकाल से जीवात्मा को भुलावे मे डाल रखा है।

जिस दिन जड और चेतन के ससर्ग का सिलसिला समाप्त हो जाएगा, उसी दिन दु ख भी समाप्त हो जाएगा और एकान्त सुख प्रकट हो जाएगा।

सच्चा माला फिराने वाला भक्त वह है जो अपने भाइयो के कल्याण की कामना करता है और अपने सुख की अभिलाषा का त्याग कर देता है।

जो अपने व्यक्तिगत सुख–दु ख को अपने सुख–दु ख मे परिणत कर देगा, जो समस्त प्राणियो मे अपने व्यक्तित्व को बिखेर देगा, वह कभी किसी से छल–कपट नही कर सकता।

जिसकी आत्मा मे तेज नही है उसके शरीर मे दीप्ति होना कैसे असम्भव है?

फाल्गुन कृष्णा 7

प्रार्थना के शब्द जीभ से भले ही उच्चारित हो मगर प्रार्थना का उदभव अन्त करण से होना चाहिए। जब प्रार्थना अन्तर से उद्भूत होती हे तो अन्त करण प्रार्थना के अमृतरस से सराबोर हो जाता हे। वह रस केसा होता है यह कहने की बात नही है। उसका अनुभव ही किया जा सकता हे।

विवाह के अवसर पर लडके की माता को गीत गाने मे जा आनन्द आता हे उससे कई गुणा आनन्द आन्तरिक प्रेम के साथ परमात्मा की प्रार्थना करने वाले को होता हे।

तुम्हे दूसरो के विषय मे सोचने का अवकाश ही क्यो मिलता हे? तुम्हारे सामने कर्त्तव्य का पहाड खडा हे। तुम्हे उससे फुर्सत ही कहा? इसलिए यह विचार छोडो कि दूसरे क्या करते हें? जो कुछ कर्त्तव्य हे उसे अकेले ही करना पडे तो किये चलो। दूसरे के विषय मे तनिक भी न सोचो।

वालविवाह करना अशक्ति का स्वागत करना ही हे।

फाल्गुन कृष्णा 8

शास्त्रो के मर्म का अध्ययन करने से स्पष्ट हो जाता हे कि भगवान ऋषभदेव द्वारा की हुई वर्णव्यवस्था कर्त्तव्य की सुविधा के लिए थी–अहकार का पोषण करने के लिए नही। आज वर्णो के नाम पर उच्चता–नीचता की जो भावना फैली हुई हे वह वर्णव्यवस्था का स्वरूप नही हे–विकार हे।

जिसे गम्य–अगम्य का ज्ञान नही भक्ष्य–अभक्ष्य का विचार नहीं और कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य का वोध नही हे वह सच्चे अर्थ मे मनुष्य कहलाने योग्य भी नही है।

सन्तो की याचना भी एक प्रकार का दान हे ओर वह दान भी अनुपम एव अद्वितीय हे।

माना काल वदल गया हे वदलता जा रहा हे, पर काल ने तुम्हारे अभ्युदय की सीमा तो निर्धारित नही कर दी हे। काल ने किसी के कान मे यह तो नही कह दिया हे कि तुम अपने कर्त्तव्य की ओर ध्यान मत दो। काल को ढाल वनाकर अपनी चाल को छिपाने का प्रयत्न मत करो।

फाल्गुन कृष्णा 9

एक वात तुम पापी से भी सीख सकते हो– 'पापी अपनी पाप–बुद्धि मे जितना दृढ हे हमे धर्मवुद्धि मे उससे कुछ अधिक ही दृढ होना चाहिये।

तुम्हारे भीतर जो शक्ति विद्यमान हे वह साधारण नही हे। उस शक्ति के सामने विश्व की शक्ति टिक नही सकती। आवश्यकता हे उसे जानने की उस पर श्रद्धा रखने की।

दृढ मनोबल के साथ किसी काम मे जुट पडने पर कठिनाइया अपने आप हल हो जाती है और आत्मा के बढते हुए बल के सामने उन्हे परास्त होना पडता है।

धर्म वीरो का होता है, कायरो का नही। वीर पुरुष अपनी रक्षा के लिए लालायित नही रहते, वरन् अपने जीवन का उत्सर्ग करके भी दूसरे की रक्षा के लिए सदा उद्यत रहते है।

फाल्गुन कृष्णा 10

अपनी दृष्टि को बाहर की ओर से भीतर की ओर करो। फिर देखो, तुम्हारी अन्तरात्मा मे कितना आनन्द है, कितना ज्ञान है, कितना तेज है। अन्तरात्मा की ओर एक बार निहार लोगे तो कृतकृत्य हो जाओगे। तब ससार नीरस दिखाई देगा और तुम्हारे अनत कल्याण का मार्ग तुम्हे स्पष्ट रूप से दिखाई देगा।

धर्म के आगे अनेक विशेषण लग जाने के कारण साधारण जनता चक्कर मे पड जाती है कि हम किस विशेषण वाले धर्म का अनुसरण करे? कोन सा विशेषण हमे मुक्ति प्रदान करेगा? मुस्लिम, ईसाई, वैष्णव आदि जिसके विशेषण है, उस धर्मतत्त्व मे वस्तुत भेद नही है। धर्मतत्व एक है, अखड है। उस अखड तत्त्व के खण्ड–खण्ड करके, अनेकान्त मे एकान्त की स्थापना करके देशकाल के अनुसार, लोकरुचि की भिन्नता का आभ्य लेकर अनेक विशेषण लग गये है। सब विशेषणो को अलहदा करके तत्त्व का अन्वेषण किया जाय तो सत्य सूर्य के समान चमक उठेगा। जब धर्म सत्य है और सत्य सर्वत्र एक है तो धर्म अनेक कैसे हो सकते है?

फाल्गुन कृष्णा 11

धर्म मे किसी भी प्रकार के पक्षपात को जातिगत भेदभाव को ऊचनीच की कल्पना को राजा–रक अथवा अमीर–गरीब की भावना को तनिक भी स्थान नही है। धर्म की दृष्टि मे यह सब समान है।

अगर ससार की भलाई करने योग्य उदारता आपके दिल मे नही आई है तो कम से कम अपनी सन्तान का अनिष्ट मत करो। उसके भविष्य [illegible]

को अन्धकार से आवृत्त मत बनाओ। जिसे तुमने जीवन दिया हे उसके जीवन का सत्यनाश मत करो। अपनी सन्तान की रक्षा करो।

बालक दुनिया के रक्षक बनने वाले हैं ऐ भाइयो! छोटी उम्र मे विवाह करके इन्हे ससार की कोल्हू मे मत पीलो।

बालक गुलाब के फूल–से कोमल हैं, इन पर दाम्पत्य का पहाड मत पटको। बेचारे पिस जाएगे।

बालक निसर्ग का सुन्दरतम उपहार हैं। इस उपहार को लापरवाही से मत रौंदो।

फाल्गुन कृष्णा 12

अपना हित चाहते हो तो अहित करने वाले का भी हित चाहो। अहित करने वाले का अहित चाहना अपना ही अहित चाहना हे।

अखण्ड ब्रह्मचारी चाहे सो कर सकता हे। वह अकेला सारे ब्रह्माण्ड को हिला सकता हे। वह ब्रह्म का शीघ्र साक्षात्कार कर सकता हे।

छोटी बात को महत्व देना और बडी को भूल जाना, बस यही से मूर्खता आरम्भ होती है।

जो वीर्यरूपी राजा को अपने काबू मे कर लेता हे वह समस्त ससार पर अपना दावा रख सकता हे।

उसके मुख–मण्डल पर विचित्र तेज चमकता हे। उसके नेत्रो से अद्‌भुत ज्योति टपकती हे। उसमे एक प्रकार की अनोखी क्षमता होती हे। वह प्रसन्न, नीरोग और प्रमोदमय जीवन का धनी होता हे। उसके धन के सामने चादी–सोने के टुकडे किसी गिनती मे नही हैं।

फाल्गुण कृष्णा 13

वीर्य हमारा मा–बाप हे। वीर्य हमारा ब्रह्म हे। वीर्य हमारा तेज हे। वीर्य हमारा सर्वस्व है। जो मूर्ख अपने सर्वस्व का नाश कर डालता हे उसके बराबर हत्यारा दूसरा कौन हे?

वीर्यरक्षा की साधना करने वाले को अपनी भावना पवित्र बनाये रखने की बडी आवश्यकता हे। वह कुत्सित विचारो को पास न फटकने दे।

सदा शुद्ध वातावरण मे रहना, शुचि विचार रखना आहार–विहार सबधी विवेक रखना ब्रह्मचर्यके साधक के लिए अतीव उपयोगी है। ऐसा किये बिना वीर्य की भलीभाति रक्षा होना सम्भव नही।

लोग धर्म का फल तत्काल देखना चाहते है और जब वह तत्काल नही मिलता तो धर्म पर अनास्था करने लगते है। ऐसे लोगो से तो किसान ही अधिक बुद्धिमान् है जो भविष्य पर आशा बाधकर घर का अनाज खेत मे फैक देता है। उसे अनेकगुना फल मिलता है और उसी पर मनुष्यसमाज का जीवन टिका है।

फाल्गुन कृष्णा 14

एक बूढा हाथ मे माला लेकर परमात्मा का नाम जप रहा था। इतने मे किसी ने उसे गालिया देना शुरू किया। तब बूढा कहने लगा–'देखता नही, मै परमात्मा का नाम जप रहा हू। मेरा परमात्मा तेरा नाश कर देगा।'

गाली देने वाला बोला–'परमात्मा क्या तेरा ही है? मेरा नही? वह तो मेरा भी है इसलिए तेरा सर्वनाश कर देगा।'

अब परमात्मा किसका पक्ष लेगा और किसका नाश करेगा?

इस प्रकार की अज्ञानपूर्ण बातो से ही युवको को धर्म और ईश्वर के प्रति उपेक्षा होती है और इसी कारण वे इनका बहिष्कार करने पर उतारू हो जाते है। ऐसा करना युवको की भूल है पर ईश्वर और धर्म का दुरुपयोग करने वालो की भी कम भूल नही है।

मानवधर्म वह है जिस पर साम्प्रदायिकता का रग नही चढा है जिसे निसकोचभाव से सभी लोग स्वीकार करते है और जिसके बिना मनुष्य असस्कारी–पशुवत् कहलाता है।

फाल्गुन कृष्णा 30

एक जगह कुरान मे लिखा है–'ला तो अजे बोखल कुल्लाह।' [illegible]–हे मुहम्मद! दुनिया को विश्वास दिला दे कि अल्लाह की सन्तान को [illegible] नही। देखना चाहिए कि अल्लाह की सन्तान कोन हे? क्या हिन्दू [illegible] नही है? अकेले मुसलमान ही आर अल्लाह की सन्तान हो

तो अल्लाह सवका मालिक कैसे ठहरेगा? जव सारी दुनिया उसी की हे तो क्या हिन्दू ओर क्या मुसलमान–सभी उसी की सन्तान हें। अगर कोई मुसलमान किसी हिन्दू को सताता हे तो हिन्दू कहेगा–क्या तू अपने मालिक को जानता हे? तू अपने मालिक को सारी दुनिया का मालिक कहता हे तो क्या उसने किसी को सताने का हुक्म दिया हे? इसी प्रकार अगर कोई हिन्दू मुसलमान को सताता हे तो मुसलमान कहेगा–क्या तुम्हारे परमात्मा ने किसी को सताने की आज्ञा दी है? क्या तुम्हारा परमात्मा सारे ससार का स्वामी नहीं है? क्या मैं इस दुनिया मे नही हू जिसका वह स्वामी हे?

सच्चा गुरु वह है जो शिष्य बनाने के लिए किसी को झूठा प्रलोभन नही देता।

फाल्गुन शुक्ला 1

धर्म का पहला सबक हे–'समस्त प्राणियो को अपने समान समझो।' जो ऐसा समझकर अमल करेगा वह किसी के साथ वेर नही करेगा, अन्याय या छल–कपट से किसी को नही ठगेगा सभी को सुखी बनाने की चेष्टा करेगा।

शरीर हे तो उसका कोई कर्त्ता भी हे ओर उसका जो कर्त्ता हे वही आत्मा है। वह आत्मा अजर अमर, अविनाशी हे। आत्मा को जिस धर्म की आवश्यकता हे वही 'मानवधर्म कहलाता है।

जो लोग धर्म को समाज का वोझा समझते हें वे धर्म का सही अर्थ नही जानते। वास्तव मे धर्म के विना जीवन ही नही टिक सकता। आजकल के जो युवक सुधार करना चाहते हे उन्हे मे चेतावनी देना चाहता हू कि धर्महीन सुधार कल्याणकारी न होगा ओर वह समाज को घोर विनाश के गहरे गडहे मे पटक देगा।

फाल्गुन शुक्ला 2

प्राचीन काल मे पहले सूत्रत फिर अर्थत ओर फिर कर्मत शिक्षा दी जाती थी। अन्न किस प्रकार पेदा करना यह वात शब्द से, अर्थ से ओर अभ्यास से सिखाई जाती थी। इसी प्रकार की शिक्षा जीवन मे सार्थक होती ह। अभ्यासहीन पढाई मात्र पगु ह।

भारत का सद्भाग्य है कि यहा के किसान, धनवानो की तरह ठगविद्या नही सीखे है। अन्यथा भातरवर्ष को कितनी कठिनाइयो का सामना करना पडता?

छिपाने की चेष्टा करने से पाप घटता नही, वरन् बढता जाता है। पाप के लिए प्रकट रूप से प्रायश्चित्त करने वाला परमात्मा के सन्निकट पहुचता है।

सच्चा श्रीमान् वही है जो अपने आश्रित जनो को भी श्रीमान् बना देता है। परमात्मा अपने सेवक को भी परमात्मा बना देता है।

फाल्गुन शुक्ला 3

वचन और काया के पाप तो आप ही प्रकट हो जाते है पर मन के पापो को कौन जानता है? जब तक मन के पाप नही मिट जाते तब तक कैसे कहा जा सकता है कि मै अपराधी नही हू! निरपराध बनने के लिए मानसिक पापो को हटाना और आत्मा को सतत जागृत रखना आवश्यक है।

यह शरीर आत्मा के आसरे ही टिका है। शरीर मे जो कुछ होता है आत्मा की शक्ति के कारण ही होता है। यहा तक कि आख की पलक का ऊचा–नीचा होना भी आत्मा की शक्ति है। तुम आत्मा को चमडे के नेत्रो से नही देख सकते, किन्तु गहरा विचार करने पर विदित होगा कि आत्मशक्ति के द्वारा ही शरीर की समस्त क्रियाए होती है। जिस आत्मा की ऐसी महिमा है उसी मे तूने झूठ–कपट की विचित्र बाते घुसेड ली है। जैसे एक म्यान मे दो तलवार नही रह सकती उसी प्रकार झूठ–कपट से भरे आत्मा मे दिव्य बल–आत्मबल प्रकट नही हो सकता।

फाल्गुन शुक्ला 4

परमात्मा 'दीन दयालु' है। इसलिए उसकी प्रार्थना करने वाले को दीन बनाना होगा। 'दीन बने बिना 'दीन दयालु' की दया प्राप्त नही की जा सकती। अभिमानी की वहा दाल नही गलती।

बाहर के पापो को समझना सरल है किन्तु पाप के सूक्ष्म मार्ग को [illegible] निकालना बडा ही कठिन है। बाहर से हिसा आदि न करके ही अपने [illegible] निष्पाप मान बैठना भूल है।

सोने के पात्र मे ही सिहनी का दूध टिक सकता हे। इसी प्रकार योग्य पात्र मे ही प्रभु की शिक्षा ठहर सकती हे। अत प्रमाद और कषाय का परित्याग करके अन्त करण को ऐसा सुपात्र वनाओ कि उसमे परमात्मा की शिक्षा स्थायी रूप से ठहर सके।

सभी धर्म महान् हे किन्तु मानवधर्म उन सव मे महान् हे।

फाल्गुन शुक्ला 5

अवगुणो का नाश करने वाली क्रिया अवगुणो को छिपाने के लिए तो नही करता? हे आत्मा, ऐसी चालाकी करके अगर तू अपने आपको धोखा दे रहा हो तो अब यह चालाकी छोड दे। अब अवगुणो का नाश करने के लिए ही क्रिया कर। इसी मै तेरा सच्चा कल्याण है।

घर मे सफाई रखते हो सो ठीक, पर गली–कूचे की सफाई पर क्यो ध्यान नही देते? घर के सामने की गली की गन्दगी का क्या तुम्हारे चित्त पर और शरीर पर बुरा प्रभाव नही पडता?

काले कपडे पर लगा हुआ दाग जल्दी दिखाई नही देता इसी प्रकार जिनका हृदय पापो से खूब भरा है, उन्हे अपने पाप दिखाई नही देते। जैसे सफेद कपडे का दाग जल्दी दिखाई देने लगता है, उसी प्रकार जिसमे थोडा पाप हे वह अपने आपको बडा पापी मानता हे ओर अपना पाप परमात्मा के सामने पेश कर देता है।

फाल्गुन शुक्ला 6

रोग हो जाने पर रोग को कोसने से कोई लाभ नही होता। इसी प्रकार दु ख आ पडने पर दु ख को कोसना व्यर्थ हे। दु ख का मूल–पाप समझकर उसे उखाड फेकना ही उचित हे।

ज्ञानी ओर विवेकशील पुरुष कष्ट के अवसर पर तनिक भी नही घवराते। कष्टो को अपनी जीवन–परीक्षा मानकर वे उनका स्वागत करते हे ओर उनसे प्रसन्न होते हे। वह मानते हैं कि अगर हम कष्टो की इस परीक्षा मे उत्तीर्ण हो गए तो हमे परमात्मा की भक्ति का प्रमाण–पत्र अवश्य मिलेगा।

अन्याय अत्याचार या चोरी करके हाथो मे हथकडी पहनने वाला अपने कुल को कलकित करता है। मगर अत्याचार–अनाचार को दूर करने के लिए कदाचित् हथकडी–बेडी पहनना पडे तो समझना चाहिए कि हमे सेवा के आभूषण पहनने के लिए मिले है। सच्चे सेवको को यह आभूषण अधिक शोभा देते है।

फाल्गुन शुक्ला 7

परमात्मा की प्रार्थना से मेरी भावना को बहुत पुष्टि मिली है। प्रार्थना की शक्ति का मै स्वय साक्षी हू। अगर प्रार्थना द्वारा मै अपनी अपूर्णता दूर कर सका तो कृतकृत्य हो जाऊगा।

जब तक बाहर का रूप देखते हो तभी तक बेभान हो जाते हो, जब भीतर गोता मारोगे तो उसी वस्तु से घृणा हुए बिना नही रहेगी जिस पर मुग्ध होकर बेभान हो रहे हो।

एक दिन प्रात काल चिन्तन करते–करते विचार आया कि मैं जिनकी सहायता लेकर जीवन कायम रख रहा हू, उन्हे भूल जाना कितनी भयकर भूल होगी? जिनकी सहायता से यह शरीर चल रहा है उनका ऋण मै कब अदा कर सकूगा?

बाहरी वस्तुए ही मादक नही होती हृदय की भावना भी मद वाली होती है। अतएव मादक वस्तुओ के साथ ही साथ हृदय की उस भावना से भी बचते रहना चाहिए।

फाल्गुन शुक्ला 8

सब नये नियम खराब ही होते है या सब पुराने नियम खराब ही होते है यह कोई निश्चय नही है। जो नियम जीवन मे प्राण पूरने वाला हो उसे कायम रखकर जीवनविघातक तत्वो को दूर करने मे ही कल्याण है।

परमात्मा की कृपा पाप्त करने के लिए ही प्रार्थना करना चाहिए। जैसे किसान को धान्य के साथ घास–भूसा भी मिल जाता है उसी प्रकार परमात्मा की प्रार्थना से ईशकृपा के साथ सासारिक वस्तुए भी आप ही मिल जाती है।

तुम्हारा पेट भोजन से भर गया है फिर भी बची रोटी किसी गरीब को देने की भावना उत्पन्न न हो ओर सुखाकर रख छोडने की इच्छा हो तो समझ लो कि अभी तुम दूसरो को अपने समान नही समझते हो।

खाद बनाकर किसान गन्दगी का सदुपयोग करता हे। क्या तुम गालियो का आत्म–कल्याण मे उपयोग नही कर सकते?

फाल्गुन शुक्ला 9

निष्काम भावना से ओर सच्चे हृदय से की हुई सेवा कभी व्यर्थ नही होती। उसका प्रभाव दूसरो पर बिना पडे नही रहता।

आमद से अधिक खर्च करके ऋणी मत बनो। कदाचित् ऋणी बनना ही पडे तो मियाद से पहले ऋण चुकाओ। ऐसा न किया तो समझ लो कि इज्जत मिट्टी मे मिलने जा रही है।

प्रार्थना की अदभुत शक्ति पर जिसे विश्वास है, उसे प्रार्थना के द्वारा अपूर्व वस्तु प्राप्त होती है। बिना विश्वास के की जाने वाली प्रार्थना ढोग हे। अपने लिए जो हितकर है, दूसरो के लिए वही हितकर है। अपने लिए पाच और पाच दस गिनने वाला और दूसरो के लिए ग्यारह गिनने वाला विश्वासघात करता है, आत्मवचना करता हे और अपने को अपराधी बनाता है।

फाल्गुन शुक्ला 10

बारीकी के साथ प्रकृति का निरीक्षण किया जाय तो आत्मा को अपूर्व शिक्षा मिल सकती हे। फूल की नन्ही–सी पखुडी मे क्या तत्व रहा हुआ हे उसकी रचना किस प्रकार की है ओर वह क्या शिक्षा देती हे, इस पर गहरा विचार किया जाय तो आश्चर्य हुए बिना नही रहेगा।

दूसरे के मुह से गाली सुनकर अपना हृदय कलुषित मत होने दो। वह भीतर भरी हुई अपनी गन्दगी बाहर निकालता हे सो क्या इसलिए कि उसे तुम अपने भीतर डाल लो?

रोटी पकाते समय आग न इतनी तेज रखी जाती हे कि जिससे रोटी जलकर खाक हो जाए ओर न इतनी धीमी ही कि रोटी कच्ची रह जाए।

लोगो की अधिकाश शक्ति मानसिक चिन्ताओ की [illegible]
। हालाकि आत्मा मे अनन्त शक्ति है लेकिन लोग उसके [illegible]
ल गये है। आराम के बढते जाने वाले साधनो ने भी शक्ति का बहुत [illegible]
ास कर दिया है। लोग रेडियो सुनते-सुनते अपना स्वर तक भूल गए है।

फाल्गुन शुक्ला 12

कूडा–कचरा बाहर न फेकना और उसमे जीवो की उत्पत्ति होने देना अहिसा–धर्म की दृष्टि से योग्य नही है। अहिसा–धर्म क्षुद्र जीवो को उत्पन्न न होने देने की हिमायत करता है।

जेसे पोष्टिक पदार्थ शक्ति देते है उसी प्रकार निन्दा भी अगर उससे मनुष्य घबरा न जाय तो, शक्ति प्रदान करती है। मनुष्य के विकास मे निन्दा भी एक साधन है।

जब मै किसी श्रावक का घर देखता हू तो विचार आने लगता है–क्या सच्चे श्रावक का घर गन्दा रह सकता है? लोग कहते है–सफाई न

करना भगी का दोष हे। पर मे कहता हू–गन्दगी फेलाने वाला तो दोषी नहीं ओर सफाई करने वाला दोषी है, यह कहा का न्याय हे?

परमात्मा के प्रति निश्चल श्रद्धा रखने से श्रद्धावान स्वय परमात्मपद प्राप्त कर लेता है।

फाल्गुन शुक्ला 13

परमात्मा की प्रार्थना सद्भाव के साथ की जाय, किसी प्रकार का धोखा उसमे न हो तो आत्मा ससार की भूलभूलेया मे कभी भटके ही नही। प्रार्थना करते समय इस बात का ख्याल रखना चाहिए कि आत्मा की एक अशुद्धि दूर करने चले तो दूसरी अशुद्धि न आ घुसे।

बुद्धिसिद्धान्त ओर जीवनसिद्धान्त अलग–अलग वस्तुए हैं। अतएव बुद्धि के सिद्धान्त के साथ जीवन के सिद्धान्त का भी उपयोग करना चाहिए।

आज लोगो की बुद्धि बहिर्मुख हो गई हे। बुद्धि दृश्यमान पदार्थों को पकडने दौडती है। लेकिन बाह्य पदार्थो को पकडने से आत्मा की खोज नही हो सकती और न कल्याण ही हो सकता है।

ससार के समस्त सम्बन्ध कल्पना के खेल हे।

फाल्गुन शुक्ला 14

जिन ज्ञानियो ने अपनी बुद्धि अन्तर्मुखी बनाई हे, उनके मुह की ओर देखोगे तो पता चलेगा कि अमृतमय भावना के कारण उनका मुह कितना प्रफुल्लित और आनन्दित दिखाई देता हे। जिस दु ख को दुनिया पहाड–सा भारी समझती हे, वह सिर पर आ पडने पर भी जिस भावना का आसरा लेकर वे प्रसन्न ओर आनन्दमय बने रहते है, उस भावना की खोज करो।

सासारिक स्वार्थ की सिद्धि के लिए की जाने वाली प्रार्थना सच्ची शान्ति नही पहुचा सकती। अतएव किसी भी सासारिक कार्य मे शान्ति की कल्पना करके उसी शान्ति के लिए प्रार्थना करना छोडो। उस सच्ची शान्ति के लिए ईश्वर की प्रार्थना करो जिससे हृदय की समस्त उपाधिया दूर हो जाए ओर आत्मा को सच्चा सुख प्राप्त हो।

अधर्म की वृद्धि से धर्म मे नया जीवन आता–जाता हे। पाप के वढने से ज्ञानियो की महिमा वढती हे।

फाल्गुन शुक्ला 15

तुम्हारे कान पराई निन्दा लडाई सुनने के लिए उत्सुक रहते हे या परमात्मा का गुणगान सुनने के लिए? अगर निन्दा सुनने को उत्सुक रहते हे तो समझ लो कि तुम अब भी कुमार्ग पर हो।

अपनी आखे सफल करनी हो तो आखो द्वारा प्राणीमात्र को प्रभुमय देखो। जब सब प्राणी प्रभुमय दिखाई देने लगे तो समझना चाहिए कि आखे पाना सफल हो गया।

पापी, दुष्ट ओर दुरात्मा को भी अपने समान मानकर उसके भी उद्धार की भावना रखने वाला ही सद्गुरु है। उसे कोई माने या न माने, वह तो यही कहता हे—भाई, तू घवरा मत। तूने जो कुछ गवाया हे वह तो ऊपर—ऊपर का ही है। तेरी आन्तरिक स्थिति तो परमात्मा के समान ही हे।

असल मे सुखी वही है जिसने ममता पर विजय प्राप्त कर ली हे।

चैत्र कृष्णा 1

आत्मा ईश्वर की आभा हे। आत्मा न होता तो ईश्वर की चर्चा न होती। जो शक्ति ईश्वर मे हे वही सव आत्माओ मे भी हे। आत्मा की शक्ति आवरण है ईश्वर निरावरण हे।

अपने विरोधियो को कावू मे करने का ओर साथ ही उनके प्रति न्याय करने का अमोघ साधन अनेकान्तवाद हे। अनेकान्तवाद अपने विरोधियो को भी अमृतपान कराकर अमर वनाता हे। सीधी—सादी भाषा मे उसे समबुद्धि कह सकते है।

जब तक अहकार है तब तक भक्ति नही हो सकती। अहकार की भूमि मे परमात्मप्रेम का अकुर नही उगता। अहकार अपने प्रति घना आकर्षण [illegible] है और प्रेम मे उत्सर्ग चाहिए। अहकार मे मनुष्य अपने आपको [illegible] देखता है अपना आपा खोना नही चाहता और प्रेम मे आपा खोना [illegible] है। ऐसी दशा मे अहकार और प्रेम या भक्ति एक जगह कैसे रहेंगे?

मानने वालो को भ्रष्ट युवक कहते हैं। मगर गहरा विचार करने से जान पडता कि धर्म ओर ईश्वर का बहिष्कार करने वाले युवक ही अकेले अपराधी नही है, वरन् जो लोग अपने को धर्म का पालनकर्त्ता ओर रक्षणकर्त्ता मानते हैं किन्तु उसे ठीक रूप से पालन नही करते, उनका भी अपराध कम नहीं हे। लोग धर्म का ठीक तरह पालन करे तो विरोधियो को कुछ कहने की गुजाइश ही न रहे। धर्म और ईश्वर के सच्चे भक्तो की अमृतमयी दृष्टि का दूसरो पर प्रभाव पडे बिना नही रहता।

अगर कोई दूसरी भाषा हमारी मातृभाषा को सम्मानित करती हे अथवा उसकी सखी बनना चाहती है तो उस भाषा का भी सम्मान किया जायेगा। मगर जो भाषा हमारी मातृभाषा को दासी बनाने के लिए उद्यत हो रही हो उसे कैसे सन्मान दिया जा सकता हे?

चैत्र कृष्णा 3

तमाम धर्म मानवधर्म सीखने के साधन हे। जो धर्म मानव के प्रति तिरस्कार उत्पन्न करता है, मनुष्य को मनुष्य से जुदा करना सिखलाता हे, मानव को तुच्छ समझना सिखलाता है, वह धर्म नही हे। धर्म मे ऐसी बातो को स्थान नही है।

जैसे अबोध बालक साप को खिलोना समझकर हाथ मे उठा लेता है उसी प्रकार अज्ञानी पुरुष आत्मा के शत्रुओ को स्नेह के साथ गले लगाता हे।

परमात्मा के साक्षात्कार करने के अनेक उपाय बताये गये हे, लेकिन सबसे सरल मार्ग यही है कि आत्मा मे परमात्मा के प्रति परिपूर्ण प्रेम जागृत हो जाय। वह प्रेम ऐसा होना चाहिए कि किसी भी परिस्थति मे ईश्वर का ध्यान खण्डित न होने पावे।

हृदय के पट खोलो और जरा सावधानी से देखो तो तुम्हे अपना हृदय ही दयादेवी का मन्दिर दिखाई देगा।

चैत्र कृष्णा 4

आत्म विजय के पाच मन्त्रो का सक्षिप्त सार यह हे–

1 पहला मन्त्र–स्वतन्त्र बनो स्वतन्त्र बनाओ और स्वतन्त्र वने हुए महापुरुषो के चरण–चिन्हो पर चलो।

2 दूसरा मन्त्र–पराधीन मत बनो, पराधीन मत बनाओ, पराधीन का पदानुसरण मत करो।

3 तीसरा मन्त्र–सघशक्ति को सुदृढ बनाओ।

4 चौथा मन्त्र–सघशक्ति को पुष्ट बनाने के लिए विवेक–बुद्धि का उपयोग करो कदाग्रह के स्थान पर समन्वय को स्थान दो।

5 पाचवा मन्त्र–अपनी आत्मिकशक्ति मे दृढविश्वास रखो, बाहर की लुभावनी शक्ति का भरोसा मत करो। विजय की आकाक्षा मत त्यागो और विजय प्राप्त करते चलो।

किसी भी प्रकार की पराधीनता के आगे, चाहे वह सामाजिक हो या धार्मिक हो, नतमस्तक नही होना चाहिए। यही नही, साक्षात् ईश्वर की भी पराधीनता अगीकार करने योग्य नही है।

चैत्र कृष्णा 5

पनिहारी चलती है, बोलती है हसती है, तथापि वह कुम्भ को नही भूलती। इसी प्रकार–ससार व्यवहार करते समय भी ईश्वर का विस्मरण नही करना चाहिए।

मनुष्य धर्म का पालन करता है सो इसलिए नही कि वह अपने आपको ऊचा ठहराने की कोशिश करे बल्कि इसलिए कि वह वास्तव मे ऊचा बने। धर्मपालन का उद्देश्य वह उत्कृष्ट मनोदशा प्राप्त करना है जिसमे विश्वबन्धुत्व का भाव मुख्य होता है।

तुम्हारे लिए जो अनिष्ट है वह दूसरे के लिए भी अनिष्ट है। अगर [illegible] पानी नही पी सकते तो दूसरा मनुष्य भी उसे नही पी सकता। अगर [illegible] बीमारी मे दूसरो की सहायता चाहते हो तो दूसरा भी यही चाहता है।

[illegible] के बिना ज्ञान निष्फल है और ज्ञानहीन क्रिया अधी है।

चैत्र कृष्णा 6

[illegible] और सर्वोत्कृष्ट [illegible]

ईश्वर का भजन करने वाले दो तरह के होते है। एक ईश्वर के नाम की माला फेरने वाले ओर दूसरे ईश्वर की आज्ञा के अनुसार व्यवहार करने वाले। इन दो तरह के भक्तो मे से ईश्वर किस पर प्रसन्न होगा? ईश्वर की आज्ञा के अनुसार चलने वाले पर। ईश्वर की आज्ञा की अवहेलना करके उसके नाम की माला जप लेने मात्र से कल्याण नही हो सकता।

धर्म का नाम लेकर कर्त्तव्यपालन के समय कर्त्तव्यभ्रष्ट होने वाला, नीति–मर्यादा को भी तिलाजलि दे वैठने वाला धर्म के नाम पर ढोग करता है। वह धर्म का सम्मान नही करता–अपमान करता है।

माता पुत्र की सेवा करके उसे जन्म देने के पाप को दूर करती है।

चैत्र कृष्णा 7

जो सेवक निष्काम होता है, वेलाग रहता हे, उसकी सेवा से सभी वश मे हो जाते हे, भले ही वह ईश्वर ही क्यो न हो।

आपकी नजर मे वह नाचीज ठहरेगा, जिसके पास कोडी भी न होगी, लेकिन जिसने कौडी भी रखने की चाहना नही की, वही महात्मा है।

अगर आपका अस्तित्व शरीर से भिन्न न होता अर्थात् शरीर ही आत्मा होता तो मृतक शरीर ओर जीवित शरीर मे कुछ अन्तर ही न होता। जीवित और मृत शरीर मे पाया जाने वाला अन्तर यह सिद्ध कर देता हे कि शरीर से भिन्न कोई ओर तत्त्व है। वही सूक्ष्म तत्व आत्मा हे।

राष्ट्र की रक्षा मे हमारी रक्षा है ओर राष्ट्र के विनाश मे हमारा विनाश है।

चैत्र कृष्णा 8

जड को जड कहने वाला आत्मा है। आत्मा का अस्तित्व प्रमाणित करने वाला आत्मा है। यही नही, आत्मा का निषेध करने वाला भी आत्मा ही हे।

हे आत्मन्! शरीर तेरे निकट है, तेरा उपकारक है, सहायक हे, तू उसे खिलाता–पिलाता हे सशक्त बनाता है। इसीलिए क्या तू और शरीर मूलत एक हो जाएगे? अन्त समय स्थूल शरीर यही पडा रह जायेगा और तू अन्यत्र चला जायेगा। दोनो का स्वरूप अलग–अलग है। एक रूपी हे, दूसरा अरूपी हे। एक जड है, दूसरा चेतन है।

श्रद्धागम्य वस्तुतत्त्व केवल श्रद्धा से ही जाना जा सकता है। तर्क का उसमे वश नही चलता। तर्क तो वह तराजू है जिस पर स्थूल पदार्थ ही तोले जा सकते है। तर्क मे स्थिरता भी नही होती। वह पारे की तरह चपल है। सर्वत्र उसका साम्राज्य स्वीकार करने से मानवसमाज अत्युपयोगी और गूढ तत्त्व से अपरिचित ही रह जायेगा।

चैत्र कृष्णा 9

परमात्मा की प्रार्थना जीवन और प्राण का आधार है। प्रार्थना ही वह अनुपम साधन है जिसके द्वारा प्राणी आनन्दधाम मे स्वच्छन्द विचरण करता है। जो प्रार्थना प्राणरूप बन जाती है वह भले ही सीधी–सादी भाषा मे कही गई हो, सदैव कल्याणकारिणी होगी।

आनन्द आत्मा का ही गुण है। परपदार्थो के सयोग मे उसे खोजना भ्रम है। परसयोग जितना ज्यादा, सुख उतना ही कम होगा। परसयोग से पूर्णरूपेण छुटकारा पा जाने पर अनन्त आनन्द का आविर्भाव होता है।

पापी को अपनाना ही उसके पाप को नष्ट करना है। घृणा करने से उसके पाप का अन्त आना कठिन है। अगर उसे आत्मीय भाव से ग्रहण करोगे तो उसका सुधार होना सरल होगा। चाहे कोई ढेढ हो, चमार हो कसाई हो कैसा भी पापी क्यो न हो उसे सम्मानपूर्वक धर्मोपदेश श्रवण करने के लिए उत्साहित करना चाहिए।

चैत्र कृष्णा 10

चैत्र कृष्णा 11

भारत मे छह करोड आदमी भूखो मरते हैं। अगर चोवीस करोड भी प्रतिदिन भोजन करते है तो अगर वे भगवान् महावीर की आज्ञा के अनुसार महीने मे छह पूर्ण उपवास कर ले तो एक भी आदमी भूखा न रहे।

सघ–शरीर के सगठन के लिए सर्वस्व का त्याग करना भी कोई बडी बात नही हे। सघ के सगठन के लिए अपने प्राणो का उत्सर्ग करने मे भी पीछे पैर नही रखना चाहिए। सघ इतना महान् हे कि उसके सगठन के हेतु आवश्यकता पडने पर पद ओर अहकार का मोह न रखते हुए, इन सबका त्याग कर देना श्रेयस्कर हे।

न जाने अस्पृश्यता कहा से ओर कैसे चल पडी हे, जिसने भारतीय जनसमाज की एकता को छिन्न–भिन्न कर दिया ओर जो भारतवर्ष के विकास मे बडी बाधा बनी हुई हे। इससे समाज का उत्थान कठिन हो गया है। अब लोग अस्पृश्यता को धर्म का अग समझने लगे हैं।

चैत्र कृष्णा 12

भारत ही अहिसा का पाठ सीखा सकता हे, किसी दूसरे देश की सस्कृति मे यह चीज ही नजर नही आती। बन्धुता का जन्म भारत मे ही हुआ है। भारतीय स्त्रियो ने ही शान्ति ओर प्रसन्नता के साथ लाठियो की मार खाकर दुनिया को अहिसा की महत्ता दिखलाई हे। ऐसी क्षमता किसी विदेशी नारी मे है?

सघ शरीर के समान है। साधु उसके मस्तक हे, साध्विया भुजाए हे, श्रावक उदर के स्थान पर हे और श्राविकाए जघा हे। जब तक सब अवयव एक–दूसरे के सहायक न बने तब तक काम नही चलता।

मस्तक मे ज्ञान हो, भुजा मे बल हो, पेट मे पाचनशक्ति हो ओर जघा मे गतिशीलता हो तो अभ्युदय मे क्या कसर रह जाएगी?

तन और धन से मोह हटा लेने से वह कही चले नही जाते, किन्तु उन पर सच्चा स्वामित्व प्राप्त होता है।

चैत्र कृष्णा 13

अहिसा देवी की वात्सल्यमयी गोदी मे जब प्रत्येक राष्ट्र सन्तान की भाति लोटेगा तभी उसमे सच्चा बन्धुत्व पनप सकेगा। अहिसा भगवती ही बन्धुत्व का अमृत सचार कर सकती है। अहिसा माता के अतिरिक्त और किसी का सामर्थ्य नही कि वह बन्धुभाव का प्रादुर्भाव कर सके और आत्मीयता का विभिन्न राष्ट्रो एव विभिन्न जातियो मे सबध स्थापित कर सके।

जो स्त्री अपने सतीत्व को हीरे से बढकर समझती है, उसकी आखो मे तेज का ऐसा प्रकृष्ट पुज विद्यमान रहता है कि उसका सामना होते ही पापी की निर्बल आत्मा थर–थर कापने लगती है।

ऐ रोने वालो! कही रोने से भी बेटा मिलता है? महावीर के शिष्यो मे वीरता होनी चाहिए। लेकिन वीरता की जगह नपुसकता क्यो दिखाई देती है? नपुसकता के बल पर धर्म नही दिपाया जा सकता।

चैत्र कृष्णा 14

ससार रक्तलीला से घबराया हुआ है। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य का एक जाति दूसरी जाति का और एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र का गला काटते–काटते घबरा चुका है। विश्व के इतिहास के पन्ने रक्त की लालिमा से रगे हुए हैं। दुनिया की प्रत्येक मौजूदा शासनपद्धति खून–खच्चर की भयावह स्मृति है। कौन–सा राज्य है जिसकी नीव खून से न सीची गई हो? कौन–सी सत्ता है जो मनुष्य का खून पिये बिना मोटी–ताजी बन गई हो? आज सारा ससार [illegible] विनाश और सहार के बल पर सचालित हो रहा है। यह स्थिति घबराहट पैदा करने वाली है। आखिर मनुष्य यह स्थिति कब तक [illegible] रहेगा?

चैत्र कृष्णा 30

लोग समय का ठीक–ठीक विभाग नही करते इस कारण उनका जीवन अस्तव्यस्त हो रहा है। दिन–रात के चौवीस घटे होते हे। नीद लिए बिना काम नही चल सकता, अतएव छह घटे नीद मे गये। बिना आजीविका के भी काम नही चलता, इसलिए छह घटे आजीविका के निमित्त निकल गये। शेष बारह घटे बचे। इनमे से छह घटे आहार–विहार, स्नान आदि मे व्यय हो गये, क्योकि इनके बिना भी जीवन–निर्वाह नही हो सकता। तब भी छह घटे बचे रहते है। यह छह घटे आप मुझे दे दीजिए। इतना समय नही दे सकते तो चार ही घटे दीजिए। यह भी न हो सके तो दो ओर अन्तत कम से कम एक घटा तो दे ही दीजिए। इतना समय भी धर्म–कार्य मे न लगाया तो अन्त मे घोर पश्चात्ताप ही हाथ लगेगा।

जो शस्त्र का प्रयोग करता है उसे शस्त्र का भय बना ही रहता है। इसके विपरीत जो शस्त्र रखता ही नही, जो शस्त्रो द्वारा दूसरो को भयभीत नही करता उसे शस्त्र भयभीत नही कर सकते। इतना ही नही जिसने शस्त्रमय पर विजय प्राप्त कर ली है उसके सामने शस्त्र भौथरे हो जाते हैं।

चैत्र शुक्ला 1

जिसे किसी प्रकार का लडाई–झगडा नही हे, उनसे क्षमायाचना करके परम्परा का पालन कर लिया जाय और जिनसे लडाई हे जिनके अधिकारो का अपहरण किया है, अधिकारो के अपहरण के कारण जिन्हे घोर दु ख पहुचा हे ओर उन अधिकारो को सिपुर्द कर देने से उन्हे आनन्द होता है उन लोगो को उनके उचित अधिकार न लोटाकर ऊपर से क्षमा माग लेना उचित नही हे। ऐसा करना सच्ची क्षमायाचना नही है।

ससार की सर्वश्रेष्ठ शक्तियो ने अपना सम्पूर्ण बल लगा कर युद्ध किया परन्तु फल क्या हुआ? क्या वेर का अन्त हुआ? नही, बल्कि वेर की वृद्धि हुई हे। भौतिक वल के प्रयोग का परिणाम इसके अतिरिक्त ओर कुछ हो ही नही सकता।

वहिनो! तुम जगत् की जननी हो ससार की शक्ति हो तुम्हारे–सदगुणो के सारभ से जगत सुरभित हे। तुम्ही समाज की पवित्रता ओर उज्ज्वलता कायम रख सकती हो।

चैत्र शुक्ला 2

बहिनो! शील का आभूषण तुम्हारी शोभा बढाने के लिए काफी है। तुम्हे और आभूषणो का लालच नही होना चाहिए। आत्मा की आभा बढाओ। मन को उज्ज्वल करो। हृदय को पवित्र भावनाओ से अलकृत करो। इस मासपिड(शरीर) की सजावट मे क्या पडा है? शरीर का सिगार आत्मा को कलकित करता है। तुम्हारी सच्ची महत्ता और पूजा शील से होगी।

यदि आप धनिको के पापो को और आजीविका के निमित्त पाप करने वालो के पापो को न्याय की तराजू पर तोलेगे तो धनिको के पापो का ही पलडा नीचा रहेगा। उनके पापो की तुलना मे गरीबो के पाप बहुत थोडे से मालूम पडेगे।

युद्ध की समाप्ति का अर्थ है विरोधी पक्षो मे मित्रता की स्थापना हो जाना—शत्रुता का समाप्त हो जाना। युद्धभूमि के बदले अन्त करण मे लडा जाने वाला युद्ध समाप्त हुआ नही कहलाता।

चैत्र शुक्ला 3

परस्त्रीगामी पुरुष नीच से नीच है और देश मे पाप का खप्पर भरने वालो मे अगुवा है। ऐसे दुष्ट लोग अपना ही नाश नही करते वरन् दूसरो का भी सत्यानाश करते है। इन हत्यारो की रोमाचकारिणी करतूतो को सुनकर हृदय थर्रा उठता है। दुनिया की अधिकाश बीमारिया फैलाने वाले यही [illegible]

चैत्र शुक्ला 4

दु ख एक प्रकार का प्रतिकूल सवेदन है। जिस घटना को प्रतिकूल रूप मे सवेदन किया जाता हे वही घटना दु ख बन जाती हे। यही कारण है कि एक ही घटना विभिन्न मानसिक स्थितियो मे विभिन्न प्रभाव उत्पन्न करती है।

दया मे घृणा को कतई स्थान नही है। अन्त करण मे जब दया का निर्मल स्रोत बहने लगता है तब घृणा आदि के दुर्भाव न जाने किस ओर बह जाते है।

विलासमय जीवन व्यतीत करके विलास की ही गोद मे मरने वाला उस कीट के समान है जो अशुचि मे ही उत्पन्न होकर अन्त मे अशुचि मे ही मरता है।

पुत्र को जन्म देना एक महान् उत्तरदायित्व अपने सिर पर लेना हे। पुत्र को जन्म देकर उसे सुसस्कारी न बनाना घोर नैतिक अपराध है।

चैत्र शुक्ला 5

जिन्होने परमहस की वृत्ति स्वीकार करके, स्व–परभेद–विज्ञान का आश्रय लेकर अपनी आत्मा को शरीर से पृथक् कर लिया हे, जो शरीर को भिन्न ओर आत्मा को भिन्न अनुभव करने लगते हे उन्हे शारीरिक वेदना विचलित नही कर सकती।

दया कहती हे–जहा कही दुखिया को देखो वही मेरा मन्दिर समझ लो। दुखिया का मन ही मेरा मन्दिर हे। मे ईट ओर चूने के कारागार मे केद नही हू। जड पदार्थो मे मेरा वास नही हे। मे जीते–जागते प्राणियो मे वास करती हू।

परमात्मा ओर दया का कहना हे कि दु खी को देखकर जिसका हृदय न पसीजे जिसके हृदय मे मृदुता या कोमलता न आवे वह यदि मुझे रिझाना चाहता हे तो में केसे रीझ सकता हू?

गरीबा पर घृणा आना ही नरक हे।

चैत्र शुक्ला 6

दया का दर्शन करना हो तो गरीब और दु खी प्राणियो को देखो। देखो न केवल नेत्रो से वरन् हृदय से देखो। उनकी विपदा को अपनी विपदा समझो ओर जैसे अपनी विपदा निवारण करने की चेष्टा करते हो वैसे ही उनकी विपदा निवारण करने के लिए यत्नशील बनो।

वह व्यापारी कितना आदर्श है जो सिर्फ समाज—सेवा के लिए ही व्यापार करता है? आनन्द श्रावक ने पहले गरीबो से लेकर फिर दान देने के बदले नफा न लेने का प्रण करना ही उचित समझा, जिससे किसी को अपनी हीनता न खटके, किसी के गौरव को क्षति न पहुचे और कोई अपने आपको उपकृत समझकर ग्लानि का अनुभव न करे।

दया देवी की अनुपस्थिती मे ज्ञान अज्ञान कहलाता हे। इन्द्रियदमन करना ही सच्चा ज्ञान है। इसके बिना ज्ञान निरर्थक हे—बोझ हे, जो उलटी परेशानी पैदा करके मनुष्य का शत्रु बन जाता है।

चैत्र शुक्ला 7

जब दया देवी ज्ञान—सिह पर आरूढ होकर और तप का त्रिशूल लेकर प्रकट होगी तब वह अपने विरोधी दल को—अज्ञान, असयम आलस्य आदि को —कैसे बचा रहने देगी?

अहिसा का पालन करो। जीवन को सत्य से ओतप्रोत बनाओ। जीवन—रूपी महल की आधारशिला अहिसा ओर सत्य हो। इन्ही की सुदृढ नींव पर अपने अजेय जीवन—दुर्ग का निर्माण करो। विलासिता तजो। सयम और सादगी को अपनाओ।

लोगो ने समझ रखा है कि यदि पैसा नही कमाना है तो फिर व्यापार [illegible] ऐसा सोचने वाले व्यक्तिगत स्वार्थ से आगे कुछ नही [illegible]

नामनिशान तक न हो, उस दुनिया की कल्पना करो। वह नरक से भला क्या अच्छी हो सकती हे।

मनमाना खाना तो सही पर व्यापार न करना धर्म को कलकित करना है। परिश्रम त्याग कर परिश्रम के फल को अनायास भोगने का उपदेश धर्म नही देता। धर्म अकर्मण्यता नही सिखाता। धर्म हरामखोरी का विरोध करता है।

कपटनीति से काम लेने वाले की विजय कभी न कभी पराजय के रूप मे परिणत हुए बिना नही रहेगी। वह अपने कपट का आप ही शिकार बन जायेगा।

मेरी एकमात्र यही आकाक्षा है कि मेरे अन्त करण की मलीमन बासनाओ का विनाश हो जाय।

चैत्र शुक्ला 9

असत्य साहसशील नही होता। वह छिपना जानता है, बचना चाहता है क्योकि असत्य मे बल नही होता। निर्बल का आश्रय लेकर कोई कितना निर्भय हो सकता है?

सत्य अपने आप मे बलशाली है। जो सत्य को अपना अवलम्बन बनाता है—सत्य के चरणो मे अपने प्राणो को सोप देता हे, उसमे सत्य का बल आ जाता है और वह इतना सबल बन जाता हे कि विघ्न ओर बाधाए उसका पथ रोकने मे असमर्थ सिद्ध होती हैं। वह निर्भय सिह की भाति नि सकोच होकर अपने मार्ग पर अग्रसर होता चला जाता हे।

आत्मा जब अपने समस्त पापो को नष्ट कर डालता हे, उसकी समस्त ओपाधिक विकृतिया नष्ट हो जाती हे ओर जब वह अपने शुद्ध स्वभाव मे आ जाता हे, तव आत्मा ही परमात्मा या ईश्वर बन जाता हे। जेनधर्म का यह मन्तव्य हे इसलिए जेनधर्म चरमसीमा का विकासवादी धर्म हे। वह नर के सामने ईश्वरत्त्व का लक्ष्य उपस्थित करता हे।

चैत्र शुक्ला 10

जिसके प्रति हमारी आदरवुद्धि होती हे उसी के गुणो का अनुकरण करन की भावना हम म जागृत होती हे आर शने शने वही गुण हमारे भीतर

आ जाते है। उसी के आचरण का अनुसरण किया जाता हे। इस दृष्टि से जिसकी निष्ठा परमात्मा मे प्रगाढ़ होगी उसके सामने परमात्मा का ही सदा आदर्श बना रहेगा ओर वह उन्ही के आचार–विचार का अनुकरण करेगा। इससे उसे परमात्मपद की पाप्ति हो सकेगी।

धर्म की उपासना करने पर भी कदाचित् कोई कामना सिद्ध न हो, तो भी धर्म निरर्थक नही जाता। धर्म अमोघ हे। धर्म का फल कब ओर किस रूप मे प्राप्त होता है, यह बात छद्मस्थ भले ही न जान पावे, फिर भी सर्वज्ञ की वाणी सत्य है। धर्म निष्फल नही है।

आध्यात्मिक विचार के सामने तर्क–वितर्क का कोई मूल्य नही है। यह विश्वास का विषय है। हृदय की वस्तु का मस्तिष्क द्वारा निरीक्षण–परीक्षण नही किया जा सकता।

चैत्र शुक्ला 11

आपको भगवान् से अभीष्ट भिक्षा तभी मिलेगी जब आप सत्य और सरलभाव से उससे प्रार्थना करेगे। अगर आप उसके साथ छलपूर्ण व्यवहार करेगे तो आपके लिए भी छल ही प्रतिदान है। परमात्मा के दरबार मे छल का प्रवेश नही। छल वहा से सीधा लौटता हे और जहा से उसका उद्भव होता हैं वही आकर विश्राम लेता है।

धर्मनीति का आचरण करना ओर कराना और उसके द्वारा विश्व मे शान्ति का प्रसार करना तथा जीवन को क्षुद्र उद्देश्यो के ऊपर, उन्नत आदर्श की ओर ले जाना साधुओ का उद्देश्य हे। लेकिन गाधीजी ने राजनीति का धर्मनीति के साथ समन्वय करने का प्रशस्त प्रयास किया है। उन्होने प्रजा एव राजा के खून से लिप्त वारागना के समान छल–कपट द्वारा अनेक रूपधारिणी ओर प्रलयकारिणी राजनीति के स्वभाव मे साम्यभाव और सरलता लाने का प्रयोग किया हे। अगर यह प्रयोग सफल होता है तो यह धर्म की महान् सफलता होगी। धर्म की इस सफलता से साधु यदि प्रसन्न न होगे तो और कोन होगा?

चैत्र शुक्ला 12

चिन्ताओ से ग्रस्त होकर–दु ख से अभिभूत होकर ईश्वर की भक्ति करने वाला भक्त 'आर्त्त' कहलाता है। किसी कामना से प्रेरित होकर भक्ति करने वाला 'अर्थार्थी' हे। ईश्वरीय स्वरूप को साक्षात् करने और उसे जानने के लिए भक्ति को साधन बनाकर भक्ति करने वाला 'जिज्ञासु' कहा जाता हे और आत्मा तथा परमात्मा मे अभेद मानकर–दोनो की एकता निश्चित कर–भक्ति करने वाला'ज्ञानी' है।

भरोसा रखो, तुम्हारी समस्त आशाए धर्म से पूरी होगी ओर जो आशाए धर्म से पूरी न होगी वे किसी और से भी पूरी न हो सकेगी।

आम को सीचने से भी यदि आम फल नही देता तो बबूल को सीचो भले, पर आम्रफल तो उससे नही ही मिल सकेगे।

तुम बाहर के शत्रुओ को देखते हो, पर भीतर जो शत्रु छिपे बेठे हें, उन्हे क्या नही देखते? वही तो असली शत्रु हे।

चैत्र शुक्ला 13

सम्भव है कि जिस कार्य मे तुम सफलता चाहते हो उस कार्य की सफलता से तुम्हारा अहित होता हो ओर असफलता मे ही हित समाया हो। ऐसे कार्यो मे रुकावट पड जाने मे ही कल्याण हे। ऐसी अवस्था मे धर्म पर अश्रद्धा मत करो।

माता–पिता का अपनी सन्तान पर असीम उपकार हे। भला, जिन्होने तन दिया हे, तन को पाल–पोस कर सबल किया हे, जिन्होने अपना सर्वस्व सोप दिया हे उनके उपकार का प्रतिकार किस प्रकार किया जा सकता हे?

माता का हृदय बच्चे से कभी तृप्त नही होता। माता के हृदय मे बहने वाला वात्सल्य का अखण्ड झरना कभी सूख नही सकता। वह सदेव प्रवाहित होता रहता हे।

माता का प्रेम सदेव अतृप्त रहने के लिए हे ओर उसकी अतृप्ति मे ही शायद जगत की स्थिति हे। जिस दिन मातृ हृदय सन्तान–प्रेम से तृप्त हो जायगा उस दिन जगत म प्रलय हो जायेगा।

चैत्र शुक्ला 14

वेद्यो हकीमो ओर डाक्टरो की सख्या मे दिनोदिन जो वृद्धि हो रही हे, उसका प्रधान कारण भोजन के प्रति असावधान रहना ही है। भोजन जीवन का साथी बन गया है, अतएव भोजन ने अपने साथी रोग को भी जीवन का सहचर बना रखा हे। लोग खाने मे गृद्ध हे और शरीर को चिकित्सको के भरोसे छोड रखा है।

सन्देह आग के समान है। जब वह हृदय मे भडक उठता है तो मनुष्य की निर्णायक शक्ति उसमे भस्म हो जाती है और मनुष्य किकर्त्तव्य–विमूढ हो जाता हे। अतएव सशय का अकुर फूटते ही उसे शीघ्र समाधान द्वारा हटा देना उचित हे। समय पर सशय न हटाया गया तो उससे इतनी अधिक कालिमा फेलती हे कि अन्त करण अन्धकार से पूरित हो जाता हे ओर आत्मा का सहज प्रकाश उसमे कही विलीन हो जाता है।

होनहार के भरोसे पुरुषार्थ त्याग देना उचित नही हे। पुरुषार्थ के विना कार्य की सिद्धि नही होती।

चैत्र शुक्ला 15

वस्तुत ससार मे अपना क्या है? जिसे अपना मान लिया वही अपना है। जिसे अपना न समझा वह पराया है। जो कल तक पराया था वही आज अपना बन जाता है और जिसे अपना मानकर स्वीकार किया जाता हे वह एक क्षण मे पराया बन जाता हे। अपने–पराये की व्यवस्था केवल मन की [illegible] है।

वैशाख कृष्णा 1

राज्यरक्षा ओर धर्मरक्षा मे सर्वथा विरोध नही हे। कोई यह न कहे कि हम धर्म की आराधना करने मे असमर्थ हें, क्यो कि हमारे ऊपर राज्य की रक्षा का उत्तरदायित्व है।

तप मे क्या शक्ति है सो उनसे पूछो जिन्होने छह–छह महीने तक निराहार रहकर घोर तपश्चरण किया है और जिनका नाम लेने मात्र से हमारा हृदय निष्पाप और निस्ताप बन जाता है।

तप मे क्या बल है, यह उस इन्द्र से पूछो जो महाभारत के कथनानुसार अर्जुन की तपस्या को देखकर काप उठा था।

जो स्वेच्छा से, समभाव के साथ कष्ट नहीं भोगते, उन्हे अनिच्छा से, व्याकुलता–पूर्वक कष्ट भोगना पडता हे। स्वेच्छा से कष्ट भोगने मे एक प्रकार का उल्लास होता है और अनिच्छापूर्वक कष्ट भोगने मे एकान्त विषाद होता है। स्वेच्छापूर्वक कष्ट सहने का परिणाम मधुर होता है ओर अनिच्छा से कष्ट सहने का नतीजा कटुक होता है।

वैशाख कृष्णा 2

धर्मशास्त्र का कार्य किसी कथा को ऐतिहासिक स्थिति पर पहुचाना नही हे। अतएव धर्मकथा को धर्म की दृष्टि से ही देखना चाहिए इतिहास की दृष्टि से नही। धर्मकथा मे आदर्श की उच्चता ओर महत्ता पर बल दिया जाता हे ओर जीवन–शुद्धि उसका लक्ष्य होता हे। इतिहास का लक्ष्य इससे भिन्न हे। जेसे स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमो का परिज्ञान करने मे दर्शनशास्त्र निरुपयोगी हे ओर दार्शनिक दक्षता प्राप्त करने के लिए आयुर्वेद अनावश्यक ह इसी प्रकार इतिहास की घटनाए जानने के लिए धर्मशास्त्र ओर जीवनशुद्धि के लिए इतिहास आवश्यक हे।

मनुष्य इधर–उधर भटकता हे–भोतिक पदार्थो को जुटाकर बलशाली बनना चाहता हे लेकिन वह बल किस काम आएगा? अगर आख मे शक्ति नही ह तो चश्मा लगाने स क्या होगा?

तप क अभाव म सदाचार भ्रष्ट हो जाता हे।

वैशाख कृष्णा 3

हे गरीब, तू चिन्ता क्यो करता है? जिसके शरीर मे अधिक कीचड लगा होगा वह उसे छुडाने का अधिक प्रयत्न करेगा। तू भाग्यशाली है कि तेरे पैर मे कीचड अधिक नही लगा है। तू दूसरो से ईर्ष्या क्यो करता है? उन्हे तुझसे ईर्ष्या करना चाहिए। पर देख, सावधान रहना अपने पैरो मे कीचड लगाने की भावना भी तेरे दिल मे न होनी चाहिए। जिस दिन जिस क्षण यह दुर्भावना पैदा होगी उसी दिन और उसी क्षण तेरा सोभाग्य पलट जाएगा। तेरे शरीर पर अगर थोडा–सा भी मेल है तो उसे छुटाता चल। उसे भार समझकर उसका सग्रह न किये रह।

प्रभो, मेने अब तक कुटुम्ब–परिवार आदि को ही अपना माना था लेकिन आज से–अभेदज्ञान उत्पन्न हो जाने पर–तेरी–मेरी एकता की अनुभूति हो जाने के पश्चात, मै तुझे ही अपना मानता हू। मेने अपने अन्तकरण मे सासारिक पदार्थो को स्थान दे रखा था। आज उन सब से उसे खाली करता हू। अब अपने हृदय के सिहासन पर तुझको ही विराजमान करूगा। अब वहा अन्य कोई भी वस्तु स्थान न पा सकेगी।

वैशाख कृष्णा 4

तप एक प्रकार की अग्नि है, जिसमे समस्त अपवित्रता, सम्पूर्ण कल्मष एव समग्र मलीनता भस्म हो जाती है। तपस्या की अग्नि मे तप्त होकर आत्मा सुवर्ण की भाति तेज से विराजित हो जाती है।

अरे जीव, तू अपने शरीर का भी नाथ नही है। शरीर का नाथ होता तो उस पर तेरा अधिकार होता। तेरी इच्छा के विरुद्ध वह रुग्ण क्यो होता? वेदना का कारण क्यो बनता? जीर्ण क्यो होता? अन्त मे तुझे निकाल बाहर क्यो करता?

कभी न भूलो कि दान देकर तुम दानीय व्यक्ति का जितना उपकार करते हो उससे कही अधिक दानीय व्यक्ति तुम्हारा(दाता का) उपकार करता है। वह तुम्हे दानधर्म के पालन का सुअवसर देता है, वह तुम्हारे ममत्व को घटाने या हटाने मे निमित्त बनता है। अतएव वह तुमसे उपकृत है तो तुम भी उससे कम उपकृत नही हो। दान देते समय अहकार आ गया तो तुम्हारा दान अपवित्र हो जाएगा।

वैशाख कृष्णा 5

अमुक युग की अमुक आवश्यकता की पूर्ति के लिए उत्पन्न की गई भावना मे ही जीवन की सम्पूर्ण सार्थकता नही है। उसके अतिरिक्त बहुत कुछ शाश्वत तत्व है, जिसकी सिद्धि मे जीवन की सर्वांगीण सफलता निहित है।

युगधर्म ही सब कुछ नही हे, वरन् शाश्वत धर्म भी है जो जीवन को भूत और भविष्य के साथ सकलित करता है। युगधर्म का महत्त्व काल की मर्यादा मे बधा है पर शाश्वत धर्म सभी प्रकार की सामयिक सीमाओ से मुक्त है।

अपने दान के बदले न स्वर्ग–सुख की अभिलाषा करो न दानीय पुरुष की सेवाओ की आकाक्षा करो, न यशकीर्ति खरीदो और न उसे अहकार की खुराक बनाओ।

बिना प्रेम के, ऊपरी भाव से गाई जाने वाली ईश्वर की स्तुति से कदाचित् सगीत का लाभ हो सकता है पर आध्यात्मिक लाभ नही हो सकता। तन्मयता के बिना स्तुति तोता का पाठ है।

वैशाख कृष्णा 6

तुम्हारे पास धन नही है तो चिन्ता करने की क्या बात हे? धन से बढकर विद्या, बुद्धि, बल आदि अनेक वस्तुए हे। तुम उनका दान करो। धनदान से विद्यादान और बलदान क्या कम प्रशस्त है? तुम्हारे पास जो कुछ अपना कहने को हे, उस सबका परित्याग कर दो–सब का यज्ञ कर डालो। इससे तुम्हारी आत्मा मे अपूर्व ओज प्रकाशित होगा। वह ओज आत्मबल होगा।

आत्मवल प्राप्त करने की सीधी–सादी क्रिया यह हे कि सच्चे अन्त करण से अपना वल छोड दो। अर्थात् अपने बल का जो अहकार तुम्हारे हृदय मे आसन जमाये वेठा है उसे निकाल बाहर करो, परमात्मा की शरण मे चले जाओ। परमात्मा से जो वल प्राप्त होगा वही आत्मबल होगा। जव तक तुम अपने वल पर–भोतिक बल पर निर्भर रहोगे तक तक आत्मबल प्राप्त न हो सकेगा।

निस्पृह होकर अपनी आत्मा की तराजू पर भगवान की वाणी तोलोगे ता उसकी सत्यता प्रकट हुए विना नही रहेगी।

वैशाख कृष्णा 7

तुम जो धर्मक्रिया करते हो वह लोक को दिखाने के लिए मत करो। अपनी आत्मा को साक्षी बनाकर करो निष्काम कर्त्तव्य की भावना से प्रेरित होकर करो। अपनी अमूल्य धर्मक्रिया को लौकिक लाभ के लघुतर मूल्य पर न बेच दो। चिन्तामणि रत्न को लोहे के बदले मत दे डालो।

मान–प्रतिष्ठा या यश के लिए जो दान दिया जाता है वह त्याग नही है। वह तो एक प्रकार का व्यापार है, जिसमे कुछ धन आदि देकर मान–सम्मान आदि खरीदा जाता है। ऐसे दान से दान का असली पयोजन सिद्ध नही होता। अहभाव या ममता का त्याग करना दान का उद्देश्य है।

जो वस्तु तुमसे विलग हो जाती या हो सकती है, वह तुम्हारी नही है। पर–पदार्थो के साथ आत्मीयता का सम्बन्ध स्थापित करना महान् भ्रम है। अगर 'मे' और 'मेरी की मिथ्या धारणा मिट जाय तो जीवन मे एक प्रकार की अलौकिक लघुता, निरुपम निस्पृहता और दिव्य शान्ति का उदय होगा।

वैशाख कृष्णा 8

तुम किसी भी घटना के लिए दूसरो को उत्तरदायी ठहराओगे तो राग–द्वेष होना अनिवार्य है अतएव उसके लिए अपने आप उत्तरदायी बनो। इस तरीके से तुम निष्पाप बनोगे, तुम्हारा अन्त करण समता की सुधा से आप्लावित रहेगा।

तुम समझते हो–'अमुक वस्तु हमारे पास है, अतएव हम उसके स्वामी हैं।' पर ज्ञानीजन कहते हैं–अमुक वस्तु तुम्हारे पास है इसी कारण तुम उसके गुलाम हो अतएव अनाथ हो।

आत्मबल मे अद्‌भुत शक्ति है। इस बल के सामने ससार का कोई भी बल नही टिक सकता। इसके विपरीत, जिसमे आत्मबल का सर्वथा अभाव है वह अन्यान्य बलो का अवलम्बन करके कृतकार्य नही हो सकता।

अगर तुम्हारा आत्मा इन्द्रियो का दास न होगा तो वह स्वय ही बुरे–भले काम की परीक्षा कर लेगा।

वैशाख कृष्णा 9

मृत्यु के समय अधिकाश लोग दु ख का अनुभव करते हैं। मृत्यु का घोर अन्धकार उन्हे विह्वल बना देता हे। बडे बडे शूरवीर योद्धा, जो समुद्र के वक्षस्थल पर क्रीडा करते हैं, विशाल जलराशि को चीर कर अपना मार्ग वनाते है और देवताओ की भाति आकाश मे विहार करते हे जिनके पराक्रम से ससार थर्राता है, वे भी मृत्यु के सामने कातर बन जाते हैं। लेकिन आत्मबल से सम्पन्न महात्मा मृत्यु का आलिगन करते समय रचमात्र भी खेद नही करते। मृत्यु उनके लिए सघन अन्धकार नही है, वरन् स्वर्ग—अपवर्ग की ओर ले जाने वाले देवदूत के समान है। इसका एकमात्र कारण आत्मबल ही है।

मृदुता एक महान् गुण है और वह मान पर विजय प्राप्त करने से आता है। जिसमे नम्रता होती है वही महान् समझा जाता हे।

हे पुरुष! अभिमान करना बहुत बुरा है। अभिमानी व्यक्ति को अपमान का दु ख भोगना पडता है और अभिमान का त्याग करने वाले को सन्मान मिलता हे।

वैशाख कृष्णा 10

आत्मबल ही सब बलो मे श्रेष्ठ हे। यही नही वरन् कहना भी अनुचित न होगा कि आत्मबल ही एकमात्र सच्चा बल हे। जिसने आत्मबल पा लिया उसे दूसरे वल की आवश्यकता ही नही रहती।

सम्यग्दृष्टि समस्त धर्मक्रियाओ का मूल हे। अन्य क्रियाए उसकी शाखाए हैं। मूल के अभाव मे शाखाए नही हो सकती। साथ ही मूल के सूख जाने पर शाखाए भी सूख जाती हैं। अतएव मूल का सुरक्षित होना आवश्यक है।

जो व्यक्ति अन्धो की तरह वस्तु के एक अश को स्वीकार करके अन्य अशो का सर्वथा निषेध करता हे ओर एक ही अश को पकड रखने का आग्रह करता हे वह मिथ्यात्व मे पड जाता हे।

लोभ का कहीं अन्त नही हे ओर जहा लोभ होता हे वहा पाप का पोषण होता ह।

वैशाख कृष्णा 11

भले आदमी के लिए उचित हे कि वह अपनी ही किसी बात के लिए हठ पकडकर न बैठ जाय। विवेक के साथ पूर्वापर का विचार करना और दूसरे के दृष्टिकोण को सहृदयता के साथ समझना आवश्यक है।

छल–कपट करने वाले को लोग होशियार समझते है परन्तु जब उसका ध्यान अपनी ओर जाता हे तो उसे पश्चात्ताप हुए बिना नही रहता। उस मर्मवेधी पश्चात्ताप से बचने का मार्ग है–पहले से ही सरलता धारण करना।

इन्द्रियो का निग्रह किस प्रकार किया जाय? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि पदार्थो के असली स्वरूप का विचार करके उन्हे निस्सार समझना चाहिए और उन निस्सार पदार्थो से विमुख होकर उनकी ओर इन्द्रियो को नही जाने देना चाहिए। साथ ही जिन कामो से आत्मा का कल्याण होता हो उन्ही कामो मे आत्मा को प्रवृत्त करना चाहिए। इन्द्रियो को वश मे करने का यही उपाय है।

वैशाख कृष्णा 12

जो लोग शुद्ध भावना के साथ परमात्मा का शरण ग्रहण करते हैं उनके लिए ससार क्रीडाधाम बन जाता हे। परमात्मा के शरण मे जाने पर दु खमय ससार भी सुखमय बन जाता है। अगर दु खमय ससार को सुखमय बनाना चाहते हो तो परमात्मा का तथा परमात्मा–प्ररूपित धर्म का आश्रय लो।

परमात्मा के नामसकीर्त्तनरूपी रत्न को तुच्छ वस्तु के बदले मे दे देना मूर्खता है। जो लोग नामसकीर्त्तन को अनमोल समझकर ससार के किसी भी पदार्थ के साथ उसकी अदल–बदल नही करते वही उसका महान् फल प्राप्त कर सकते हैं।

कोई भी बल चारित्रबल की तुलना नही कर सकता। जिसमे चारित्र का बल हे उसे दूसरे बल अनायास ही प्राप्त हो जाते है। राम के पास चारित्रबल के सिवाय ओर क्या था? चारित्रबल की बदोलत सभी बल उन्हे प्राप्त हो गए। इसके विरुद्ध रावण के पास सभी बल थे, मगर चारित्रबल के अभाव मे वे सब निरर्थक सिद्ध हुए।

वैशाख कृष्णा 13

जो वीतराग ओर वीतद्वेष हे वह शोकरहित हे। जेसे कमल की पाखुडी जल मे रहती हुई भी जल से लिप्त नहीं होती उसी प्रकार वीतराग ससार मे रहते हुए भी सासारिक दु खप्रवाह से लिप्त नहीं होते।

पर्वत से एक ही पेर फिसल जाय तो कोन कह सकता हे कितना पतन होगा? इसी प्रकार एक भी इन्द्रिय अगर काबू से वाहर हो गई तो कोन कह सकता है कि आत्मा का कितना पतन होगा?

जिसने ममता का त्याग कर दिया हो वही व्यक्ति जनसमाज का कल्याण कर सकता हे। अर्थलोभी व्यक्ति प्राय ससार का अहित करने मे प्रवृत्त रहता है।

सच्चा आनन्द धन मे नहीं, धन के त्याग करने मे हे। धन का त्यागी स्वय सुखी रहता हे ओर दूसरो को भी सुखी करता है।

वैशाख कृष्णा 14

जेसे अग्नि थोडे ही समय मे रुई के ढेर को भस्म कर देती हे उसी प्रकार क्रोध भी आत्मा के समस्त शुभ गुणो को भस्म कर देता हे। क्रोध उत्पन्न होने पर मनुष्य आखे होते हुए भी अन्धा बन जाता हे।

सवार घोडे को अपने काबू मे नही रखेगा तो वह नीचे पड जायेगा। इसी प्रकार इन्द्रियो पर काबू न रखने का परिणाम हे–आत्मा का पतन। इन्द्रियो का निग्रह करने से आत्मा का उद्धार होता हे ओर निग्रह न करने से पतन अवश्यभावी हे।

जहा निर्लोभता हे वहा निर्भयता हे। अतएव निर्भय बनने के लिए जीवन मे निर्लोभता को स्थान दो लोभ को जीतो।

जो मनुष्य मेत्रीपूर्ण आचार आर विवेकपूर्ण विचार द्वारा कषाय को जीतने का प्रयत्न करता हे वह कषाय को जीत सकता हे ओर विश्व मे शान्ति भी स्थापित कर सकता हे।

वैशाख कृष्णा 30

धन को परमात्मा के समान मानने वाले अर्थलोलुप लोगो की [illegible] ही यह ससार दु खी बना हुआ हे आर जिन्होने धन को धूल के समान [illegible] जिन्होंने [illegible]

मानकर उसका त्याग कर दिया हे उन निर्लोभ पुरुषो की ही बदोलत ससार सुखी हो सका हे अथवा हो सकता हे।

अगर तुम वास्तविकता पर विचार करोगे तो जान पडेगा कि लोभ का कही अन्त ही नही है। ज्यो–ज्यो धन बढता जाता हे त्यो–त्यो लोभ भी बढता जाता हे ओर ज्यो–ज्यो लोभ बढता जाता हे त्यो–त्यो पाप का पोषण होता जाता हे।

सत्य की पूजा की सामग्री के लिए साधारणतया एक कोडी भी नही खरचनी पडती। किन्तु कभी–कभी इतना अधिक आत्मत्याग करना पडता हे कि ससार का कोई भी त्याग उसकी बराबरी नही कर सकता।

मन, वचन और काय से सत्य का आचरण करना ही सत्य की पूजा हे।

वैशाख शुक्ला 1

लोग समझते हे कि सुमीते के साधन बढ जाने से हम सुखी हो गए हे, पर वास्तव मे इन साधनो द्वारा सुख नही बढा, परतन्त्रता ही बढी हे।

आत्मा ओर शरीर तलवार तथा म्यान की तरह जुदा–जुदा हे। तलवार ओर म्यान जुदा–जुदा हैं फिर भी तलवार म्यान मे रहती हे। इसी प्रकार आत्मा ओर शरीर भिन्न–भिन्न है पर आत्मा शरीर मे रहता है। आत्मा अमूर्त ओर अविनाशी हे। शरीर मूर्त ओर विनश्वर है।

तुम्ही कर्म के कर्त्ता और तुम्ही कर्म के भोक्ता हो। तुम स्वय अपना सुधार ओर बिगाड कर सकते हो। स्वभाव, काल आदि की सहायता तुम्हारे कार्य मे अपेक्षित अवश्य हे परन्तु कर्म के कर्त्ता तो तुम स्वय हो।

मन सव खराब कामो मे प्रवृत्त होने लगे तब उसे वहा से रोककर सत्कर्मो मे प्रवृत्त करना ही मन के निरोध का प्रारम्भ है।

वैशाख शुक्ला 2

अगर तुम परमात्मा को ओर अपनी आत्मा को सन्तुष्ट करना चाहते हो तो जेसा कहते हो वेसा ही आचरण करके दिखलाना चाहिए। कथनी और करनी मे भिन्नता रखने से जीवन–व्यवहार ठीक तरह नही चल सकता।

जीभ का उपयोग अगर परमात्मा का भजन करने मे किया जा सकता हे तो फिर दूसरे सासारिक कार्यो मे उसका दुरुपयोग करने की क्या आवश्यकता है?

परमात्मा तीन भुवन के नाथ हैं अर्थात् समस्त जीवो के स्वामी हैं। अतएव जगत् के किसी भी प्राणी, भूतजीव तथा सत्व का अनादर न करना परमात्मा की प्रार्थना है। जिस प्रकार तुम्हे यह पसन्द नही हे कि कोई तुम्हे मारे, उसी प्रकार दूसरे प्राणियो को भी यह पसन्द नही है कि तुम उन्हे मारो। अतएव किसी को न मारना धर्म है।

वैशाख शुक्ला 3

जेसा व्यवहार तुम अपने लिए पसन्द नही करते वेसा व्यवहार तुम दूसरो के साथ भी मत करो। इतना ही नही, बल्कि अगर तुम्हारी शक्ति हे तो उस शक्ति का उपयोग दूसरो की सहायता के लिए करो।

मोतियो की माला पहिनकर लोग फूले नही समाते, परन्तु उससे जीवन का वास्तविक कल्याण नही हो सकता। वीरवाणी रूपी अनमोल मोतियो की माला अपने गले मे धारण करने वाले ही अपने जीवन को कल्याणमय बना सकते हे।

किसी का अभिमान सदा नही टिक सकता। जब राजा रावण का भी अभिमान न टिक सका तो फिर साधारण आदमी का अभिमान न टिकने मे आश्चर्य ही क्या हे!

जीवन को नीतिमय, प्रामाणिक, धार्मिक तथा उन्नत बनाने के लिए सर्वप्रथम सत्यमय बनाना आवश्यक हे।

वैशाख शुक्ला 5

जेसे वालक कपटरहित होकर माता–पिता के सामने सव वात खोलकर कह देता है उसी प्रकार जो पुरुष अपना समस्त व्यवहार निष्कपट होकर करता हैं वही वास्तव मे धर्म की आराधना कर सकता हे।

जव तक आत्मा ओर परमात्मा के वीच कपट का व्यवधान हे तव तक आत्मा परमात्मा नही वन सकता। पारस और लोहे के बीच जरा–सा अन्तर हो तो पारस लोह को सोना केसे वना सकता हे?

जेसे पृथ्वी के सहारे के विना वृक्ष आदि स्थिर नहीं रह सकते उसी पकार समस्त गुणो की आधारभूमिका मृदुता अर्थात विनयशीलता है। विनयशीलता के अभाव मे कोई भी गुण स्थिर नही रह सकता।

जो महापुरुष अपनी आत्मा को जीतकर जितात्मा अथवा जितेन्द्रिय बन जाता हे वह जगद्वन्दनीय हो जाता हे।

वैशाख शुक्ला 6

किसी विशिष्ट व्यक्ति को घर आने का आमन्त्रण तभी दिया जाता है जब अपना घर पहले से ही साफ कर लिया हो। घर साफ–सुथरा न हो तो महान् पुरुष को घर आने का निमन्त्रण नही दिया जाता। इसी प्रकार अगर अपने आत्म–मन्दिर मे परमात्मदेव को पधराना हो तो असत्य रूपी कचरे को बाहर निकाल देना चाहिए।

क्षत्रियत्व न रहने के कारण लोग तलवार चलाना तो भूल गये हैं किन्तु उसके बदले वचन–बाण चलाना सीख गये हे। वचन–वाण तलवार से भी ज्यादा तीखे होते है। वे तलवार की अपेक्षा अधिक गहरा घाव करते हैं।

सत्य का उपासक सत्य के समक्ष तीन लोक की सम्पदा को ही नही वरन् अपने प्राणो को भी तुच्छ समझता हे। किन्तु जो लोग किसी सम्प्रदाय, धर्म या मत के पीछे मतवाले बन जाते हैं और स्वार्थवश होकर सत्यासत्य का विवेक भूल जाते है, वे सत्य का स्वरूप नही समझ सकते। वे सत्य को अपने जीवन मे उतार भी नही सकते।

वैशाख शुक्ला 7

मन की समाधि से एकाग्रता उत्पन्न होती है, एकाग्रता से ज्ञानशक्ति उत्पन्न होती हे ओर ज्ञानशक्ति से मिथ्यात्व का नाश तथा सम्यग्दृष्टि प्राप्त होती हे।

सत्य एक व्यापक ओर सार्वभोम सिद्धान्त है। ससार मे विभिन्न मत हे ओर उनके सिद्धान्त अलग–अलग है। कुछ मतो के बाह्य सिद्धान्तो मे तो इतनी अधिक भिन्नता होती हे कि एक मतानुयायी दूसरे मत के अनुयायी से मिल भी नही सकता। यही नही, वरन् इन सिद्धान्तो को पकडे रखकर वे प्राय महायुद्ध मचा देते है। ऐसा होने पर भी अगर सब मतावलम्बी गम्भीरतापूर्वक

निष्पक्ष दृष्टि से विचार करे तो उन्हे मालूम होगा कि धर्म का पाया सत्य पर ही टिका हे ओर वह सत्य सब का एक हे। सत्य का स्वरूप समझ लेने पर आपस मे कलह करने वाले लोग भी भाई–भाई की तरह एक–दूसरे से गले मिलेगे ओर प्रेमपूर्वक भेटने के लिए तेयार हो जाएगे।

अपने सद्विचार को आचार मे लाना ही कल्याणमार्ग पर प्रयाण करना हे।

वैशाख शुक्ला 8

तुम्हारे हृदय मे अपनी माता का स्थान ऊचा हे या दासी का? अगर माता का स्थान ऊचा हे तो मातृ–भाषा के लिए भी ऊचा स्थान होना चाहिए। मातृभाषा माता के स्थान पर हे ओर विदेशी भाषा दासी के स्थान पर। दासी कितनी ही सुरूपवती ओर सुघड क्यो न हो, माता का स्थान कदापि नही ले सकती।

लोग धनिको को सुखी मानते हैं पर जरा धनिको से पूछो कि वे सुखी हैं या दु खी? वास्तव मे धनिको को सुखी समझना भ्रम मात्र हे। प्राय देखा जाता हे कि जिनके पास धन हे वही लोग अधिक हाय–हाय करते हैं। जहा जितना ज्यादा ममत्व हे वहा उतना ही ज्यादा दु ख हे।

इस बात का विचार करो कि वास्तव मे दु ख कौन देता हे? चोर–लुटेरा दु ख देता हे या धन की ममता? धन की ममता के कारण ही दु खो का उद्भव होता हे। इस ममता का त्याग कर देने पर सुख ओर शान्ति की प्राप्ति होती हे।

वैशाख शुक्ला 9

सूर्य की तरफ पीठ करके छाया को पकडने के लिए दोडने से छाया आगे–आगे भागती जाती हे इसी प्रकार ममता के कारण सासारिक पदार्थ दूर से दूरतर होते जाते हे। सूर्य की ओर मुख ओर छाया की ओर पीठ करके चलने से छाया पीछे–पीछे आती हे। इसी प्रकार निस्पृहता धारण करने पर सासारिक पदार्थ पीछे–पीछे दोडते हे।

हिंसा के प्रयोग से अथवा हिसक अस्त्र–शस्त्रो से प्राप्त की जाने वाली [illegible] सदा के लिए स्थायी नहीं होती। प्रेम ओर अहिसा द्वारा हृदय [illegible] [illegible]

मे परिवर्तन करके जन–समाज के हृदय पर जो प्रभुत्व स्थापित किया जाता हे वही सच्ची ओर स्थायी विजय हे।

शरीर नश्वर हे। किसी न किसी दिन अवश्य ही जीर्ण–शीर्ण हो जाएगा। ऐसी स्थिति मे अगर यह आज ही नष्ट होता हे तो दु:ख मानने की क्या आवश्यकता हे? आत्मा तो अजर–अमर हे। उसे कोई नष्ट नही कर सकता।

वैशाख शुक्ला 10

जो वस्तु अन्त मे छूटने ही वाली हे उस नश्वर वस्तु के प्रति ममत्व रखने से लाभ है या उसका स्वेच्छा से त्याग करने मे लाभ हे?

आत्मविजय मे समस्त विजयो का समावेश हो जाता हे। आत्मविजय का जितात्मा लाखो योद्धाओ को जीतने वाले योद्धा की अपेक्षा भी बडा विजयशाली गिना जाता हे। जितात्मा की सर्वत्र पूजा होती हे। इसी कारण सम्राट की अपेक्षा परिव्राट् की पदवी ऊची मानी गई हे।

जिस काम ने रावण जेसे प्रतापी पृथ्वीपति को भी परास्त कर दिया उस काम को जीत लेना हसी–खेल नही है। वास्तव मे जो काम आदि विकारो को जीत लेता है वह महात्मा–महापुरुष है।

तीर्थकर बनना तो सभी को रुचता है मगर तीर्थकर पद प्राप्त करने के लिए सेवा करना रुचता हे या नही?

वैशाख शुक्ला 11

सुभट की अपेक्षा साधु और सम्राट की अपेक्षा परिव्राट् इसीलिए वन्दनीय ओर पूजनीय है कि सुभट ओर सम्राट क्षेत्र पर विजय प्राप्त करता हे जब कि साधु या परिव्राट् क्षेत्री अर्थात् आत्मा पर। क्षेत्र या शरीर पर विजय पा लेना कोई बडी बात नही है परन्तु क्षेत्री अर्थात् आत्मा पर विजय पा लेना अत्यन्त ही कठिन हे।

तलवार चाहे जितनी तीखी धार वाली क्यो न हो अगर वह कायर के हाथ पड जाती हे तो निकम्मी साबित होती हे। वह तलवार जब किसी वीर के हाथ मे आ जाती हे तो अपने जोहर दिखलाती है। इसी प्रकार अहिसा

और क्षमा के शस्त्र कायरो के हाथ पडकर निष्फल साबित होते हैं ओर वीर पुरुषो के हाथ लगकर अमोघ शस्त्र सिद्ध होते हैं।

बुद्धि शरीर रूपी चोर की कन्या हे। शरीर यद्यपि चोर के समान हे फिर भी अनेक रत्न उसके कब्जे मे हैं। इस शरीर के बिना मोक्ष प्राप्त नही हो सकता।

वैशाख शुक्ला 12

मुमुक्षु आत्मा बाह्य युद्ध की अपेक्षा कर्मशत्रुओ को परास्त करने के लिए आन्तरिक युद्ध करना ही अधिक पसन्द करते हैं। बाह्य युद्धो की विजय क्षणिक होती है और परिणाम मे परिताप उपजाती है। इस विजय से बाह्य युद्धो से विराम नही मिलता। अतएव बाह्य शत्रुओ को उत्पन्न करने वाले भीतरी–हृदय मे घुसे हुए शत्रुओ का नाश करने के लिए प्रयास करना ही मुमुक्षु का कर्त्तव्य है।

आज अगर थोडा–बहुत शान्ति का अनुभव होता है तो उसका अधिकाश श्रेय अहिसादेवी और क्षमा माता के ही हिस्से मे जाता हे। जगत् मे इनका अस्तित्व न रहे तो ससार की शान्ति जितनी है, वह भी–अदृश्य हो जाए।

किसी मनुष्य मे भले ही अधिक बुद्धि न हो, फिर भी उसकी थोडी–सी बुद्धि भी अगर निष्पक्ष अर्थात् सम हो तो उस मनुष्य के लिए सभी वस्तुए सम बन जाती है।

वैशाख शुक्ला 13

सेवा को हल्का काम समझने वाला स्वय ही हल्का बना रहता हे। वह उच्च अवस्था प्राप्त नही कर सकता। सेवा करने वाले को मानना चाहिये कि मे जो सेवा कर रहा हू वह परमात्मा की ही सेवा कर रहा हू।

जेन शास्त्रो मे तीर्थंकर पद से वडा अन्य कोई पद नही माना गया ह। यह महान पद सेवा करने से प्राप्त होता हे। जिस सेवा से ऐसा महान फल प्राप्त होता ह उसम झूठ–कपट का व्यवहार करना कितनी मूर्खता हे।

वेयावृत्य(सेवा) करने वाले व्यक्ति के आगे देव भी नत–मस्तक हो जाते हे तो साधारण लोग अगर सेवाभावी को नमस्कार करे तो इसमे आश्चर्य ही क्या है?

सेवा आत्मा और परमात्मा के बीच सबध स्थापित करने वाली साकल है।

वैशाख शुक्ला 14

ससार सेवा के कारण ही टिक रहा हे। जब ससार मे सेवाभावना की कमी हो जाती है तभी उत्पात मचने लगता हे और जब सेवाभाव की वृद्धि होती है तब यह ससार स्वर्ग के समान बन जाता हे।

कितनेक लोगो को धार्मिक क्रिया करने का तो खूब चाव होता है परन्तु सेवा कार्य करने मे अरुचि होती है। अगर किसी रोगी की सेवा करने का अवसर आ जाता है तो उन्हे बडी कठिनाई होती हे। रोगी कपडे मे ही कै–दस्त कर देता हे और कभी–कभी रास्ते मे ही चक्कर खाकर गिर पडता है। ऐसे रोगी की सेवा करना कितना कठिन है। फिर भी जो सेवाभावी लोग रोगी की सेवा को परमात्मा की सेवा मानकर करते है, उनकी भावना कितनी ऊची होगी?

परधन को धूल के समान और परस्त्री को माता के समान मानने की नीति अगर अपने जीवन मे अमल मे लाओगे तो जनसमाज की और अपनी खुद की भी सेवा कर सकोगे।

वैशाख शुक्ला 15

तुम्हारे मन के कुसकल्प ही तुम्हारे दु खो के बीज हैं। कुसकल्पो को हटाकर मन को परमात्मा के ध्यान मे पिरो दो तो दु ख के सस्कार समूल नष्ट हो जाएगे।

समभाव रखने से विष भी अमृत ओर आग भी शीतल हो जाती है। सीता मे समभाव होने के कारण ही अग्नि उसके लिए शीतल बन गई थी। मीरा के समभाव ने विष को भी अमृत के रूप मे परिणत कर लिया था।

जब तक राग और द्वेष के बीज मौजूद है तब तक कर्म के अकुर फूटते ही रहते हे ओर जब तक कर्म के अकुर फूटते रहते है तब तक

जन्म–मरण का वृक्ष फलता–फूलता रहता हे। ससार के वन्धनो से मुक्त होने के लिए सर्वप्रथम राग–द्वेष के वन्धनो से मुक्त होना चाहिए।

अगर छोटे से छोटा भी अत्याचार सहन कर लिया जाय तो गणतन्त्र का आसन दूसरे ही क्षण कापने लगेगा।

ज्येष्ठ कृष्णा 1

क्षमा(पृथ्वी) प्रत्येक वस्तु को आधार देती हे इसी प्रकार क्षमा भी प्रत्येक छोटे–बडे गुण को आधार देती है। क्षमा के बिना वास्तव मे कोई भी गुण नही टिक सकता। मोक्ष के मार्ग पर चलने मे क्षमा पाथेय के समान तो हे ही, ससार–व्यवहार मे भी क्षमा की अत्यन्त आवश्यकता हे।

कितनेक लोग क्षमा को निर्बलो का शस्त्र मानते हें तो कुछ लोग उसे कायरता का चिन्ह समझते हें। परन्तु वास्तव मे क्षमा निर्बलो का नही वरन् सवलो का अमोघ शस्त्र हे ओर वीर पुरुषो का आभूषण हे। कायर पुरुषो ने अपनी कायरता के कारण क्षमा को लजाया हे परन्तु सच्चे वीर पुरुषो ने क्षमा को अपनी मुकुट–मणि बनाकर सुशोभित किया है।

कुलधर्म की तराजू पर जिस दिन उच्चता–नीचता तोली जायेगी उसी दिन लोगो की भ्रमणा भाग जाएगी। उस समय साफ मालूम होगा कि सकीर्ण जातिवाद समाज की बुराई हे ओर गुणवाद समाज का आदर्श हे।

ज्येष्ठ कृष्णा 2

लोकिक विजय से विजेता को जेसी प्रसन्नता होती हे ओर जिस प्रकार के आनन्द का अनुभव होता हे वेसी ही प्रसन्नता ओर वेसा ही आनन्दानुभव क्षमा द्वारा परीषहो को जीत लेने पर होता हे। लोकिक विजय की अपेक्षा यह विजय महान् हे। अतएव लोकिक विजय के आनन्द की अपेक्षा लोकोत्तर विजय का आनन्द अधिक होता हे।

कुलधर्मी भूखा मर जाएगा पर पेट की आग बुझाने के लिए वह चोरी या असत्य का आचरण नही करेगा। ऐसा करना वह वज्रपात के समान दुख मानेगा।

वास्तव मे कोई मनुष्य उच्च कुल मे जन्म लेने मात्र से उच्च नही हो जाता। इसी प्रकार नीच कुल मे जन्म लेने मात्र से कोई नीच नही होता। उच्चता और नीचता मनुष्य की अच्छी और बुरी प्रवृत्तियो पर अवलम्बित है। मनुष्य सत्प्रवृत्ति करके अपना चरित्र ऊचा बनाएगा तो वह ऊचा बन सकेगा। जो असत्प्रवृत्ति करेगा वह नीचा कहलाएगा।

ज्येष्ठ कृष्णा 3

अगर हममे अन्यायमात्र का सामना करने का नैतिक बल मोजूद हो तथा निस्सार मतभेदो एव स्वार्थो को तिलाजलि देकर राष्ट्र, समाज और धर्म की रक्षा करने की क्षमता आ जाए तो किसका सामर्थ्य हे जो हमे अपने पूर्वजो की सम्पत्ति के अधिकार या उपभोग से वचित कर सके?

जो मनुष्य शरण मे आये हुए का त्याग कर देता है अर्थात् उसे आश्रय नही देता, वह कायर है। जो सच्चा वीर है, जो महावीर भगवान् का सच्चा अनुयायी है, जो उदार और धर्मात्मा है, वह अपना सर्वस्व निछावर करके भी शरणागत की रक्षा और सेवा करता है।

सकट के समय व्रत का स्मरण कराने वाली, व्रतपालन के लिए बारम्बार प्रेरित करने वाली और प्रबल प्रलोभनो के समय सयम का मार्ग समझाने वाली प्रतिज्ञा ही है। प्रतिज्ञा हमारा सच्चा मित्र है। ऐसे सच्चे मित्र की अवहेलना कैसे की जा सकती है?

ज्येष्ठ कृष्णा 4

जो प्रजा अन्याय और अत्याचार का अपने पूरे बल के साथ सामना नही कर सकती अथवा जो अपने तुच्छ स्वार्थो मे ही सलग्न रहती हे, वह प्रजा गणतन्त्र के लिए अपनी योग्यता साबित नही कर सकती।

मै जोर देकर बार–बार कहता हू कि प्रत्येक बात पर बुद्धि–पूर्वक विचार करो। दूसरे जो कुछ कहते हे उसे ध्यानपूर्वक सुनो और तात्विक दृष्टि से शास्त्रो का अवलोकन करो। केवल अन्धविश्वास से प्रेरित होकर या सकुचित मनोवृत्ति से अपनी मन कल्पित बात को मत पकड रखो। दुराग्रह या स्वमताग्रह के फेर मे मत पडो।

कुछ लोग कहते हे–व्रत–सवधी प्रतिज्ञा लेने की आवश्यकता ही क्या हे? उन्हे समझना चाहिए–व्रत–पालन की प्रतिज्ञा सकट के समय सबल मित्र का काम देती है। प्रतिज्ञा अध पतन से बचाती हे ओर धर्म का सच्चा मार्ग बतलाती है।

ज्येष्ठ कृष्णा 5

अन्याय और अत्याचार का विरोध करने के लिए कदम न बढाया जाएगा तो ससार मे अन्याय का साम्राज्य फैल जाएगा ओर धर्म का पालन करना असम्भव हो जाएगा।

आज धर्म–अधर्म का विवेक नष्टप्राय हो रहा है। इसी कारण जनसमाज मे ऐसी मिथ्या धारणा घुस गई हे कि जितनी देर सामायिक मे (या सन्ध्या–पूजन में) बैठा जाय, बस उतना ही समय धर्म मे व्यतीत करना आवश्यक हे। दूकान पर पैर रखा और धर्म समाप्त हुआ। दुकान पर तो पाप ही पाप करना होता है। वास्तव मे यह धारणा भ्रमपूर्ण हे। रात–दिन की शुभ–अशुभ प्रवृत्तियो से ही पुण्य–पाप का हिसाब होता है।

प्रत्येक ग्राम मे सन्मार्ग–दर्शक अथवा मुखिया की आवश्यकता होती हे। मुखिाया पुरुष ही ग्रामनिवासियो को धर्म–अधर्म का, सत्य–असत्य का, सुख–दु ख का सच्चा ज्ञान कराता हे ओर सद्धर्म का उपदेश देकर सन्मार्ग पर चलाता हे।

ज्येष्ठ कृष्णा 6

विपदाओ के पहाड टूट पडे, खाने–पीने के फाके पडते हो, तव भी जो धीर–वीर पुरुप अपनी उदार प्रकृति को स्थिर रखता हे अपने सदाचार से तिलभर भी नही डिगता वह सच्चा सुव्रती कहलाता हे। जहा सुव्रतियो की सख्या जितनी अधिक होती हे वह ग्राम नगर ओर वह देश उतना ही सुरक्षित रहता ह। सुव्रतियो के सदाचार रूप प्रवल वल के मुकाविले शत्रुओ का दल–वल निर्वल–निस्तेज हा जाला हे।

न्यायवृत्ति रखना ओर प्रामाणिक रहना यह सुव्रतियो का मुद्रालख ह। यह मुद्रालख उन्हे प्राणा से भी अधिक प्रिय हाता हे। सुव्रती अन्याय क

खिलाफ अलख जगाता हे। वह न स्वय अन्याय करता हे ओर न सामने होने वाले अन्याय को टुकुर–टुकुर देखता रहता हे। वह अन्याय का पतीकार करने के लिए कटिबद्ध रहता हे। अन्याय का पतीकार करने मे वह अपने पाणा को हसते–हसते निछावर कर देता हे। वह समाज ओर देश के चरणो मे अपने जीवन का बलिदान देकर भी न्याय की रक्षा करता हे।

ज्येष्ठ कृष्णा 7

अगर तुम अपना जीवन सफल बनाना चाहो तो व्रत–पालन मे दृढ रहना। जिस व्रत को अगीकार कर लो उससे चिपटे रहो। उसे पूर्ण रूप से निभाने के लिए सतत उद्योग करो।

धर्मशास्त्र एक प्रकार का आध्यात्मिक पिनल कोड हे। धर्मसूत्रो के धार्मिक नैतिक और आध्यात्मिक कायदे–कानून इतने सुन्दर ओर न्यायसगत है कि अगर हम निर्दोष भाव से उनका अनुकरण करे तो देश, समाज या कुटुम्ब मे घुसे हुए अनेक प्रकार के पारस्परिक वैरभाव स्वत शान्त हो सकते हैं।

जिस कार्य से राष्ट्र सुव्यवस्थित होता है, राष्ट्र की उन्नति होती हे, मानव–समाज अपने धर्म का ठीक–ठीक पालन करना सीखता है, राष्ट्र की सम्पत्ति का सरक्षण होता है, सुखशान्ति का प्रसार होता है, प्रजा सुखी बनती हे राष्ट्र की प्रतिष्ठा बढती हे और कोई अत्याचारी परराष्ट्र स्वराष्ट्र के किसी भाग पर अत्याचार नही कर सकता, वह कार्य राष्ट्रधर्म कहलाता है।

ज्येष्ठ कृष्णा 8

याद रखना चाहिए जो नागरिक नगरधर्म का पालन नही करता वह अपने राष्ट्र का अपमान करता हे। दूसरे शब्दो मे कहा जाय तो वह देशद्रोह करता है।

आत्मधर्म की बाते करने वाले लोग ससार से सबध रखने वाले बहुत से काम करते हैं परन्तु जब आचारधर्म के पालन का प्रश्न उपस्थित होता हे तब वे कहने लगते हैं–'हमे दुनियादारी की बातो से क्या सरोकार।' ऐसे लोग आत्म–धर्म की ओट मे राष्ट्र के उपकार से विमुख रहते हे।

जब लोकिक ओर लोकोत्तर धर्मो का ठीक तरह समन्वय करके पालन किया जाता हे, तब मानवजीवन का असली उद्देश्य मोक्ष सिद्ध होता हे। लोकिक धर्म से शरीर की ओर विचार की शुद्धि होती हे ओर लोकोत्तर धर्म से अन्त करण एव आत्मा की।

ज्येष्ठ कृष्णा 9

मस्तिष्क अस्थिर या विकृत हो जाने पर जैसे शरीर को अवश्य हानि पहुचती है, उसी प्रकार नागरिको द्वारा अपना नगरधर्म भुला देने के कारण ग्राम्यजन अपना ग्रामधर्म भूल जाते हैं।

अहिसावादी कायर नही, वीर होता है। सच्चा अहिसावादी एक ही पुरुष, अहिसा की असीम शक्ति द्वारा रक्त का एक भी बूद गिराये बिना, बडी से बडी पाशविक शक्तियो को परास्त करने की क्षमता रखता है। अहिसा मे ऐसा असीम और अमोघ बल है।

व्यक्ति समष्टि का अग है। समष्टि अगर एक मशीन है तो व्यक्ति उसका एक पुर्जा है। समष्टि के हित मे ही व्यक्ति का हित निहित है। प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह समष्टि के हित को सामने रखकर सत्प्रवृत्ति करे। इस प्रकार की सत्प्रवृत्ति मे ही मानवजाति का मगल हे।

ज्येष्ठ कृष्णा 10

जो मनुष्य अपने और अपने माने हुए कुटुम्ब के हित–साधन मे ही तत्पर रहता हे ओर प्राणीमात्र के हित का विचार तक नही करता, वह नीतिज्ञ नही नीतिघ्न हे।

मानव–जीवन यदि मकान के समान हे तो धर्म उसकी नीव हे। बिना नींव के मानव–जीवन टिक नही सकता। अर्थात् धर्म के अभाव मे जीवन मानव–जीवन न रहकर पाशविक जीवन बन जाता हे। जीवन को उत्तम मानवीय जीवन बनाने के लिए धर्म–रूपी नीव गहरी ओर पुख्ता बनाने की आवश्यकता ह। धर्म–रूपी नीव अगर कच्ची रहेगी तो मानव–जीवन रूपी मकान शका कुतर्क अज्ञान अनाचार ओर अधर्म आदि के तूफानो से हिल जाएगा आर उसका पतन हुए विना न रहेगा।

व्यक्तियो के बिखरे हुए बल को अगर एकत्र करके सघ–बल के रूप मे परिणत कर दिया जाय तो असम्भव पतीत होने वाला कार्य भी सरलता के साथ सम्पन्न किया जा सकता हे। इस बात को कोन गलत साबित कर सकता हे?

ज्येष्ठ कृष्णा 11

क्या सजीव और क्या निर्जीव, पत्येक वस्तु मे अणु–अणु मे अनन्त सामर्थ्य भरा पडा है। वह सामर्थ्य सफल तब होता हे जब उसका समन्वय किया जाय। अगर शक्तियो का सग्रह न किया जाय ओर पारस्परिक सघर्ष के द्वारा उन्हे क्षीण किया जाय तो उनका सदुपयोग होने के बदले दुरुपयोग ही कहलाएगा। शक्तियो का सग्रह करने के लिए सघर्ष को विवेकपूर्वक दूर करने की आवश्यकता हे ओर साथ ही सघशक्ति को केन्द्रित करने की भी आवश्यकता है।

जैसे पानी और अग्नि की परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाली शक्तियो के समन्वय से अद्‌भुत शक्तिसम्पन्न विद्युत उत्पन्न किया जाता है, इसी प्रकार सघ के अगो का समन्वय करके अपूर्व शक्ति उत्पन्न करने से ही सघ मे क्षमता आती है।

जब तक बिखरी हुई अन्य शक्तियो को एकत्र न किया जाय तब तक एक व्यक्ति की शक्ति से चाहे वह कितनी ही बलवती क्यो न हो, इष्टसिद्धि नही हो सकती।

ज्येष्ठ कृष्णा 12

काम चाहे छोटा हो चाहे बडा हो, उसकी सिद्धि के लिए सघशक्ति की परम आवश्यकता हे।

सघशक्ति क्या नही कर सकती? जब निर्जीव वस्तुओ का सगठन अद्‌भुत काम कर दिखाता है तो विवेकबुद्धि धारण करने वाले मानव–समाज की सघशक्ति का पूछना ही क्या है?

सघधर्म का ध्येय व्यक्ति के श्रेय के साथ समष्टि को श्रेय का साधना कराना है। जब समष्टि के श्रेय के लिए व्यक्ति का श्रेय खतरे मे पड जाता हे तब समष्टि के श्रेय का साधन करना सघधर्म का ध्येय बन जाता हे।

अगर समूचे गाव की सम्पत्ति लुट जाए तो एक मनुष्य अपनी सम्पत्ति किस प्रकार सुरक्षित रख सकता हे? इस प्रकार जो मनुष्य अपने व्यक्तिगत धर्म की सुरक्षा चाहते हे, उन्हे सघ–धर्म की रक्षा की तरफ भी पर्याप्त ध्यान देना चाहिए।

ज्येष्ठ कृष्णा 13

राष्ट्र का सघधर्म व्यक्तिगत या वर्गगत हित की अपेक्षा समष्टि के हित का सर्वप्रथम विचार करता है।

बुद्धिमान् पुरुष अपने निजी स्वार्थ की सिद्धि के लिए जगत् का अहित नही चाहता।

कई लोग कहा करते हैं–हमे दूसरो की चिन्ता करने से क्या मतलब? हम चैन से रहे तो बस है। दूसरो का जो होनहार है सो होगा ही। ऐसे विचार वाले लोग भयकर भूल करते हैं। जिस ग्राम मे या जिस देश मे ऐसे विचार वाले लोग रहते है उस ग्राम या देश का अध पतन हुए बिना नही रह सकता।

जो पुरुष भीतर ही भीतर सशय मे डूबा रहता है और निर्णय नही करता वह **'संशयात्मा विनश्यति'** का उदाहरण बन जाता है।

ज्येष्ठ कृष्णा 14

धर्म मे दृढ विश्वास को स्थान न दिया जाय तो धर्म का आचरण होना कठिन हो जाएगा। दृढ विश्वास धर्मरूपी महल की नीव है। मगर धर्म मे जो दृढ विश्वास हो वह अन्धविश्वास मे से पेदा नही होना चाहिए। जो विश्वास श्रद्धा ओर तर्क की कसोटी पर चढा हुआ होता हे वही सुदृढ होता हे। अतएव दृढ–विश्वास श्रद्धाशुद्ध और तर्कशुद्ध होना चाहिए।

जो मनुष्य केवल वितडावाद बढाने के लिए या अपनी तर्कशक्ति का प्रदर्शन करने के लिए शका की लहरो पर नाचता रहता हे, वह धर्म का तनिक भी मर्म नही समझ सकता।

आपत्ति क डर से किसी काम मे हाथ न डालना कोई बुद्धिमत्ता नही ह। कार्य करते समय हानि–लाभ का विचार अवश्य कर लेना चाहिए पर प्रारम्भ स ही जिस किसी कार्य को शका की दृष्टि से नही देखना चाहिए।

मनुष्य निर्णयात्मक बुद्धि से जितना अधिक विचार करता है उसे उतना ही अधिक गम्भीर रहस्य का पता चलता है।

ज्येष्ठ कृष्णा 30

ज्ञान ओर क्रिया का साहचर्य श्रेयसिद्धि का मुख्य कारण हे। जेसा समझो वैसा ही करो, तभी ध्येय सिद्ध होता है। जानना जुदा ओर करना जुदा इस प्रकार जहा विसवाद होता है वहा बडे से वडा पयास करने पर भी विफलता ही मिलती है।

सम्यग्ज्ञान शाश्वत सूर्य है, कभी न बुझने वाला दीपक हे। उसके चमकते हुए प्रकाश से मात्सर्य, ईर्षा, क्रूरता, लुब्धता आदि अनेक रूपो मे फेला हुआ अज्ञान–अन्धकार एक क्षण भी नही टिक सकता हे।

क्रियाकाड–अनुष्ठान औषध है और सम्यग्ज्ञान पथ्य हे। सम्यग्ज्ञान के प्रभाव से अनुष्ठान अमृत–रूप बनकर आत्मा का उन्माद दूर करता हे और आत्मा को जागृत करता है।

अहिसावादी अणुमात्र असत्य भाषण को भी आत्मघात करने के समान समझता हे।

ज्येष्ठ शुक्ला 1

जैसे गाय घास को भी दूध के रूप मे परिणत कर लेती है, उसी प्रकार सम्यग्ज्ञानी पुरुष अन्य धर्मशास्त्रो को भी हितकर रूप मे परिणत कर सकता है और ऐसा करके वह धार्मिक कलह को भी शान्त कर सकता है।

जब तक यथार्थ वस्तुस्वरूप न जान लिया जाय तब तक आचरण अर्थहीन होता है। अनजाने को जानना, जाने हुए की खोज करना और खोजे हुए को जीवन मे उतारना, यह जीवन–शुद्धि का मार्ग है।

गरीबो के जीवन–मरण का विचार न करके, चाहे जिस उपाय से उनका धन हडपकर तिजोरिया भर लेना ही उन्नति का आदर्श हो तो जो मनुष्य दगाबाजी करके सट्टा करके धनोपार्जन कर रहे है वे भी उन्नति कर रहे हे यह मानना पडेगा। इस प्रकार छल–कपट करके धन लूट लेने को उन्नति मान लिया जाय तो कहना होगा–अभी हम उन्नति का अर्थ ही नही समझ पाये हें।

ज्येष्ठ शुक्ला 2

जब तक मनुष्य सम्यक् प्रकार से अहिसा का पालन करना न सीखे तब तक कभी उन्नति होने की नही, यह बात सुनिश्चित हे।

प्रत्येक प्राणी को अपनी आत्मा के समान समझकर आत्मोपम्य की भावना की उन्नति मे ही मानव–समाज की सच्ची उन्नति हे।

काक्षा या कामना एक ऐसा विकार हे, जिसके ससर्ग मे तपस्वियो की घोर तपस्या और धर्मात्माओ के कठोर से कठोर धर्मानुष्ठान भी कलकित हो जाते हे।

आज विश्व मे विषमता के कारण जीवन मृतप्राय हो रहा हे। जहा देखो वही भेदभाव तथा विषमता, उच्च–नीच की भावना फेली हुई हे। इसी कारण दु ख और दरिद्रता की वृद्धि हो रही हे। जगत् को इस दुखी अवस्था मे से उबारने का एक ही मार्ग है ओर वह है समानता का आदर्श।

ज्येष्ठ शुक्ला 3

एक अहिसावादी मर भले ही जाय पर अन्यायपूर्वक किसी का प्राण या धन हरण नही करता।

मनुष्य को निष्काम होकर कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए। जो कामना से अलग रहता है वह सब का प्रिय बन जाता हे। कामहीन वृत्ति वाले के लिए सिद्धि दूर नही रहती। मगर फल की आकाक्षा करने पर मनुष्य न इधर का रहता हे, न उधर का रहता हे।

धर्माचरण का फल आत्मशुद्धि हे। उसे भूलकर जो धनधान्य आदि भोगोपभोग की सामग्री की प्राप्ति मे धर्म की सफलता मानता हे ओर किये हुए धर्माचरण का फल पाने के लिए अधीर हो जाता हे, वह मूढ नही तो क्या हे?

जेसे अनुष्ठानहीन कोरे ज्ञान से आत्मशुद्धि नही हो सकती उसी प्रकार सम्यग्ज्ञानहीन चारित्र भी मोक्ष–साधक नही हो सकता।

ज्येष्ठ शुक्ला 4

सम्यग्दर्शन वह ज्योति हे, जिसे उपलब्ध कर मनुष्य विवेकमयी दृष्टि से सम्पन्न बन जाता हे। जहा सम्यग्दर्शन होगा वहा मूढदृष्टि को अवकाश नही रहता।

मानव–जीवन की चरमसाधना क्या हे? किस लक्ष्य पर पहुच जाने पर वह चिरयात्रा समाप्त होगी? मनुष्य की अतिम स्थिति क्या हे? यह ऐसे गूढ प्रश्न हैं जिन पर विचार किये बिना विद्वान का मस्तिष्क मानता नहीं है और विचार करने पर भी उपलब्ध कुछ होता नही हे। ऐसे प्रश्नो का समाधान दर्शन–शास्त्रो के पृष्ठो पर लिखे अक्षरो से नहीं हो सकता। मस्तिष्क वहा काम नही कर सकता। जिसे समाधान प्राप्त करना है वह चारित्र की सुरम्य वाटिका मे विहार करे।

जैसे जेल से डरने वाला स्वराज्य प्राप्त नही कर सकता ओर जैसे आच और धुए से डरने वाली महिला रसोई नही बना सकती, उसी प्रकार कष्टो से घबराने वाला देवलोक के सुख नही पा सकता।

ज्येष्ठ शुक्ला 5

भोगोपभोग से प्राप्त होने वाला सुख का कारण दु ख है। उस सुख को भोगने से दु ख की दीर्घ परम्परा पैदा होती है। इसके अतिरिक्त वह सुख पराधीन हे–भोग्य पदार्थो के, इन्द्रियो के और शारीरिक शक्ति के अधीन है। जहा पराधीनता है वहा दु ख है। उस सुख मे निराकुलता नही हे, व्याकुलता हे, अतृप्ति है, भय है, उसका शीघ्र अन्त हो जाता है। उसकी मात्रा अत्यल्प होती हे। इन सब कारणो से सासारिक सुख वास्तव मे दु खरूप है, दु खमूल हे ओर दु खमिश्रित है। उसे सुख नही कहा जा सकता।

यह ठीक है कि अज्ञानपूर्वक सहन किया गया कष्ट मुक्ति का कारण नही हे मगर वह भी सर्वथा निष्फल नही जाता। उस कष्ट का फल देवलोक है।

हम अपने ही किये कर्म का फल भोगते है– यह जान लेने पर शान्ति ही रहती है अशान्ति नही होती। अपनी आख मे अपनी ही उगली लग जाय तो उलाहना किसे दिया जाय?

अगर वस्त्रो मे सुख होता तो सर्दी मे प्रिय और सुखद प्रतीत होने वाले वस्त्र गर्मी मे भी प्रिय और सुखद प्रतीत होते। सर्दी मे जो वस्तु सुखदायी हे वह गर्मी मे सुखदायी क्यो न होगी?

भूख मे लड्डू सुख देने वाले मालूम पडते हें, लेकिन भूख मिट जाने पर वही लड्डू आपको जबर्दस्ती मार–मार कर खिलाए जाए तो कैसे लगेगे? जहर सरीखे।

अगर कोई धर्मनिष्ठ पुरुष दु खी है तो समझना चाहिए कि वह पहले किये हुए किसी अशुभ कर्म का फल भोग रहा है। उसके वर्तमानकालीन ध र्मकार्यो का फल अभी नही हो रहा है। पहले के कर्म उदय–अवस्था मे हैं ओर वर्तमानकालीन कर्म अनुदय–अवस्था मे हैं। जब वह उदय–अवस्था मे आएगे तो उनका अच्छा फल उसे अवश्य प्राप्त होगा।

तू अपनी तरफ से जो करता है, वह किये जा, दूसरो का विचार मत कर।

ज्येष्ठ शुक्ला 7

कभी मत समझो कि करने वाला दूसरा है और आपत्ति हमारे सिर आ पडी हे। बिना किया कोई भी कर्म भोगा नही जाता। सम्भव हे अभी तुमने कोई कार्य नही किया है और फल भोगना पड रहा हे, मगर यह फल तुम्हारे ही किसी समय किये कर्म का फल हे। प्रत्येक कर्म का फल तत्काल नही मिल जाता। इसलिए हमारे किस कर्त्तव्य का फल किस समय मिलता हे, यह चाहे समझ मे न आवे तथापि यह सुनिश्चित है कि तुम आज जो फल भोग रहे हो वह तुम्हारे ही किसी कर्म का हे।

जिस देश मे पेदा हुए हें उसकी निन्दा करके दूसरे देश की प्रशसा करने वाले गिरे हुए हें भोग के कीडे हे, उनसे किसी प्रकार का उद्देश्य सिद्ध नही होता।

आत्मा की शक्तिया वधन मे हें। उन पर आवरण पडा हे। आवरण को हटा देना ही मोक्ष हे। मगर इसके लिए निश्चल श्रद्धा और प्रवलतर पुरुषार्थ की आवश्यकता हे।

ज्येष्ठ शुक्ला 8

आज बालको के दिमाग मे उनकी शक्ति से अधिक शिक्षा भरी जाती है। सरक्षक चाहते हे कि उनका बेटा शीघ्र से शीघ्र बृहस्पति बन जाए। मगर इस हवस का जो परिणाम हो रहा हे वह स्पष्ट हे। बालक के मस्तिष्क पर अधिक बोझ लादने से उसकी शक्तिया क्षीण हो जाती ह और वह अल्पायुष्क हो जाता है।

कृत्रिमता एक पकार का विकार हे। अतएव मनुष्य कृत्रिमता के साथ जितना अधिक सम्पर्क स्थापित करेगा उतने ही अधिक विकार उसमे उत्पन्न होते जाएगे। इसके विपरीत मनुष्य–जीवन मे जितनी अकृत्रिमता होगी, उतना ही अधिक वह आनन्दमय होगा।

लोग भ्रमवश मान लेते हैं कि हमे जगल भला नही लगता ओर महल सुहावना लगता है। अगर यह सच हो तो महल मे रहने वाला क्यो जगल की शरण लेता है? शहर मे जब प्लेग का प्रकोप होता हे तो लोग किस तरफ दौडते हे?

ज्येष्ठ शुक्ला 9

जो अपने मुह मे मिश्री डालेगा उसे मिठास आप ही आएगी। यह मिठास ईश्वर ने दी या मिश्री मे ही मिठास का गुण हे? मिर्च खाने वाले का मुह जलेगा। सो ईश्वर उसका मुह जलाने आयेगा या मिर्च मे ही मुह जलाने का गुण है? मिश्री अगर मिठास नही देती ओर मिर्च मुह नही जलाती तो वह मिश्री या मिर्च ही नही है। इसी प्रकार कर्म मे अगर शुभाशुभ फल देने की शक्ति न हो तो वह कर्म ही नही हे। जिस प्रकार मुह को मीठा करने और जलाने का गुण मिश्री ओर मिर्च मे हे, उसी प्रकार शुभ और अशुभ फल देने की शक्ति कर्म मे हे।

जेसे बिखरी हुई सूर्य की किरणो से अग्नि उत्पन्न नही होती, परन्तु काच को बीच मे रखने से किरणे एकत्र हो जाती है ओर उस काच के नीचे रूई रखने से आग उत्पन्न हो जाती हे। इसी प्रकार मन ओर इन्द्रियो को एकत्र करने से आत्म–ज्योति प्रकट होती है। ध्यान रूपी काच के द्वारा बिखरी हुई इन्द्रियरूपी किरणे एकत्र हो जाती हे ओर आत्मज्योति प्रकट होकर अपार ओर अपूर्व आनन्द प्राप्त होता है।

ज्येष्ठ शुक्ला 10

तुम्हारी 'मा' ने जो कपडा कष्ट उठाकर बुना हे, उसे मोटा कहकर न पहनना ओर गुलाम बनकर जरी का जामा पहनना कोई अच्छी बात नही हे। इससे तुम्हारी कद्र न होगी। गुलाम बनाकर वस्त्र देने वाले जब अपना हाथ खीच लेगे तब तुम पर केसी बीतेगी? विदेशी कपडा मुफ्त तो मिलता नही, फिर गुलाम बनने से क्या लाभ है?

स्वर्ग की भूमि चाहे जैसी हो, तेरे किस काम की? वहा के कल्पवृक्ष तेरे किस काम के? स्वर्ग की भूमि को बडा मानना जिस भूमि ने तेरा भार वहन किया है और कर रही है, उसका अपमान करना है। उसका अपमान करना घोर कृतघ्नता है। अपनी मातृभूमि का अपमान करने वाले के समान कोई नीच नही है।

श्रोता को वक्ता के दोष न देखकर गुण ही ग्रहण करना चाहिए। जहा से अमृत मिल सकता है वहा से रक्त ग्रहण करना उचित नही है।

ज्येष्ठ शुक्ला 11

कर्त्तव्य का फल न दिखने से घबराओ मत। कार्य करना ही अपना कर्त्तव्य समझो, फल की कामना न करो। जो कर्त्तव्य आरम्भ किया हे उसी मे जुटे रहो, फल आप ही दिखाई देने लगेगा।

सच्चे हृदय से सेवा करने वाली घर की स्त्री का अनादर करके वेश्या की प्रशसा करने वाला जैसे नीच गिना जाता हे, वेसे ही वह व्यक्ति भी नीच है जो भारत मे रहकर अमेरिका ओर फ्रास की प्रशसा करता हे ओर भारतवर्ष की निन्दा करता है।

दिल परमात्मा का घर हे। परमात्मा मिलेगा तो दिल मे ही मिलेगा। दिल मे न मिला तो कही नही मिलेगा।

एक विकार ही दूसरे विकार का जनक होता हे। आत्मा जब पूर्ण निर्विकार दशा प्राप्त कर लेता हे तब विकार का कारण न रहने से उसमे विकार उत्पन्न होना असम्भव हे।

स्मरण रखिए आप अपने को बडा दिखाने के लिए जितनी चेष्टा करते है उतनी ही चेष्टा अगर बडा बनने के लिए करे तो आप मे दिखावटी बडप्पन के बदले वास्तविक बडप्पन पकट होगा। तब अपना बडप्पन दिखाने के लिए आपको तनिक भी प्रयत्न न करना होगा यही नही वरन् आप उसे छिपाने की चेष्टा करेगे फिर भी वह प्रकट हुए बिना नही रहेगा। वह इतना ठोस होगा कि उसके मिट जाने की भी आशका न रहेगी।

ऐसा बडप्पन पाने के लिए महापुरुषो के चरित का अनुसरण करना चाहिए और जिन सद्गुण रूपी पुष्पो से उनका जीवन सोरभमय बना हे उन्ही पुष्पो से अपने जीवन को भी सुरभित बनाना चाहिए।

बाहरी दिखावट, ऊपरी टीमटाम और अभिमान, यह सब तुच्छता की सामग्री है। इससे महत्ता बढती नही हे, घटती ही हे। तुच्छता के मार्ग पर चलकर महत्ता की आशा मत करो। विषपान करके कोई अजर–अमर नही बन सकता।

ज्येष्ठ शुक्ला 13

लोग चाहते क्या हैं और करते क्या हैं। वाहवाही चाहते हें मगर थू–थू के काम करते हैं।

अगर आप धर्म को दिपाने वाली छोटी–छोटी बातो का भी पालन न कर सकेगे तो बडी बातो का पालन करके कैसे धर्म को दिपावेगे? मिल के कपडे त्याज्य हैं इस विषय मे किसी का मतभेद नही है। अगर आप इन्हे भी नही छोड सकते तो धर्म के बडे काम कैसे कर सकेगे?

धर्मात्मा मे ऐसा प्रभाव अवश्य होना चाहिए कि उसके बिना कुछ कहे ही पापी लोग उससे कापने लगे।

ब्रह्मचर्य का सक्षिप्त अर्थ हे–इन्द्रिय और मन पर पूर्णरूप से आधिपत्य जमा लेना। जो पुरुष अपनी इन्द्रियो पर और मन पर काबू कर लेगा वह आत्मा मे ही रमण करेगा, बाहर नही।

ज्येष्ठ शुक्ला 14

दुर्गुणो पर ओर विशेषत अपने ही दुर्गुणो पर दया दिखाने से हानि ही होती हे।

जो शारीरिक सुखो की तरफ से सर्वथा निरपेक्ष बन जाता हे, वही पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन कर सकता हे। शरीर को सवारने वाला, शरीर–सबधी टीमटाम करने वाला ब्रह्मचर्य का पालन नहीं कर सकता।

अगर भीतरी दुर्गुणो को छिपाने के लिए ही बढिया वस्त्र ओर आभूषण धारण कर लिए, भीतर पाप भरा रहा तो ऐसा पुरुष धिक्कार का पात्र ही गिना जाएगा।

शारीरिक गठन और शारीरिक सौन्दर्य उसी का प्रशस्त है जिसमे तप की मात्रा विद्यमान है। सुन्दरता हुई, मगर तपस्या न हुई तो सुन्दरता किस काम की? तपहीन सुन्दर शरीर तो आत्मा को ओर चक्कर मे डालने वाला हे।

ज्येष्ठ शुक्ला 15

अपनी विपुल शक्ति को दबा लेना ओर समय पर शत्रु पर भी उसका प्रयोग न करना बडे से बडा काम है। शक्ति उत्पन्न होना महत्व की बात हे मगर उसे पचा लेना ओर भी बडी बात है। महान् सत्वशाली पुरुष ही अपनी शक्ति को पचा पाते हें। सामान्य मनुष्यो को अपनी साधारण–सी शक्ति का भी अजीर्ण हो जाता हे।

तप से शरीर क्षीण होता हे यह धारणा भ्रमपूर्ण हे। तपस्या करने से शरीर उल्टा नीरोग ओर अच्छा रहता हे। अमेरिका वालो ने बारह करोड पोंड केवल उपवास–चिकित्सा की खोज ओर व्यवस्था मे व्यय किये हें। उन्होंने जान लिया हे कि उपवास मन शरीर बुद्धि आदि के लिए अत्यन्त लाभदायक हे। उन्होंने अनेक रोगो के लिए उपवास–चिकित्सा की हिमायत की हे। आपने डाक्टर पर भरोसा करके अपना शरीर डाक्टरो की कृपा पर छोड दिया हे आपको उपवास पर विश्वास नही हे इसी कारण इतने रोग फेल रहे हें। शारीरिक लाभ के सिवाय उपवास से इन्द्रियो का निग्रह भी होता हे ओर सयम–पालन म भी सहायता मिलती हे।

आषाढ कृष्णा 1

तप से अशान्ति ओर अमगल का निवारण होता है। जो तप की शरण मे गया हे उसे आनन्द–मगल की ही प्राप्ति हुई है।

यह ससार तपोमय हे। तप से देवता भी काप उठते हैं ओर तप के वशवर्ती होकर तपस्वी के चरणो का शरण ग्रहण करते है। ऋद्धि–सिद्धि सुख–सम्पत्ति भी तप से ही मिलती हे। तीर्थंकर की ऋद्धि सब ऋद्धियो मे श्रेष्ठ हे। वह भी तपस्वी के लिए दूर नही हे।

जिसे परलोक जाने का विश्वास हे–परलोक के घर के सबध मे सशय नही हे वह यहा घर क्यो बनावे? वह वही अपना घर क्यो न बनावे? यहा थोडे दिन रहना हे तो घर बनाने की क्या आवश्यकता हे? घर तो कही बनाना ही हे, सो ऐसी जगह घर बनाना होगा जहा सदेव रह सके–जिसे छोडकर फिर भटकना न पडे। राह चलते रास्ते मे घर बनाना बुद्धिमत्ता नहीं।

आषाढ कृष्णा 2

बादशाह सिकन्दर ने अन्तिम समय मे कहा था–मैने आप लोगो को कई बार उपदेश दिये हे लेकिन एक उपदेश देना बाकी रह गया हे, जो अब देता हू।

मेने हजारो–लाखो मनुष्यो के गले काटकर यह सल्तनत खडी की ओर काबू मे रखी हे। मुझे इस सल्तनत पर बडा नाज था और इसे मै अपनी समझता था। लेकिन यह दिन आया। मेरे तमाम मसूबे मिट्टी मे मिल गये। सारा ठाठ यही रह गया ओर मे चलने के लिए तैयार हू। मेरी इस मुसाफिरी मे साथ देने वाला कोई नही हे। मुझे अकेले ही जाना पडेगा। मै आया था हाथ बाधकर और जा रहा हू खुले हाथ। अर्थात् जो कुछ लाया था वह भी यही रह गया। मेरे साथ सिर्फ नेकी–बदी जाती है, शेष सारा वैभव यही रहा जाता हे।'

सोचना चाहिए–मे करने योग्य कार्य को छोडे बैठा हू और न करने योग्य कार्यो मे दिन–रात रचा–पचा रहता हू। अगर ऐसी ही स्थिति बनी रही तो बाजी हाथ से निकल जाएगी। फिर ठिकाना लगना कठिन है।

आषाढ कृष्णा 3

राजकुमारी होकर बिक जाना, अपने ऊपर आरोप लगने देना सिर मुडवाना, प्रहार सहन करना, क्या साधारण बात है? तिस पर उसे हथकडी–बेडी डाली गई और वह भौयरे से बन्द कर दी गई। फिर भी धन्य हे चन्दनबाला महासती को, जो मुस्कराती ही रही और अपना मन मेला न होने दिया।

यह निश्चित हे कि एक दिन जाना होगा। जब जाना निश्चित हे तो समय रहते जागकर जाने की तैयारी क्यो नही करते? साथ जाने वाली चीज के प्रति घोर उपेक्षा क्यो सेवन कर रहे हो? समय पर जागो और अपने हिताहित का विचार करो।

दान धर्म उत्पन्न होने की भूमि है। दान से ही धर्म होता है। दूसरे से कुछ भी लिए बिना किसी का जीवन ही नही निभ सकता। माता–पिता, पृथ्वी–अग्नि आदि से कुछ न कुछ सभी को ग्रहण करना पडता है। मगर जो ले तो लेता है किन्तु बदले मे कुछ देता नही है, वह पापी है।

आषाढ़ कृष्णा 4

वर्तमान जीवन स्वल्पकालीन है और भविष्य का जीवन अनन्त है। इसलिए हे भद्र पुरुष! वर्तमान के लिए यत्न न कर, किन्तु भविष्य को मगलमय बनाने की भी चेष्टा कर।

साधारणतया आयु के सौ वर्ष माने जाते हे, यद्यपि इतने समय तक सब जीवित नही रहते। इनमे से दस वर्ष बचपन के गये ओर बीस वर्ष तक पढाई की। इस तरह तीस वर्ष निकल गये। शेष सत्तर वर्ष के आराम के लिए यदि बीस वर्ष तक पढने की मेहनत उठाते हो तो अनन्त काल के सुख के लिए कितना परिश्रम करना चाहिए? जिसकी बदोलत सदा के लिए सुख मिल सकता है उस धर्म के लिए जरा भी उत्साह न होना कितने बडे दुर्भाग्य की बात हे?

अकसर लोग गाली का बदला गाली से चुकाते हे लेकिन भगवान् महावीर का सिद्धान्त यह नही हे। गाली के बदले गाली देने का नाम ज्ञान नही हे। अगर कोई गाली देता हे तो उससे भी कुछ न कुछ शिक्षा लेना ज्ञान ह।

आषाढ कृष्णा 5

मुझको मारने वाला मुझे बुरा लगता हे तो जिन्हे मने मारा है उन्हे मै क्यो न बुरा लगा होऊगा?

जब जाना निश्चित हे ओर यह जानते हो कि शरीर नाशवान ओर आत्मा अविनाशी है, तो अविनाशी के लिए अविनाशी घर क्यो नही बनाते?

यह जीवन कुछ ही समय का है। इस अल्पकालीन एक जीवन के लिए इतना काम करते हो, दिन–रात पसीना बहाते रहते हो। मगर भविष्य का जीवन तो अनन्त है। उसकी भी कभी चिन्ता करते हो? क्या तुम यह समझते हो कि सदा–सर्वदा यही जीवन तुम्हारा स्थिर रहेगा? अगर तुम्हारे आखे हे तो दुनिया को देखो। कोई भी सदा के लिए स्थिर रहा है या तुम्ही अकेले इस दुराशा मे फसे हो? एक समय आएगा ओर वह बहुत दूर नही है, जब तुम्हारा वैभव तुम पर हसेगा और तुम रोते हुए उसे छोडकर अज्ञात दिशा की ओर प्रयाण कर जाओगे।

आषाढ़ कृष्णा 6

अरे प्राणी! तू इतना पाप करता हे सो किस प्रयोजन के लिए? कितना–सा जीवन है तेरा, जिसके लिए इतना पाप करता है?

अपनी निस्पृहता एव उदारता को बढाए जाओ। जैसे थोडे–से जीवन के लिए घर बनाते हो वैसे ही अनन्त जीवन का भी सोच करो।

मछली जब जल मे गोता लगाती है तब लोग समझते हैं कि वह डूब मरी। मगर मछली कहती है डूबने वाला कोई और होगा! मैं डूबी नही हू। यह तो मेरी क्रीडा हे। समुद्र मेरा क्रीडास्थल है। इसी प्रकार भक्तजन ससार मे भले ही दीखते हो, साधारण पुरुषो की भाति व्यवहार भले ही करते हो, मगर उनकी भावना मे ऐसी विशिष्टता होती है कि ससार मे रहते हुए भी वे ससार के प्रभाव से बचते रहते हैं। वे ससार के खारेपन से बचे रहकर मिठास ही ग्रहण करते हैं।

आषाढ़ कृष्णा 7

रे अविवेकी! तू क्या कर रहा है? तू कौन है? कैसा है? और किस अवस्था मे पडा हे? जाग, अपने आपको पहचान। अपने स्वरूप को निहार।

भ्रम को दूर कर। अज्ञान को त्याग। उठ खडा हो। अभी अवसर हे, इसे हाथ से न जाने दे। ऐसा स्वर्ण अवसर वार–बार हाथ नही आता। बुद्धिमान् पुरुष की तरह अवसर से लाभ उठा ले।

खारे पानी मे रहने वाली मछली को लोग मीठी कहते हैं। भला खारे पानी की मछली मीठी कैसे हो गई? मछली खारे पानी मे रहती हुई भी इस प्रकार श्वास लेती है कि जिससे खारापन मिटकर मीठापन आ जाता हे।

समुद्र की भाति यह ससार भी खारा हे। ससार के खारेपन मे से जो मिठास उत्पन्न करता हे वही सच्चा भक्त है। लेकिन आज के लोग खारे समुद्र से मिठास न निकालकर खारापन ही निकालते हें, जिससे आप भी मरते हें और दूसरो को भी मारते हें। मगर सच्चे भक्त की स्थिति ऐसी नहीं होती। भक्त ससार मे रहता हुआ भी उसके खारेपन मे नही रहता। वह समुद्र मे मछली की भाति मिठास मे ही रहता हे।

आषाढ़ कृष्णा 8

ससार खारा ओर अथाह हे। इसमे दम घुटकर मरना सभव हे। लेकिन भक्त लोग अपने भीतर भगवद्भक्ति रूपी ताजी हवा भर लेते हें, जिससे वे ससार मे फस कर मरते नही हें। यद्यपि प्रकट रूप मे भक्त ओर साधारण मनुष्य मे कुछ अन्तर नहीं दिखाई देता, लेकिन वास्तव मे उनमे महान अन्तर होता हे। भक्त का आत्मा ससार के खारेपन से सदा बचा रहता हे।

जिस समय आपकी आत्मा अपना स्थान खोजने के लिए खडी हो जाएगी उस समय उसे यह भी मालूम हो जाएगा कि उसका घर कहा हे? आत्मा मे यह स्वाभाविक गुण हे कि खडी होने के बाद वह अपने घर की दिशा को जान लेगी, धोखा नही खाएगी। रात–दिन हिसा मे लगे रहने वाले ओर हिसा से ही जीवनयापन करने वाले हिसक प्राणी की आत्मा मे भी तेज मोजूद हे।

मनुष्य अपने सुख दुख इष्ट, अनिष्ट की तराजू पर दूसरो के सुख दुख को एव इष्ट–अनिष्ट को तोले।

आषाढ कृष्णा 9

यो तो अचेत अवस्था मे पडे हुए आत्मा मे भी राग–द्वेष प्रतीत नही होते फिर भी यह नही कहा जा सकता कि अचेत आत्मा राग–द्वेष से रहित हो गया है। जो आत्मा ज्ञान के आलोक मे राग–द्वेष को देखता है–रागद्वेष के विपाक को जानता है और फिर उसे हेय समझकर उसका नाश करता हे वही रागद्वेष का विजेता हे। दुमुही का क्रुद्ध न होना क्रोध को जीत लेने का प्रमाण नही है। क्रोध न करना उसके लिए स्वाभाविक हे। अगर कोई सर्प ज्ञानी होकर क्रोध न करे तो कहा जायेगा कि उसने क्रोध को जीत लिया है जैसे चडकोशिक ने भगवान् के दर्शन के पश्चात् क्रोध को जीता था। जिसमे जिस वृत्ति का उदय ही नही है, वह उस वृत्ति का विजेता नही कहा जा सकता। अन्यथा समस्त बालक काम–विजेता कहलाएगे।

विजय सघर्ष का परिणाम हे। विरोधी से सघर्ष करने के पश्चात् विजय पाने वाला विजेता कहलाता हे। जिसने सघर्ष ही नही किया उसे विजेता का महान् पद प्राप्त नही होता। विजय ओर सघर्ष, दोनो के लिए ज्ञान अनिवार्य हे।

आषाढ कृष्णा 10

अज्ञानी पुरुष अगर अपने विरोधी को नही पहचानता तो वह सघर्ष मे कैसे कूद सकता हे? और अगर कूद भी पडता है तो विजय के साधनो से अनभिज्ञ होने के कारण विजेता कैसे हो सकता है?

केले के पेड के छिलके उतारोगे तो क्या पाओगे? सिवाय छिलको के और कुछ भी न मिलेगा। अगर उसे ऐसा ही रहने दोगे और उसमे पानी देते रहोगे तो मधुर फल प्राप्त कर सकोगे। जब केले का वृक्ष छिलके उतारने पर फल नही देता ओर छिलके न उतारने पर फल देता है तो छिलके क्यो उतारे जाए?

यही बात धर्म के विषय मे समझना चाहिए। अनेक लोगो को तर्क–वितर्क करके धर्म के छिलके उतारने का व्यसन–सा हो जाता है। मगर यह कोई बुद्धिमत्ता की बात नही हे। समझदार लोग धर्म के छिलके उतारने के लिए उद्यत नही होते, वे धर्म के मधुर फलो का ही आस्वादन करने के इच्छुक होते हें।

आषाढ़ कृष्णा 11

ससारीजन मोह एव अज्ञान के कारण कुटुम्बी–जनो को, धन–दोलत को और सेना आदि को शरणभूत समझ लेते हैं। मगर स्पष्ट है कि वास्तव मे इन सब वस्तुओ मे शरण देने की शक्ति नही है। जव असातावेदनीय के तीव्र उदय से मनुष्य दु ख के कारण व्याकुल वन जाता है तव कोई भी कुटुम्वी उसका त्राण नही कर सकता। कालरूपी सिह जीवरूपी हिरन पर जब झपटता है तो कोई रक्षण नही कर सकता। सेना और धन रक्षक होते तो ससार के असख्य भूतकालीन सम्राट और धनकुबेर इस पृथ्वी पर दिखाई देते। मगर आज उनमे से किसी का भी अस्तित्व नही है। सभी मृत्यु के शिकार हो गये। विशाल सेना खडी रही और धन से परिपूर्ण खजाने पडे रहे, किसी ने उनकी रक्षा नही की। जब ससार का कोई भी पदार्थ स्वय ही सुरक्षित नही है तो वह किसी दूसरे की रक्षा केसे कर सकता है? ससार को त्राण देने की शक्ति केवल भगवान् मे ही हे।

सच्चे वीर पुरुष किसी भी दूसरी चीज पर निर्भर नही रहते ओर न किसी की देखादेखी करते हैं।

आषाढ़ कृष्णा 12

मोह ओर अज्ञान से आवृत ससारीजन जिसे अर्थ कहते हैं वह वास्तव मे अर्थ नही अनर्थ है। अनर्थ वह इस कारण है कि उससे दु ख की परपरा का प्रवाह चालू होता हे। जो दु ख का कारण है उसे अनर्थ न कहकर अर्थ केसे कहा जा सकता हे?

जिसके द्वारा ज्ञान का हरण हो वही सच्चा दुर्गुण है। धन–माल लूटने वाला वेसा वेरी नही हे जेसा वैरी सच्ची बुद्धि बिगाडने वाला होता हे।

जेनधर्म किसी की आख पर पट्टा नही बाधता अर्थात् वह दूसरो की बात सुनने या समझने का निषेध नही करता। जेन–धर्म परीक्षा–प्रधानिता का समर्थन करता हे ओर जिन विषयो मे तर्क के लिए अवकाश हो उन्हे तर्क से निश्चित कर लेने का आदेश देता हे। जेनधर्म विधान करता हे कि अपने अन्तर्ज्ञान स पर्दा हटाकर देखो कि आपको क्या मानना चाहिए ओर क्या नही?

आषाढ कृष्णा 13

भगवान ने कहा है—तू मेरी ही आखो से मत देख अर्थात मेरे कहने से ही मेरे रास्ते पर मत चल। तू स्वय भी अपने ज्ञान—चक्षु से देख ले कि मेरा बतलाया मार्ग ठीक है या नही? तू अपने नेत्रो से भी देखकर निश्चय करेगा तो अधिक श्रद्धा ओर उत्साह के साथ उस पथ पर चल सकेगा।

जो लोग सुदर्शन सेठ की भाति परमात्मा से निर्वैर एव निर्विकार बुद्धि की याचना करते हैं, उन्ही का मनोरथ पूर्ण होता है। इस बात पर दृढ पतीति होते ही विरुद्ध वातावरण अनुकूल हो जाता है।

मै यह बतलाना चाहता हू कि भगवान् महावीर के भक्त दीन कायर डरपोक नहीं होते। उनमे वीरता पराक्रम, आत्म—गोरव आदि सद्‌गुण होते हैं। जिनमे यह सब गुण विद्यमान हैं वही, महावीर का सच्चा अनुयायी है। महावीर का अनुयायी जगत् के लिए अनुकरणीय होता है—उसे देखकर दूसरे लोग अपने जीवन को सुधारते हैं।

आषाढ कृष्णा 14

घर मे घुसकर छिप बैठने मे वीरता या क्षमा नही है। जिन्हे दु ख मे देखकर देखने वाले भी दुखी हो जावे, पर दु ख पाने वाले उसे दु ख न समझे बल्कि देखने वालो को भी सान्त्वना दे—हसा दे, वही सच्चे वीर है। इससे बढकर दूसरी वीरता नही हो सकती। दु ख को सुखरूप मे परिणत कर लेना—अपनी सवेदनाशक्ति के ढाचे मे ढालकर दु खको सुखरूप मे पलट लेना ही भगवान् महावीर की वीरता का आदर्श है।

चण्डकोशिक क्रोध की लपलपाती ज्वालाओ मे झुलस रहा था और भगवान् महावीर को भी झुलसाना चाहता था, परन्तु भगवान् के अन्त करण से करुणा के नीरकण ऐसे निकले कि चण्डकोशिक का भी अन्त करण शान्त हो गया ओर उसे स्थायी शान्ति का पथ मिल गया।

वेश्य वीर होते है कायर नही होते। वैश्यो मे वीरता नही होती, यह मूर्खो का कथन है। वेश्य सुदर्शन की वीरता बेजोड थी।

आषाढ़ कृष्णा 30

नाम पूजनीय नही होता, वेष वन्दनीय नही होता। पूजा या वन्दना गुणो की होती है, और होनी चाहिए।

भगवान् का उपदेश सुनने वाले सादा जीवन क्यो नही व्यतीत करते? उनमे सुदर्शन–सरीखी वीरता क्यो नही आ जाती है? आज बहुसख्यक विचारक भगवान् महावीर के आदर्शो की ओर झुक रहे हैं। उन्हे प्रतीत हो रहा है कि जगत् का कल्याण उन आदर्शों के बिना नही हो सकता। पर भगवान् के आदर्शों पर अटल श्रद्धा रखने वाले लोग लापरवाही करते हैं। वे शायद यह विचार कर रह जाते है कि यह तो हमारे घर का धर्म है! 'घर की मुर्गी दाल बराबर' यह कहावत प्रसिद्ध है।

धर्म आपकी खानदानी चीज है, यह समझकर इसके सेवन मे ढील मत कीजिए। भगवान् महावीर गन्धहस्ती थे, यह बात आपको अपने व्यवहार मे सिद्ध करनी चाहिए। इसे सिद्ध करने के लिए शक्ति–सम्पादन करो।

आषाढ़ शुक्ला 1

अहकार के द्वारा बडे होने से कोई बडा नही होता। सच्चा बडप्पन दूसरो को बडा बनाकर आप छोटे बनने से आता हे। मगर ससार इस सच्चाई को नही समझता। छोटो पर अत्याचार करना आज बडप्पन का चिन्ह माना जाता है।

लोग मोज–शोक त्याग दे, विलासिता जीवन का विसर्जन कर दे तो गरीबो को अपने बोझ से हलका कर सकते हैं, साथ ही अपने जीवन को भी सुधार के पथ पर अग्रसर कर सकते हें।

क्या विलासितावर्द्धक बारीक वस्त्र पहनने से ब्रह्मचर्य के पालन मे सहायता मिलती हे? अगर नही तो अपने जीवन को बिगाडने वाले तथा दूसरो को भी दु ख मे डालने वाले वस्त्रो को पहनने से क्या लाभ हे?

धर्म का मुख्य ध्येय आत्मविकास करना हे। अगर धर्म से आत्मा का विकास न होता तो धर्म की आवश्यकता ही न होती।

आषाढ शुक्ला 2

बहिने चाहे उपवास कर लेगी तपस्या करने को तैयार हो जाएगी परन्तु मोज–शोक त्यागने को तेयार नही होती। कैसे कहा जा सकता है कि ऐसी बहिनो के दिल मे दया हे? एक रुपये की खादी का रुपया गरीब को मिलता है ओर मिल के कपडे का रुपया महापाप मे जाता हे। मिल के कपडे के लिए दिया हुआ रुपया आपको ही परतन्त्र बनाता है। पर यह सीधा–सादा विचार लोगो को नही जचता। इसका मुख्य कारण समभाव का अभाव हे।

जिसके हृदय मे समभाव विद्यमान हे वह एकान्त मे बेठा हुआ भी ससार की भलाई कर रहा हे। जिसका हृदय बुरी भावनाओ का केन्द बना हुआ है, वह एकान्त मे बेठा हुआ भी ससार मे आग फेला रहा हे।

सिद्धो मे और हम मे जब गुणो की मोलिक समानता हे तो जिन गुणो को सिद्ध प्राप्त कर सके है उन्हे हम क्यो नही पा सकते?

आषाढ शुक्ला 3

समभाव अमृत है, विषमभाव विष है। अमृत से काम न चलकर विष से काम चलेगा यह कथन जैसे बुद्धिमान् का नही, मूर्ख का ही हो सकता है, इसी प्रकार समभाव से नही, वरन् विषमभाव से ससार चलता है, यह कहना भी मूर्खो का ही हे।

भाई–भाई मे जब खीचातान आरम्भ होती है, एक भाई अपने स्वार्थ को ही प्रधान मानकर दूसरे भाई के स्वार्थ की तरफ फूटी आख से भी नही देखता तब विषमता उत्पन्न होती हे। विषमता का विष किस प्रकार फैलता हे ओर उससे कितना विनाश एव विध्वस होता हे, यह जानने के लिए राजा कोणिक ओर बहिलकुमार का दृष्टान्त पर्याप्त हे।

जिस मनुष्य के हृदय मे थोडे से भी सुसस्कार विद्यमान है, वह गुणीजनो को देखकर प्रमुदित होता हे। मानव–स्वभाव की यह आन्तरिक वृत्ति हे जो नेसर्गिक हे। जिसके हृदय मे गुणीजनो के देखने पर प्रमोद की लहर नही उठती समझना चाहिए कि उसका हृदय सजीव नही है।

आषाढ शुक्ला 4

जगत् अनादिकाल से हे ओर जगत की भाति ही सत्य आदर्श भी अनादि हे। व्यक्ति कभी होता हे, कभी नही, मगर आदर्श स्थायी होता हे। जो व्यक्ति जिस आदर्श को अपने जीवन मे मूर्तरूप मे प्रतिबिंबित करता हे जिसका जीवन जिस आदर्श का प्रतीक वन जाता हे वह आदर्श उसी का कहलाता है। वस्तुत आदर्श शाश्वत, स्थायी ओर अनादि, अनन्त हे।

प्रकृति पर ध्यान देकर देखो तो प्रतीत होगा कि प्रकृति ने जो कुछ किया हे, उसका एक अश भी ससार के लोगो ने नही किया हे। मगर लोग प्रकृति की पूछ तो करते नही ओर ससार के लोगो की पूजा करते हें। खराब हुई एक आख डाक्टर ने ठीक कर दी तो लोग आजीवन उसके ऐहसानमन्द रहते है, मगर जिस कुदरत ने आखे बनाई हें उसको जीवनभर मे एक बार भी शायद ही याद करते हे। कुदरत ने असख्य आखे बनाई हें डाक्टरो ने कितनी आखे बनाई है? ससारभर के डाक्टर मिलकर कुदरत के समान एक भी आख नही बना सकते।

आषाढ़ शुक्ला 5

मनुष्य–शरीर की तुलना मे ससार की कोई भी बहुमूल्य वस्तु नही ठहर सकती। इस शरीर के सामने ससार की समस्त सम्पत्ति कोडी कीमत की भी नही हे। ऐसा मूल्यवान् मानवदेह महान् कष्ट सहन करने के पश्चात प्राप्त हुआ हे। न जाने किन–किन योनियो मे रहने के बाद आत्मा ने मनुष्ययोनि पाई हे। अतएव शरीर का मूल्य समझो ओर प्राणीमात्र के प्रति समभाव धारण करो। आज तुम जिस जीव के प्रति घृणाभाव धारण करते हो न जाने कितनी वार उसी जीव के रूप मे तुम रह चुके हो। भगवान् का कथन इस सत्य का साक्षी हे।

स्वार्थलोलुप लोभी–लालची लोग कहते हे कि समभाव से ससार का काम नही चल सकता। मगर जो लोग स्वार्थ छोडकर अथवा अपने स्वार्थ के समान ही दसरा क स्वार्थ को महत्व देकर विचार करते हे वे जानते ह कि समभाव से हा ससार का काम चल सकता हे समभाव से ही ससार स्थिर रह सकता ह। समभाव स ही ससार स्वर्ग के समान सुखमय वन सकता हे। समभाव स ही जीवन शान्ति आर सन्ताप से परिपूर्ण वन सकता हे।

आषाढ शुक्ला 6

समभाव के बिना ससार नरक के समान बनता हे। समभाव के अभाव मे जीवन अस्थिर अशान्त क्लेशमय आर सन्तापयुक्त बनता हे। ससार मे जितनी मात्रा मे समभाव की वृद्धि होगी उतनी ही मात्रा म सुख की वृद्धि होगी।

पुण्यरूपी डाक्टर ने यह आखे बनाई हे। आख की थोडी–सी खराबी मिटाने वाले डाक्टर को याद करते हो उसके पति कृतज्ञ होते हो तो उस पुण्य रूपी महान् डाक्टर को क्यो भूलते हो? पुण्य की इन आखो से पाप तो नही करते? दुर्भावना से प्रेरित होकर परस्त्री की ओर तो नही ताकते? भाई! यह आखे बुरे भाव से परस्त्री को देखने के लिए नही हैं।

सघ को हानि पहुचाने वाला व्यक्ति लाखो जीवो को हानि पहुचाता है। प्रत्येक पुरुष स्वच्छन्द हो तो सघ को हानि पहुचे बिना नही रह सकती। सघ की वह हानि तात्कालिक ही नही होती,उसकी परम्परा अगर चल पडती है तो दीर्घकाल तक उससे सघ को हानि पहुचती रहती हे।

आषाढ शुक्ला 7

मनुष्य को जो शुभ सयोग प्राप्त हे, अन्य जीवो को नही। मनुष्य–शरीर किस प्रकार मिला हे, इसे जानने के लिए पिछली बाते स्मरण करो। अगर आप चिर अतीत की घटनाओ पर दृष्टिनिपात करेगे तो आपके रोम–रोम खडे हो जाएगे। आप सोचने लगेगे–रे आत्मा! तुझे कैसी अनमोल वस्तु मिली हे ओर तू उसका केसा जघन्य उपयोग कर रहा हे! हे मानव! तुझे वह शरीर मिला हे, जिसमे अर्हन्त, राम आदि पुण्य पुरुष हुए थे। ऐसी उत्तम ओर अनमोल वस्तु पाकर भी तू इसका दुरुपयोग कर रहा हे!

वास्तविक उपदेश वही हे ओर वही प्रभावजनक हो सकता है जिसका पालन कर दिखाया जाय। जीवनव्यवहार द्वारा प्रदर्शित उपदेश अधिक प्रभावशाली तेजस्वी स्पष्ट और प्रतीतिजनक होता है।

वस्तुत मुक्तात्मा ओर ईश्वर मे भेद नही है। जो मुक्तात्मा है वही ईश्वर हे ओर मुक्तात्मा से उच्च कोई सत्ता नही हे।

आषाढ़ शुक्ला 8

कर्म तुम्हारे बनाये हुए हे, कर्मो के बनाये तुम नही हो। जो बनता है, वह गुलाम हे ओर जो बनाता हे, वह मालिक हे। फिर तुम इतने कायर क्यो हो रहे हो कि अपने बनाए हुए कर्मो स आप ही भयभीत होते हो! कर्म तुम्हारे खेल के खिलोने हें। तुम कर्मो के खिलोने नही हो।

प्रथम तो वीर पुरुष सहसा किसी को नमस्कार नही करते, ओर जब एक बार नमस्कार कर लेते हे तो नमस्करणीय व्यक्ति से फिर किसी प्रकार का दुराव नही रखते। वे पूर्णरूप से उसी के हो जाते हैं। उसके लिए सर्वस्व–समर्पण करने मे कभी पीछे पैर नही हटाते।

सर्वज्ञ और वीतराग पुरुष ने जिस धर्म का निरूपण किया हे, जो धर्म शुद्ध हृदय की स्वाभाविक प्रेरणा के अनुकूल है और साथ ही युक्ति एव तर्क से बाधित नही होता तथा जिससे व्यक्ति ओर समष्टि का मगल–साधन होता है, उस धर्म को न त्यागने मे ही कल्याण है।

आषाढ़ शुक्ला 9

यह तन तुच्छ हे ओर प्रभु का धर्म महान् है। यह तुच्छ शरीर भी टिकाऊ नही है, एक दिन नष्ट हो जाएगा। सो यदि यह शरीर धर्म के लिए नष्ट होता हे तो इससे अधिक सद्भाग्य की बात ओर क्या होगी?

भक्त भगवान् पर ऐहसान करके उन्हे नमस्कार नही करता। भगवान् को नमस्कार करने मे भक्त का महान् मगल हे। उस मगल की प्राप्ति के लिए ही भक्त भक्तिभाव से प्रेरित होकर भगवान् के चरणो मे अपने आपको अर्पित कर देता हे।

कर्म हमे बुरी तरह नचा रहे हे असह्य यातनाओ का पात्र बना रहे हें ओर अरिहन्त भगवान ने उन कर्मो का समूल विनाश कर दिया हे। कर्मो की व्याधि से छुटकारा दिलाने वाले महावेद्य वही हो सकते हें जिन्होने स्वय इस व्याधि से मुक्ति पाई हे ओर अनन्त आरोग्य प्राप्त कर लिया हे। अरिहत भगवान ऐस ही ह। इस कारण अरिहन्त भगवान हमारे नमस्कार के पात्र ह। वही शक्तिदाता हें।

आषाढ शुक्ला 10

कई लोगो का कहना है कि [illegible] अनादिकाल से सबध है वह नाश कैसे हो [illegible] का सबध भी अनादि काल का है। [illegible] परम्परा का अन्त हो जाता है। इसी प्रकार [illegible] सकता है। जिस प्रकार प्रत्येक [illegible] दोनो के कार्य—कारण का प्रवाह अनादि है, इसी प्रकार [illegible] तथापि उसका कार्य—कारण का सबध अनादि है।

जिसे नमस्कार किया जाता है वह [illegible] हृदय से नमस्कार किया है तो उसके लिए उसकी [illegible] देना भी मुश्किल बात नही होनी चाहिए।

न्यायोचित व्यापार करने वाला अपने धर्म पर स्थिर [illegible] अन्याय करेगा वह अधर्म की सरिता मे डूबेगा।

आषाढ शुक्ला 11

मगलपाठ एक ऐसी भाव—ओषध है जो निरोग को भी लाभ पहुचाती है ओर रोगी को भी विशेष लाभ पहुचाती है। अतएव प्रत्येक पुरुष उसका पात्र है बल्कि रोगी अधिक उपयुक्त पात्र है। भला देव, गुरु ओर धर्म का स्मरण कराना अनुचित केसे कहा जा सकता है?

साधु विवाह के अवसर पर भी मागलिक सुनाते है। वह इसलिए कि सुनने वालो को ज्ञान हो जाय कि विवाह बन्धन के लिए नही है। विवाह गृहस्थी मे रहने वालो को पारस्परिक धर्मसबधी सहायता—आदान—प्रदान करने के लिए होता है, धर्म का ध्वस करने के लिए नही, बन्धनो की परम्परा बढाने के लिए भी नही। विवाह करके चोपाया—पशु मत बनना, मगर चतुर्भुज देवता बनना।

व्यापार के निमित्त जाने वाले को साधु मगलपाठ(मागलिक) सुनाते है सो इसलिए कि व्यापार के लिए जाने वाला द्रव्य—धन के प्रलोभन मे भाव—धन (आत्मिक सम्पत्ति) को न भूल जाय।

आषाढ शुक्ला 12

जेसे कोई पुरुष अपने किराये के मकान को छोडना नही चाहता फिर भी किराये का पेसा पास मे न होने से मकान छोडना पडता हे इसी प्रकार आत्मा जन्म–मरण के स्वभाव वाला न होने पर भी आयु–कर्म की प्रेरणा से विवश होकर जन्म–मरण करता हे।

जिसका अन्त करण वीतराग भाव से विभूषित हे, उस महापुरुष को मारने के लिए यदि कोई शत्रु तलवार लेकर आवेगा तो भी वह यही विचारेगा कि मे मरने वाला नही हू। जो मरता हे या मर सकता हे, वह में नही हू। में वह हू जो मरता नही और मर सकता भी नही। सच्चिदानन्द, अमूर्त्तिक और अदृश्य मेरा स्वरूप है। मुझे मारने का सामर्थ्य साधारण पुरुष की तो बात क्या, इन्द्र मे भी नही है।

अपनी मातृभूमि पर प्रेम ओर भक्तिभाव रखने का अर्थ यह नही हे कि दूसरे देशो के प्रति द्वेषभाव रखा जाय। हमारा राष्ट्रप्रेम, विश्वप्रेम की पहली सीढी होना चाहिए।

आषाढ शुक्ला 13

ससार मे अनुरक्त गृहस्थ सासारिक भोगौपभोग के साधनभूत पदार्थो के उपार्जन और सरक्षण मे कभी–कभी इतना व्यस्त हो जाता हे कि वह आत्मकल्याण के सच्चे साधनो को भूल जाता हे। उसे भोगोपभोग के साधन ही मगलकारक, शरणभूत और उत्तम प्रतीत होते है। ऐसे लोगो पर अनुग्रह करके उन्हे वास्तविकता का भान कराना साधुओ का कर्त्तव्य हे। अतएव साधु मागलिक श्रवण कराकर उसे सावधान करते हें–'हे भद्र पुरुष! तू इतना याद रखना कि ससार मे चार महामगल हे–अरिहन्त, सिद्ध साधु ओर दयामय धर्म। ससार मे चार पदार्थ सर्वश्रेष्ठ हैं–अरिहन्त सिद्ध, साधु ओर दयामय धर्म अतएव तू अपने मन मे सकल्प कर ले कि मे अरिहन्त का शरण ग्रहण करता हू, सिद्ध का शरण ग्रहण करता हू, मे सन्तो का शरण ग्रहण करता हू, मैं सर्वज्ञ के धर्म का शरण ग्रहण करता हू।

यह मगलपाठ प्रत्येक अवस्था मे सुनाने योग्य हे। अगर कोई पुरुष किसी शुभ कार्य के लिए जाते समय मगलपाठ श्रवण करना चाहे तव तो कोई वात ही नही अगर कोई अशुभ कार्य के लिए जाते समय भी मगलपाठ सुनना चाहे तो उसे भी साधु यह पाठ सुनाने से इनकार नही करेगे।

आषाढ शुक्ला 14

जिस आत्मा के साथ राग–द्वेष आदि विकारो का ससर्ग हे उसे जन्म–मरण का कष्ट भोगना पडता हे। ईश्वर सर्वज्ञ हे, वीतराग हे स्वाधीन हे। किसी भी प्रकार की उपाधिया उसे स्पर्श तक नही कर सकती। ऐसी स्थिति मे ईश्वर पुन जन्म ग्रहण करके अवतीर्ण नही हो सकता।

जेसे सूर्य का पूर्ण प्रकाश फेल जाने पर कोई दीपक भले ही विद्यमान रहे, फिर भी उसका कोई उपयोग नही होता। सब लोग सूर्य के प्रकाश द्वारा ही वस्तुओ को देखते हैं। इसी प्रकार अर्हन् इन्द्रिया होने पर भी इन्द्रियो से जानते देखते नही हे। उनकी इन्द्रियो का होना ओर न होना समान हे।

सच्चा मगल वह हे जिसमे अमगल को लेशमात्र भी अवकाश न हो ओर जिस मगल के पश्चात् अमगल प्रकट न होता हो ओर साथ ही जिससे सबका समान रूप से कल्याण–साधन हो सकता हो, जिसके निमित्त से किसी को हानि या दु ख न पहुचे।

आषाढ़ शुक्ला 15

आज नर ओर नारी की समानता का प्रश्न उपस्थित हे। अतएव स्त्रियो के गर्भाशय का आपरेशन करके सन्ततिनियमन की बात करने वालो से स्त्रिया कहेगी–सन्ततिनियमन के लिये हमारे गर्भाशय का ऑपरेशन क्यो किया जाय? पुरुषो को ही सन्तानोत्पत्ति के अयोग्य क्यो न बना दिया जाय? इस प्रकार कृत्रिम उपायो से सन्ततिनियमन करने मे अनेक मुसीबते खडी हो जाएगी।

जब क्रियामात्र का त्याग करना सम्भव न हो तो पहले उस क्रिया का त्याग करना उचित हे जिससे अधिक पाप होता हो। स्वस्त्री–गमन का त्याग करने से पहले वेश्यागमन का त्याग किया जाता हे।

जब तुम किसी के सत्कार्य की प्रशसा करते हो तो तुम्हारा कर्त्तव्य हो जाता हे कि उसमे यथाशक्ति योग भी दो सिर्फ मुह से वाह–वाह करना आर सहयोग तनिक भी न देना यह तो उस कार्य की अवगणना करना हे।

श्रावण कृष्णा 1

चर्बी लगा वस्त्र चर्बी मिश्रित घी और बाजारु दूध तथा दही वगैरह छोड दोगे तो तुम्हारे हृदय मे अहिंसा का अपूर्व महत्व प्रकाशित होगा।

ब्रह्मचर्य का पालन करने से शरीर मे रोग उत्पन्न होते हैं– यह समझ भूलभरी है। ऐसा कोई उदाहरण आज तक नही देखा गया कि ब्रह्मचर्य के पालन से कोई रोगी हुआ हो। हा ब्रह्मचर्य न पालने से अलबत्ता लोग दुर्बल निर्वीर्य और अशक्त होकर भाति–भाति के रोगो के शिकार होते हैं। ब्रह्मचर्य के पालन से वीर्यलाभ होता है, शक्ति बढती है और वह शक्ति रोगो का स्वत प्रतीकार करती है।

पुरुष स्वय कामभोग के कीट बने हुए हे। इसी कारण विधवाविवाह का प्रश्न समाज के सामने खडा हुआ हे। स्त्री की मृत्यु के बाद अगर पुरुष ब्रह्मचर्य का पालन करे तो विधवाविवाह का प्रश्न ही समाप्त हो जाय।

श्रावण कृष्णा 2

पुरुष स्त्रिया को अगर अजना सती के समान बनाना चाहते हैं, तो उन्हे स्वय पवनकुमार के समान बनना चाहिए। स्त्रिया को अगर राजमती के समान देखना चाहते हैं तो पुरुष अरिष्टनेमि बनने का प्रयत्न क्यो नहीं करते?

तुम आस्तिक हो मानते हो कि हम परलोक से आये है। और परलोक मे जाओगे तो अपने कर्त्तव्य का भी कुछ विचार करो। अल्पकालीन वर्तमान जीवन के लिए अनन्त भविष्य जीवन की उपेक्षा करना बुद्धिमत्ता नहीं है।

लोग कहते है–उत्पन्न सन्तान को मार डालना पाप है मगर गर्भाशय को नष्ट करके सन्तान की उत्पत्ति रोक देना पाप नही है। उन्हे समझना चाहिए कि नदी के मझधार मे मनुष्य को पटक देना जैसे पाप है वैसे ही नौका मे छेद कर देना क्या पाप नही है? अगर मनुष्य की परोक्ष हिंसा से घृणा नहीं की जायगी तो धीरे–धीरे प्रत्यक्ष हिंसा से भी घृणा नही रह जायगी।

श्रावण कृष्णा 3

[illegible]
[illegible]
[illegible]

का भी विचार कर सकते है। जब हृदय मे दया ही नही रहेगी तो यह क्या असम्भव है?

सन्तति–नियमन का सर्वश्रेष्ठ उपाय स्त्री–ससर्ग का त्याग करना है। भगवान अरिष्टनेमि और पितामह भीष्म के पुजारियो को उनका आदर्श अपने सामने सदैव रखना चाहिए।

सन्तान से खर्च मे वृद्धि और कामभोग मे बाधा उपस्थित होती है, इस भावना से सन्तान उत्पन्न न होने देने के उपाय काम मे लाये जाते है। पर ऐसे करने से एक समय आएगा जब वृद्ध भी भाररूप मालूम होगे और उनके नाश के भी उपाय सोचे जाने लगेगे। इसी प्रकार अशक्त होने पर पति पत्नी को और पत्नी पति को अपने रास्ते का काटा समझकर अलग करने की सोचेगा। इस प्रकार कृत्रिम साधनो से सततिनियमन करना घोर विपत्ति को आमन्त्रित करना होगा।

श्रावण कृष्णा 4

आजकल के कई लोगो का कथन है कि ब्रह्मचर्य का पालन किया ही नही जा सकता विषयभोग की कामना पर काबू नही पाया जा सकता, पर प्राचीन लोगो का अनुभव इससे विपरीत है। अमुक व्यक्ति कामवासना को नही जीत सकता इस कारण वह सभी के लिए अजेय है– यह समझना भ्रम है। भारतवर्ष का इतिहास इस भ्रम का भलीभाति निराकरण करता है।

विषयलोलुपता की अधिकता के कारण लोगो मे अपनी सन्तान के प्रति भी द्रोहभावना उत्पन्न हो गई है। सन्तान को विषयभोग मे बाधक मानकर और उस बाधा को दूर करके निर्विघ्न रूप से विषयभोग भोगने के उद्देश्य से सन्ततिनियमन के कृत्रिम साधनो का उपयोग करने की हिमायत की जाती है।

गरीबी और बेकारी के दुख से बचने के लिए सन्तति–नियमन का जो उपाय बतलाया जा रहा है वह अत्यन्त हानिकारक अत्यन्त निन्दनीय और अत्यन्त दूषित है।

श्रावण कृष्णा 5

जिस दृष्टि से सन्ततिनियमन के लिए कृत्रिम उपाय काम मे लाये जाते है अथवा अच्छे समझे जाते है उनके भावी परिणाम पर विचार किया जायगा तो विदित होगा कि यह विनाश का मार्ग है।

बेकार रहना—निठल्ले बैठे रहना भी वीर्यनाश का कारण है। जो लोग अपने शरीर को और मन को अच्छे कामो मे नही लगा रखते उनका वीर्य स्थिर नही रह सकता।

जो लोग मिल के बने चटकमटक वाले वस्त्र पहनते हैं वे एक बार खादी पहन देखे तो उन्हे आप ही पता चल जाएगा कि वस्त्रो के साथ पोशाक का कितना सम्बन्ध है?

प्रसूतिगृह मे बहुत सी स्त्रियो की मृत्यु हो जाने के अनेक कारणो मे से छोटी उम्र मे सगर्भा हो जाना भी एक कारण है और पुरुषो का अत्याचार भी इसके लिए कम उत्तरदायी नही है।

श्रावण कृष्णा 6

रात मे अधिक जागना और सूर्योदय के बाद तक सोते रहना तथा अश्लील पुस्तक पढना भी चित्तविकार का कारण है। चित्त के विकार से वीर्य का विनाश होता है।

लोग महापुरुषो और महासतियो के जीवनचरित्र पढने के बदले अश्लीलता से भरी पुस्तक पढते है। उन बेचारो को नही मालूम कि वे अपने भीतर विष भर रहे है।

नाटक—सिनेमा की आजकल धूम मची हुई है। मगर उनमे जो अश्लील चित्र प्रदर्शित किये जाते हैं वे समाज के घोर नैतिक पतन के कारण बने हुए है, जो अपने वीर्य की रक्षा करना चाहते है उन्हे नाटक—सिनेमा को दूर से ही हाथ जोड़ लेने चाहिए।

[illegible] कहती है तुझ कैसा [illegible] चाहिए? [illegible] चाहिए? [illegible] [illegible] भर रहा हैं।

श्रावण कृष्णा 7

ससार की दशा सुधारने के लिए महापुरुषो ने जो आचरण किया है ओर जिस रास्ते पर वे चले है उसी पर चलने के लिए वे दुनिया के लोगो को आहान कर गये है कि–काल की विषमता के कारण कदाचित तुम्हे सूझ न पडे कि क्या कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य है तो तुम हमारे आचरण को दृष्टि मे रखना। हम जिस मार्ग पर चले हैं उसी मार्ग पर तुम भी चलना। उलटा मार्ग ग्रहण मत करना। इसी मे तुम्हारा कल्याण है।

पोशाक का भावना के साथ गहरा सम्बन्ध है। ऐसा न होता तो ब्रह्मचर्यमय जीवन बिताने वालो के लिए खास तरह के वस्त्रो का विधान क्यो किया जाता ? जो ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहता है वह चाहे पुरुष हो या स्त्री उसकी पोशाक सर्वसाधारण की पोशाक से जुदी होनी चाहिए।

शरीर की चर्बी बढ जाना शक्ति का प्रतीक नही। मनोबल का बढ जाना ओर उसे काबू मे रखना ही सच्ची शक्ति है।

श्रावण कृष्णा 8

स्त्रियो के लिए पतिव्रत धर्म है तो पुरुषो के लिए पत्नीव्रत धर्म क्यो नही है? धनवान लोग अपने जीवन का उद्देश्य भोग–विलास करना समझते है। स्त्री मर जाए तो भले मर जाए। पैसे के बल पर वे दूसरी शादी कर लेगे। इस प्रकार एक पत्नीव्रत की भावना न होने से अनेक स्त्रिया पुरुषो की विषयलोलुपता का शिकार हो रही है।

पति–पत्नी का एक ही बिस्तर पर शयन करना वीर्यनाश का सबल [illegible] है। एक ही मकान मे ओर एक ही बिस्तर पर सोने से वीर्य स्थिर नही रह सकता। शास्त्र मे सब जगह स्त्री ओर पुरुष का अलग–अलग शयनागार [illegible] का वर्णन मिलता है। पर आज लोग इस नियम को भूल गये है।

[illegible] वीर्य के प्रताप से बिना दाँत गिरे बिना आखो की जोत घटे [illegible] हुए [illegible] तक जीवित रहा जा सकता है उस वीर्य का [illegible] के लिए नष्ट कर देना कितनी मूर्खता है?

श्रावण कृष्णा 9

आज वालको ओर वृद्धो का भोजन एक सरीखा हो रहा हे। वृद्ध बालको को अपने साथ ही भोजन करने विठलाते हें ओर कहते हे– बालक को साथ बिठलाए बिना भोजन केसे अच्छा लगेगा? उन्हे पता नही कि जिस भोजन मे मिर्च–मसाले का उपयोग किया गया हे, जो भोजन गरिष्ठ ओर तामसिक हे वह बालको के योग्य केसे कहा जा सकता हे? ऐसे भोजन से बालको की धातु का क्षय होता हे।

सधवा ओर विधवा का तथा विवाहिता और कुमारी का भोजन सरीखा नही होना चाहिए। भोजन–सम्बन्धी विवेक न हाने से तथा भावना शुद्ध न होनेसे आज की कुमारिकाए छोटी उम्र मे ऋतुमती हो जाती हे। ओर फिर उनकी सन्तान निर्बल तथा निस्तेज होती हे। अतएव भोजन/सम्बन्धी विवेक और भावना की शुद्धता का ध्यान रखना परमावश्यक हे।

किसी को भोजन देना पुण्य कार्य है, मगर वही सब से बडा कार्य नही हे, बन्धनहीन बनाना सबसे बडा कार्य है।

श्रावण कृष्णा 10

चारो ओर घोर अन्धकार फैला हुआ है। इस अधाधुधी मे लोग इधर– उधर भटक रहे हे। कोई मनुष्य नागिन को माला समझकर गले मे पहन ले या घर मे सहेज कर रक्खे तो यही कहा जाएगा कि वह अन्धा हे– अन्धकार मे डूबा हुआ हे। कोई कह सकता हे कि इतना मूर्ख कोन होगा जो नागिन को माला समझकर गले मे पहन ले? पर मे पूछता हूँ कि चाय क्या नागिन की तरह जहरीली नही हे? और लोग क्या माला की तरह प्रेम से उसे ग्रहण नही कर रहे हे?

माता–पिता को सदेव ऐसी भावना भानी चाहिए कि मेरा पुत्र वीर्यवान ओर जगत का कल्याण करने वाला बने।

कहा जा सकता हे कि भावना से क्या लाभ हे? उत्तर यह हे कि भावना से वडा लाभ होता हे। लोगो को तरह–तरह के स्वप्न आते हें। इसका कारण यही ह कि उनकी भावना तरह–तरह की होती हे। जेसी भावना होती

है वैसा ही स्वप्न आता है और सन्तान के विचार भी वैसे ही बनते है। जिस [illegible] भावना से स्वप्न का निर्माण होता है, उसी पकार भावना से सन्तान के विचारो और कार्यो का निर्माण होता है।

श्रावण कृष्णा 11

जिस दिन चाय से होने वाली हानियो का हिसाब लगाया जाएगा उस दिन अनेक रहस्य खुलेगे। आजकल चुडैल का वहम तो कम होता जा रहा है पर चाय–चुडैल ने नया अवतार धारण किया है जो रात–दिन लोगो का रक्त चूस रही है। इस चुडैल की फरियाद कहा की जाय? न्यायाधीश और राजा सभी तो इसके गुलाम है।

चाय, शराब, तमाखू आदि समस्त नशैली वस्तुए वीर्यहीन बनाती जा रही है। जब आज की प्रजा वीर्यहीन है तो यह भी निश्चित है कि भविष्य की प्रजा ओर ज्यादा वीर्यहीन होगी। अतएव वीर्यरक्षा के लिए नशैली चीजो का त्याग करना आवश्यक है।

आप मे जो शक्ति और जो साहस है वह वीर्य के ही प्रताप से है। वीर्य के अभाव मे मनुष्य चलना–फिरना, उठना–बैठना आदि कार्य भी तो नही कर सकता।

श्रावण कृष्णा 12

अपनी जीभ पर अकुश रखना ब्रह्मचर्य के लिए अत्यावश्यक हे। जो जीभ का गुलाम है उसे ब्रह्मचर्य से भी हाथ धोना पडता है। अतएव ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए सदैव भोजन के सम्बन्ध मे विवेक रखना चाहिये।

तप नियम ज्ञान दर्शन चारित्र सम्यक्त्व ओर विनय का मूल ब्रह्मचर्य है। जैसे वृक्ष के तने डाली फल फूल पत्तो का आधार मूल–जड है [illegible] होने पर ही फल–फूल आदि होते है। जड के सूख जाने पर यह सब [illegible] नही रह सकते इसी प्रकार समस्त उत्तम क्रियाओ का मूल ब्रह्मचर्य [illegible] मजबूती मे ही उत्तम क्रियाऐ निभ सकती है। शुभ क्रियाओ [illegible] पहला है ओर ब्रह्मचर्य के अभाव मे तप सार्थक सिद्ध नही

वीर्य को वृथा बर्बाद करने के बराबर कोई बुराई नही हे। ऐसा करना घोर अन्याय हे ओर अपने पेर पर कुल्हाडा मारना हे।

श्रावण कृष्णा 13

ब्रह्मचर्य की शक्ति पर विचार करने पर शायद ही कोई सभ्य पुरुष होगा जो यह स्वीकार न करे कि हमारे भीतर जो शक्ति हे वह ब्रह्मचर्य की ही शक्ति है। तुम ब्रह्मचर्य की जितनी महिमा गाते हो उससे बहुत अधिक महिमा शास्त्र मे गाई गई है।

यह बुद्धिवाद का युग हे। बुद्धि की कसोटी पर कसने के बाद ही आज कोई बात स्वीकार की जाती है। मगर मे यह कहता हू कि हृदय की कसौटी पर कसने के बाद तुम मेरी बात मानो। बुद्धि की अपेक्षा हृदय की कसौटी अधिक विश्वसनीय है। सभी ज्ञानी पुरुषो ने यही कहा हे।

गुरु तो गुरु हैं ही, मगर सकट भी गुरु है। सकट से उपयोगी शिक्षाए मिलती है।

मनुष्य मे जितनी ज्यादा विनयशीलता होगी उसकी पुण्याई उतनी ही ज्यादा बढेगी।

श्रावण कृष्णा 14

पूर्ण ब्रह्मचारी को समस्त शक्तिया प्राप्त होती हे। कोई भी शक्ति उसके लिए शेष नही रहती। भले ही कोई शक्ति प्रत्यक्ष न दीखती हो लेकिन उसके पीछे अगर शास्त्र की कल्पना हे तो उसे मानने से कोई हानि न होगी।

आज देश मे जहा–तहा रोग शोक दरिद्रता आदि का दर्शन होता हे। इन सबका प्रधान और मूल कारण वीर्यनाश हे। निकम्मी चीज समझकर अज्ञानी लोग वीर्य का दुरुपयोग करते हे। वीर्य मे क्या–क्या शक्तिया हे यह बात न जानने के कारण ही लोग विषय–भोग मे वीर्य को नष्ट कर रहे हे ओर उसी मे आनन्द मान रहे हे। जब ज्यादा सन्तान उत्पन्न हो जाती हे तो घबराने लगते हे फिर भी उनसे विषयभोग का त्याग करते नही बनता। भारतीयो के लिए यह अत्यन्त ही विचारणीय हे।

भोग मे डूबा रहने वाला वर्तमान जीवन मे ही नरक का निर्माण कर लेता हे।

श्रावण कृष्णा 30

समस्त इन्द्रियो पर अकुश रखना, इन्द्रियो को विषय–भोग मे प्रवृत्त न होने देना पूर्ण ब्रह्मचर्य कहलाता है और सिर्फ वीर्य की रक्षा करना अपूर्ण ब्रह्मचर्य है। अपूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करके पूर्ण ब्रह्मचर्य तक पहुचा जाता हे।

भले ही विदेशी लोग ब्रह्मचर्य का महत्व न जानते हो परन्तु भारतवर्ष ने ऐसे–ऐसे महान ब्रह्मचारी हो गये है जिन्होने ब्रह्मचर्य द्वारा अद्भुत शक्तिया प्राप्त करके जगत को यह दिखलाया है कि ब्रह्मचर्य के मार्ग पर चलने से ही मानवसमाज का कल्याण हो सकता है।

फला आदमी खराब है, अमुक मे यह दोष है– इस प्रकार दूसरो की आलोचना करने वाले बहुत है परन्तु अपनी आलोचना करने वाले कम, लोग यह समझना ही नही चाहते कि हम मे कोई दोष है या नही। ऐसे लोग दूसरो का क्या सुधार करेगे जो अपने सुधार की बात भी नही सोच सकते? सच्चा सुधारक अपने से ही सुधार आरम्भ करता है।

श्रावण शुक्ला 1

छुटपन मे बहुत सी चीजे देखी हुई नही होती लेकिन माता के कथन पर विश्वास रखने से तुम्हे हानि हुई या लाभ हुआ? बचपन मे कदाचित् तुम साप को साप भी नही मानते थे फिर भी माता की बात पर विश्वास रखकर तुम साप को साप समझ सके और उसके डसे जाने से बच सके। तो जिनके अन्तकरण मे माता के समान दया रही हुई है उन ज्ञानियो पर विश्वास रखने से तुम्हे किस प्रकार हानि होगी? अतएव जब ज्ञानी कहते हैं कि परमात्मा है और उसकी प्रार्थना करने से जीवन मे शान्ति मिलती हे तो उनके कथन पर विश्वास रखो। इससे तुम्हे हानि नही लाभ ही हागा।

ब्रह्मचर्य किसी साधारण आदमी के दिमाग की उपज नही हे। यह [illegible] बतलाये हुए सिद्धान्तो मे से एक परम सिद्धान्त ह।

[illegible] और [illegible] का जीवन ह। जिन्हे जीवन पसन्द नही ह [illegible]

श्रावण शुक्ला 2

परमात्मा के प्रति विश्वास स्थिर क्यो नही रहता? इस प्रश्न के उत्तर मे ज्ञानियो का कथन हे कि साधना की कमी के कारण ही विश्वास मे अस्थिरता आती हे। उस साधना मे ब्रह्मचर्य का स्थान वहुत ऊचा हे।

उपनिषद् मे कहा हे--तपो वे ब्रह्मचर्यम। अर्थात् ब्रह्मचर्य ही तप हे। जिस तप मे ब्रह्मचर्य को स्थान नही, वह वास्तव मे तप ही नही हे। मूल के अभाव मे वृक्ष नही होता, इसी प्रकार ब्रह्मचर्य के अभाव मे तप नही होता।

दूसरो को कष्ट से मुक्त करने के लिए स्वय कष्टसहिष्णु वनो ओर दूसरे के सुख मे अपना सुख मानो। मानवधर्म की यह पहली सीढी हे।

चाह करने से धन नही आता। ह्रदय मे त्याग की भावना हो तो लक्ष्मी दौडकर चली आती हे।

श्रावण शुक्ला 3

स्वतन्त्रता तो सभी चाहते हैं, लेकिन जो लोग आकाश मे स्वेर विहार करने की भाति केवल लम्बे–लम्बे, भाषण करना ही जानते है, वे परतन्त्रता का जाल नही काट सकते। यह जाल तो जमीन खोदने वाले किसान ही काट सकते हैं।

नीति दिमाग की पेदाइश हे धर्म ह्रदय की। नीति अपनी ही रक्षा करने का विधान करती है अपने आश्रित लोग भले ही भाड मे जाए। मगर धर्म का विधान यह हे कि स्वय चाहे कष्ट सहन करो, परन्तु दूसरो को सुखी बनाओ।

धर्म कहता हे–दो– नीति कहती हे। लाए जाओ। नीति की नजर स्वार्थ पर ओर धर्म की दृष्टि परमार्थ पर लगी रहती हे।

चर्मचक्षुओ से परमात्मा दिखाई नही देता तो इससे क्या हुआ? चर्मचक्षुओ के सिवाय ह्रदयचक्षु भी तो हे और परोक्ष वस्तु जानी भी जाती हे। उसी से परमात्मा को देखो।

श्रावण शुक्ला 4

हम मनुष्य तो हें ही फिर मानवधर्म की हमे आवश्यकता ही क्या ह? ऐसा कहने वाले लोग जिस डाली पर वेठे हें उसी को काटने वाले की

श्रेणी मे आने योग्य हे। उन्हे मालूम नही कि उनकी प्राणरक्षा मानवधर्म की बदोलत ही हो रही है। अगर माता मानवधर्म का पालन न करती और बच्चे को जनमते ही बाहर फैक देती तो जीवनरक्षा कैसे होती?

क्या तुम ऐसी पत्नी नही चाहते जो स्त्रीधर्म का पालन करे? तो फिर साधारण मानवधर्म का पालन स्वय क्यो नही करना चाहते? मानवधर्म का पालन करने के लिए ही पिता सन्तान का पालनपोषण करता है। इस प्रकार धर्म की सहायता के बिना ससार एक श्वास भी तो नही ले सकता। फिर भी लोग धर्म की महिमा नही समझते, यही आश्चर्य है। पति और पत्नी मिलकर दम्पती है। दोनो मे एकरूपता है। दम्पती के बीच अधिकारो को लेने की समस्या ही खडी नही होती। वहा समर्पण की भावना ही प्रधान है।

श्रावण शुक्ला 5

मातृप्रेम के समान ससार मे और कोई प्रेम नही। मातृप्रेम ससार की सर्वोत्तम विभूति हे, ससार का अमृत है। अतएव जबतक पुत्र गृहस्थजीवन से पृथक् होकर साधु नही बना है तबतक माता उसके लिए देवता है।

अहकार का त्याग करके नम्रता धारण करने वाले मनुष्यरूप मे देव हे चाहे वे कितने ही गरीब हो। जिसके सिर पर अहकार का भूत सवार रहता है वह धनवान होकर भी तुच्छ है नगण्य है।

ज्ञान बडा है ओर कल्याणकारी है, लेकिन पुरुष है। भक्ति स्त्री है। ज्ञान ओर भक्ति के बीच मे माया नाम की एक स्त्री और हे। पुरूष को तो स्त्री आर हे। पुरुष को तो स्त्री छल सकती हे, लेकिन स्त्री को स्त्री नही छल सकती। अगर ज्ञान माया द्वारा छला न जाय तो वह भक्ति से ऊचा हे। मगर भक्ति तो पहले ही नम्र हे ओर स्त्री है। माया भक्ति को नही छल सकती। इसलिए ज्ञान ओर भक्ति मे भक्ति ही बडी है।

श्रावण शुक्ला 6

[illegible]-मजूरी करके उदर-पोषण करने मे न लज्जा ह न ओर कोई [illegible] लज्जा की बात तो मांगकर खाना ह।

[illegible] पति के प्रति जो अनुराग होता ह उसी अनुराग का अगर [illegible] परमात्मा के साथ जोड दिया जाय तो वह वीतरागता के रूप [illegible] कर देता ह।

अरे प्राणी! सोता मत रह। जाग। उठ। भाग। भागने के समय पडा क्यो है? तीन भयानक लुटेरे तेरे पीछे पडे हैं। जन्म जरा और मरण तुझे अपना शिकार बनाना चाहते है और तू अचेत पडा हे! प्राणो के रहने पर ही बचने की चेष्टा की जा सकती हे। सामने श्मशान हे। वहा भस्म होना हे ओर यहा शृगार सज रहा हे! जो शरीर भस्म बनने वाला हे उसे सजा रहा हे ओर जो साथ जाने वाला हे उसकी ओर ध्यान ही नही देता!

श्रावण शुक्ला 7

जब तक तुम ससार की किसी भी वस्तु के नाथ वने रहोगे तब तक तुम्हारे सिर पर नाथ रहेगा ही। अगर तुम्हारी इच्छा है कि कोई तुम्हारा नाथ न रहे तो तुम किसी के नाथ मत रहो। अर्थात् जगत् की वस्तुओ पर से अपना स्वामित्व हटा लो, ममत्व त्याग दो, यह समझ लो कि न तुम किसी के हो, न कोई तुम्हारा है।

व्यक्ति की अपेक्षा उस समूह का, जिसमे वह स्वय भी सम्मिलित है, सदैव अधिक मूल्य ठहरेगा। इसलिए मे कहता हू कि एक व्यक्ति की रक्षा की अपेक्षा सम्पूर्ण विश्व की रक्षा का कार्य अधिक महत्वपूर्ण, उपयोगी ओर श्रेयस्कर है।

लोग जैसे शस्त्र मे रक्षा समझते हे, उसी प्रकार पर्दे मे ही लज्जा समझते हे। मगर दोनो मान्यताए भूल से भरी है। घूघट काढ लेना असली लज्जा नही है। असली लज्जा है—परपुरुष को भ्राता, पुत्र समझना और वैसा ही उनके साथ व्यवहार करना।

श्रावण शुक्ला 8

गाफिल! किसके भरोसे बेठा हे? कोन तेरी रक्षा करेगा? फोज? फौज रक्षा करने मे समर्थ होती तो चक्रवर्ती क्यो उसे त्यागते? परिवार तेरी रक्षा करेगा? ऐसा होता तो कोई मरता ही क्यो? ससार की कोई शक्ति ऐसी नही हे जो मनुष्य को मृत्यु का ग्रास होने से वचा सके। काल इतना वलवान हे कि लाख प्रबन्ध करने पर भी आ ही धमकता हे। इसलिए निर्भय ओर अमर बनने का वास्तविक उपाय कर।

दान मे रहता है आदान मे नही। जो दूसरो का सत्व चूस–चूसकर मोटा होना चाहता हे वह मोटा भले ही बन जाय पर पुण्य के लिहाज से वह क्षीण होता जाता हे वह पुण्य के वैभव से दरिद होता रहता है। इसके विपरीत, जो आधी मे से भी आधी देता है, वह ऊपर से भले ही दरिद्र दिखाई देता हो पर भीतर ही भीतर उसका पुण्य का भडार बढता जाता है। उसी पुण्य के भडार मे से महलो का निर्माण होता है और वैभव उसके चरणो मे लोटने लगता है।

श्रावण शुक्ला 9

असल पूजी पुण्य है। जहा पुण्य है वहा दूसरे सहायको की आवश्यकता नही रहती। पुण्य अकेला ही करोडो सहायको से भी प्रबलतर सहायक है। पुण्य त्याग और सद्भाव मे ही रहता है। भोग पुण्य के फल है किन्तु पुण्य को क्षीण बना देते है।

जिस घर को आप अपना समझते है, उसमे क्या चूहे नही रहते? फिर वह घर आपका ही है उनका नही है, ऐसा क्यो? क्या आप भी चूहे की तरह ही थोडे दिनो मे उसे छोडकर नही चल देगे? वास्तव मे ससार मे आपका क्या हे? कोन–सी वस्तु आपका सदा साथ देने वाली है? किस वस्तु को पाकर आपके सकल सकट टल जाएगे। शाश्वत कल्याण का द्वार–किससे खुल जाता हे?

देवी कृपा प्राप्त होना बडी बात अवश्य है, मगर वह धर्मकृत्य का फल ही ह। धर्म का फल तो अनन्त अक्षय अव्याबाध, सुखो से सम्पन्न सिद्धि प्राप्त होना हे।

श्रावण शुक्ला 10

अगर आप अपने परिवार ने शान्ति और प्रेम का वायुमण्डल कायम [illegible] चाहते है तो अणुमात्र भी पक्षपात को हृदय मे न घुसने दो। जहा वस्तु [illegible] रूप से विभाग नही होता वहा क्लेश होने की सम्भावना रहती हे [illegible] क्लेश हुआ वहा परिवार छिन्न–भिन्न हो जाता है।

ऋद्धि वास्तव मे पुण्य से मिलता हे अतएव धन क लोभ मे पडकर पाप मत करो। पाप से धन का विनाश होगा धन का लाभ नही हो सकता। यदि इस सच्चाई पर तुम्हारा विश्वास हे तो फिर धनवान वनने के लिए पाप का मार्ग क्यो स्वीकार करते हो?

सयमी साधु मानव जीवन की उच्चतम अवस्था का वास्तविक चित्र उपस्थित करते हैं, तप ओर त्याग की महिमा प्रदर्शित करते हें ओर उन पवित्र भावनाओ का प्रतिनिधित्व करते हें जिनके सहारे जगत टिका हुआ हे ओर जिनके अभाव मे मनुष्य, मनुष्य मिटकर राक्षस वन जाता हे।

श्रावण शुक्ला 11

जन्म देने वाली तो सिर्फ माता ही हे, मगर जन्मभूमि वडी माता हे, जिसके अन्न–पानी से माता के भी शरीर का निर्माण हुआ हे। जो जन्मभूमि की भक्ति के महत्व को समझेगा वह देवलोक के वस्त्रो को भी धिक्कार देगी।

प्रत्येक वस्तु मे गुण ओर अवगुण–दोनो मिलते हे। वस्तु को देखने के दृष्टिकोण भी भिन्न–भिन्न होते हें। एक आदमी किसी की महान् ऋद्धि देखकर ईर्षा से जल उठेगा ओर पाप का वध कर लेगा ओर दूसरा, जो सम्यग्दृष्टि ओर ज्ञानी हे विचार करेगा कि इस ऋद्धि को देखकर हमे सुकृत्य करने की शिक्षा लेना चाहिए।

भारतवर्ष मे उस समय जीवन की कला अपनी चरम सीमा पर पहुची थी जव बडे–वडे सम्राट और चक्रवर्ती भी अपनी ऋद्धि को त्याग कर भिक्षुक और अनगार का जीवन व्यतीत करते थे एव शुद्ध आत्मकल्याण के ध्येय मे लग जाते थे। तभी ससार त्याग का महत्व समझता था।

श्रावण शुक्ला 12

भारतीयो मे ऐसी दैन्यभावना घुस गई हे कि हम अपने देश के प्राचीन विज्ञान के विकास पर पहले अश्रद्धा ही प्रकट करते हें। जब वही वात कोई पाश्चात्य वेज्ञानिक यन्त्रो द्वारा प्रत्यक्ष दिखला देता हे तो कहने लगते हें– यह वात तो हमारे शास्त्रो मे भी लिखी हे। मेरा विश्वास हे अगर भारतीय

श्रावण शुक्ला 13

अधिकाश लोगो को लक्ष्मी चाहिए लक्ष्मीपति नही। [illegible] चाहिए, 'राम' नही चाहिए। यह चाह रावण की चाह [illegible] सीता को चाहा राम को नही चाहा। इसका फल क्या [illegible]

पुण्यानुबधी पुण्य मनुष्य का दिन-दिन अभ्युदय [illegible] हे ओर ऐसी ऋद्धि दिलाता हे कि उससे ऋद्धिमान भी सुखी होता हे और दूसरे भी। इस पुण्य के उदय से मनुष्य अद्भुत ऋद्धि पा करके भी उसमे [illegible] नही जाता किन्तु जेसे मक्खी मिश्री का रस लेकर उड जाती है उसी प्रकार ऋद्धि को भोगकर मनुष्य उससे विरक्त हो जाता हे ओर तब उसका त्याग करके आगे के उच्चतर चरित्र का निर्माण करता हे।

मोज-शोक वाला जीवन जल्दी नष्ट हो जाता हे। ऐसा जीवन काच के खिलोन के समान हे, जिसके टूटने मे देर नही लगती ओर सादा जीवन हीरे के समान हे जो घनो की चोट सहने पर भी अखण्ड रहता हे।

श्रावण शुक्ला 14

कदाचित् आप दूसरो के विषय मे ठीक फैसला दे सकते हे मगर इससे आपका क्या भला होगा? आपकी भलाई इसमे हे कि आप अपने विषय मे यथार्थ फंसला कर सके।

अगर आपका मन धर्म मे लीन है तो देवता आपके वश मे हो सकते है। मन पाप मे डूबा रहे ओर देवो की सहायता की इच्छा की जाय तो देव आख उठाकर भी नही देखेगे।

दूसरे का भोजन छीनकर आप खा जाना वस्तुत पुण्य नही हे। यह कैसे उचित माना जा सकता हे कि बहुतो को रूखी रोटिया भी न मिले ओर आप बादाम–पाक उडावे।

हीरा, सोने मे जडा जाता हे तब भी चमकता हे ओर जब घनो मे कूटा जाता है तब भी चमकता रहता हे। इसी प्रकार सुख–दु ख मे समान भाव रखने वाला व्यक्ति ही वास्तव मे भाग्यशाली है।

श्रावण शुक्ला 15

लक्ष्मी उसी का आश्रय लेती है जो स्वामी बनकर उसका पालन करे। दास बनने वालो पर लक्ष्मी पूरी तरह नही रीझती और लक्ष्मी का स्वामी बनने का अर्थ यही है कि उससे दूसरो की सेवा की जाय। सुपात्रदान देना, परोपकार मे उसका व्यय करना, आसक्ति न रखना यह लक्ष्मीपति के लक्षण है।

रजोगुण और तमोगुण की शक्ति का फल चर्मचक्षुओ से दिखाई देता है, अतएव लोग समझ लेते है कि इनसे आगे कोई शक्ति नही है। लेकिन इनसे भी परे की, तीसरी सतोगुण की शक्ति की ओर ध्यान दोगे तो मालूम होगा कि वह कितनी जबर्दस्त और अद्भुत हे। ससार के सब झगडे रजोगुण और तमोगुण तक ही पहुचते है। सतोगुण तक उनकी पहुच नही हो पाती। जैसे सोने की कीमत आग मे तपाने से बढ जाती है उसी प्रकार स्त्री की कीमत कष्ट सहन करके धर्म को दिपाने मे हे, भोग–विलास मे पडी रहने से नही।

भाद्रपद कृष्णा 1

वही कथा श्रेष्ठ समझी जानी चाहिए जिसमे भोग के वर्णन के साथ त्याग का भी वर्णन किया गया हो। इसी आदर्श मे जीवन की सम्पूर्णता हे।

केवल भोग जीवन की मलीनता है। जेन–परम्परा जीवन का ... मलीनता मे से निकालकर त्याग और सयम की उज्वलता मे प्रतिष्ठित करना ही उचित मानती है।

जिस सिक्के ने मनुष्यसमाज को मुसीबत मे डाल दिया है ... लक्ष्मी का पद कैसे दिया जा सकता है? समाज मे फेली हुई यह विषमता ... यह वर्गयुद्ध सिक्के की ही देन हें।

धर्म अगर छूत की बीमारी की तरह होता उसका फल दुनिया मे दुख फैलाने वाला, सुव्यवस्था मे बाधा पहुचाने वाला होता तो तीर्थंकर अवतार और दूसरे महापुरुष उसकी जड मजबूत करने के लिए क्या इतना उद्योग करते? जिन लोगो ने धर्म के शास्त्र का मनन किया हे वे जानते ह कि धर्म, परलोक मे ही सुख देने वाला नही, इहलोक मे भी कल्याण – कारी है।

भाद्रपद कृष्णा 2

पुत्र का जन्म होने पर हर्ष और पुत्री के जन्म पर विषाद अनुभव करना लोगो की नादानी है। पुत्री के बिना जगत् स्थिर ही केसे रह सकता हे? अगर किसी के भी घर पुत्री का जन्म न हो तो पुत्र क्या आकाश मे टपकने लगेगे? सामाजिक व्यवस्था की विषमता के कारण पुत्र–पुत्री मे इतना कृत्रिम अन्तर पड गया है। पर यह समाज का दूषित पक्षपात है। जिस पेट से पुत्र का जन्म होता हे उसी पेट से पुत्री का। फिर पुत्री को हीन क्यो समझा जाता हे? सासारिक स्वार्थ के वश मे होकर पुत्री को जन्म देने वाली माता भी पुत्री के जन्म से उदास हो जाती है। ऐसी बहिनो से पूछना चाहिए कि क्या तुम स्त्री नही हो? स्त्री होकर भी स्त्रीजाति के प्रति द्वेष रखना कितनी जघन्य मनोवृत्ति हे। जहा ऐसे तुच्छ विचार हो, वहा सन्तान के अच्छे होने की क्या आशा की जा सकती हे? और ससार का कल्याण किस प्रकार हो सकता हे?

वह अच्छी गृहिणी हे जो अपने सद्गुणो से पति को मुग्ध कर ले। वह शृगार करे या न करे सादा रहे, पर जो काम करे ऐसा करे कि पति को परमात्मा का स्मरण होता रहे।

भाद्रपद कृष्णा 3

लडकी की बडाई इस बात मे हे कि वह अपने मा–बाप के घर से सास–सुसर के घर जाकर उन्हे ही अपना मा–बाप माने, मा–बाप मानकर उनकी सेवा करे ओर समझे कि इनकी सेवा के लिए ही मेरा जन्म हुआ हे। जो मा–बाप अपनी बेटी की भलाई चाहते हें उन्हे ऐसे सस्कार बेटी को अवश्य देने चाहिए।

वैज्ञानिक प्रगति मनुष्य के मस्तिष्क की महिमा को भले प्रकट करती हो, पर उससे मनुष्यता जरा भी विकसित नही हुई हे। जो विज्ञान मनुष्य की मनुष्यता नही बढाता, बल्कि उसे घटाता हे और पशुता की वृद्धि करता हे वह मानवजाति के लिए हितकर नही हो सकता।

जब तक बालक का आहार माता के आहार पर निर्भर हे तब तक माता को यह अधिकार नही कि वह उपवास करे। दया मूलगुण हे और उपवास उत्तरगुण हे। मूलगुण का घात करके उत्तरगुण की क्रिया करना ठीक नही।

भाद्रपद कृष्णा 4

दुनिया की जिस वस्तु के साथ तुम अपना सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हो, उस वस्तु से पहले पूछ देखो कि वह तुम्हे छोडकर तो नही चली जायेगी? यही क्यो, अपने हाथ, पेर, नाक, कान आदि अगो से ही पूछ लो कि वे अन्त तक तुम्हारा साथ देगे या नही? अधबीच मे ही दगा तो नही दे जाएगे? अगर दगा दे जाने की सभावना हे तो उन्हे तुम अपना केसे मान सकते हो? उनके साथ आत्मीयता का सबध किस प्रकार स्थापित कर सकते हो?

जो स्त्रिया गर्भवती होकर भी भोग का त्याग नही करती, वे अपने पेरो पर आप ही कुल्हाडा मारती हे। इस नीचता से बढकर कोई ओर नीचता नही हो सकती। ऐसा करना नेतिक दृष्टि से घोर पाप हे ओर वेद्यक की दृष्टि से अत्यन्त अहितकर है। पतिव्रता का यह अर्थ नही कि वह पति की ऐसी आज्ञा का पालन करके गर्भस्थ बालक की रक्षा न करे। माता को ऐसे अवसर पर सिहनी बनना चाहिए शक्ति बनना चाहिए ओर ब्रह्मचर्य का पालन करके बालक की रक्षा करनी चाहिए।

भाद्रपद कृष्णा 5

अरे क्षुद शक्ति वाले मानव–कीट! तुझे भविष्य की बात सोचने का अधिकार ही क्या हे? जल के बुलबुले की तरह अपने कभी भी समाप्त हो जाने वाले जीवन को लेकर तू मसूबो के ढेर लगा देता है! जानता नही, तेरी शक्ति अदृष्ट के इशारो पर नाचती है!

जो बच्चे अभी व्यवहार को समझ भी नही पाये है, जिनके शरीर की कली अभी तक खिल भी नही पाई, जिन्होने धर्म को नही समझ पाया है, उनके सिर पर विवाह का उत्तरदायित्व लाद देना कहा तक योग्य है? ऐसा करने वाले धोखा खाते है। आश्चर्य है फिर भी उनकी अक्ल ठिकाने नही आती।

आप भगवान् का जाप करते है सो अच्छी बात है, पर उसकी सार्थकता तभी है जब 'परस्त्री माता' का जाप भी जपे। 'परस्त्री माता' का जाप जपने से आत्मा मे बल और जागृति उत्पन्न होती है।

भाद्रपद कृष्णा 6

वे महापुरुष धन्य है जो अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करते है। मगर जिनमे ब्रह्मचर्य पालन करने का धैर्य नही है, उन पर जबर्दस्ती यह बोझा नही लादा जाता। फिर भी विवाहित लोगो को उनका आदर्श अपने सामने रखना चाहिए ओर इस तत्व पर पहुचना चाहिए कि धीरे–धीरे वे पति–पत्नी मिटकर भाई–बहिन की तरह हो जावे।

जो वस्तु आपके देश की उन्नति मे बाधा पहुचाती हो, अथवा जिसके सेवन से आपके धर्म को आघात लगता हो, आपकी कुलमर्यादा भग होती हो, वह वस्तु अगर मुफ्त मे भी मिल रही हो तो भी अगर आप विवेकवान् हे तो उसे स्वीकार नही कर सकते। कौन बुद्धिमान् बिना पैसे मिलने के कारण विष खाने को तेयार होगा?

प्रभु से प्रार्थना करो–हे दीनबन्धु! बिना काम किये हराम का खाने का विचार तक मेरे मन मे न आवे। अधिक काम करके थोडा लेने की ही मेरी भावना बनी रहे।

भाद्रपद कृष्णा 7

जिसे पराया मान रखा हे, उसके प्रति आत्मीयता की भावना स्थापित करने की साधना को ही विवाह कहना चाहिए। विवाह के द्वारा आत्मीयता का सकीर्ण दायरा क्रमश वढता जाता हे और वढते–वढते वह जितना बढ जाय उतनी ही मात्रा मे विवाह की सार्थकता हे। आत्मीयता की भावना को बढाने के लिए शास्त्र मे अनेक प्रकार के विधिविधान पाये जाते है। विवाह भी उन्ही मे से एक हे। यह एक कोमल विधान हे, जिसका अनुसरण करने मे अधिक कठिनाई नही होती। यह वात दूसरी हे कि किसी को विवाह के इस उज्ज्वल उद्देश्य का पता ही न हो और बहुत लोग विवाह करके भी इस उद्देश्य को प्राप्त करने की ओर ध्यान ही न देते हो फिर भी विवाहित जीवन की सफलता इसी मे हे कि पति ओर पत्नी आत्मीयता के क्षेत्र को विशाल से विशालतर बनाते जाए और अत मे प्राणीमात्र पर उसे फैला–विश्वमैत्री के योग्य बन जाए।

बढिया खाना और पहिनना एव जीभ का गुलाम बन जाना पुण्यशाली का लक्षण नही है। पुण्यवान् बनने के लिए जीभ पर अकुश रखना पडता हे।

भाद्रपद कृष्णा 8

झरना मनुष्य को अनोखा पाठ सिखलाता हे। वह अनवरत गति से अनन्त सागर मे मिल जाने के लिए बहता रहता हे। इसी प्रकार मनुष्य भी अगर अनन्त परमात्मा मे मिलने के लिए निरन्तर गतिशील रहे तो कृतकृत्य हो जाय। झरना हमे सिखलाता हे कि निरन्तर प्रगति करना ही जीवन का चिन्ह् है और जडता मृत्यु की निशानी हे।

लोग सवेरे दान करके शाम को दान का फल प्राप्त करना चाहते हैं। मगर फल के लिए अधीर हो उठने से पूरा ओर वास्तविक फल मिलता ही नही हे। फल की कामना फलप्राप्ति मे वडी भारी बाधा हे।

वे गृहस्थ धन्य हे जिनके हृदय मे दया का वास रहता हे ओर दुखी को देखकर अनुकम्पा उत्पन्न होती हे जो यह समझते हे कि मे यहा केवल उपकार करने के लिए आया हू, मेरा घर तो स्वर्ग मे हे।

भाद्रपद कृष्णा 9

स्त्री की शक्ति साधारण नही होती। लोग 'सीता राम' कहते है, 'राम–सीता' नही कहते। इसी प्रकार 'राधा कृष्ण' कहने मे पहले राधा और फिर कृष्ण का नाम लिया जाता है। सीता और राधा स्त्रिया ही थी। तारा जैसी रानी की बदौलत हरिशचन्द का नाम आज भी घर–घर मे प्रसिद्ध है। इन शक्तियो की सहायता से ही उन लोगो ने अलौकिक कार्य कर दिखलाये हे। जेसे शरीर का आधा भाग बेकार हो जाने से सारा ही शरीर बेकार हो जाता हे वैसे ही नारीशक्ति के अभाव मे नर की शक्ति पूरा काम नही करती।

जब तुम किसी को कुछ दो तो उसकी आबरू लेकर मत दो। ऐसा देना ही सच्चा देना है।

आप यदि दृढ बन जावे कि हमारे सामने भय नही आ सकता, मै निर्भय हू, मेरा कोई कुछ भी नही बिगाड सकता, तो वास्तव मे ही कोई भूत–पिशाच आपका कुछ नही बिगाड सकेगा।

भाद्रपद कृष्णा 10

जिसके दिल मे दया का वास है, वही पुण्यवान् है। जो आपापोषी हे आप बढिया खाते–पीते पहिनते–ओढते है, लेकिन पास–पडौस के दुखियो की ओर दृष्टि भी नही करते, उन्हे पुण्यवान् कैसे कहा जा सकता हे?

नैसर्गिक गुण के सामने उपदेश की कोई विसात नही। नैसर्गिक गुण के होने पर मनुष्य की भावना जितनी ऊची होती है उपदेश से उतनी ऊची नही हो सकती।

आज अमीरी का चिन्ह् यह हे कि इधर का लोटा उधर न रखा जाए। ऐसे कर्त्तव्य–कायर अमीर अपने आपको ससार की शोभा समझते हे और दिन–रात कठोर परिश्रम करने वाले कर्त्तव्यपरायण ग्रामीणो को उपेक्षा की दृष्टि से देखते हे। मगर यह अमीर नागरिक एक दिन के लिए ही यह प्रतिज्ञा कर देखे कि वे ग्रामीणो के हाथ से बनी अथवा उनके परिश्रम से पेदा हुई किसी भी वस्तु का उपयोग न करेंगे। उन्हे पता चल जायेगा कि उनकी अमीरी की नींव कितनी मजबूत है।

भाद्रपद कृष्णा 11

ससार की विलासवर्द्धक वस्तुए ही विषयवासना को उत्पन्न करती है। यह सब जीवन को अपवित्र बनाने वाली हे। प्रभो! मुझे ऐसी वस्तुओ से बचाना। मेरा जीवन तेरे ही चरणो मे समर्पित हे।

बाह्य सम्पत्ति के नष्ट हो जाने पर भी जिसके पास सद्विचार और धर्मभावना की आन्तरिक समृद्धि बची हुई हे, वह सोभाग्यशाली हे। इससे विरुद्ध आन्तरिक समृद्धि के न होने पर बाह्य सम्पत्ति का होना दुर्भाग्य का लक्षण हे।

नगर की सडाद से भरी हुई गलियो मे दुर्गन्ध पेदा होती हे, अरुचि पैदा होती है, नाना प्रकार की हैजा–प्लेग आदि बीमारिया पेदा होती हें मगर अन्न नही पैदा हो सकता। उन गलियो मे विषाक्त वायु का सचार होता है प्रणवायु का प्रवेश भी नही होता ओर ग्रामो–ग्रामो मे प्राणो का अनत सचार होता हे, प्रकृति के सौन्दर्य की अनोखी बहार है ओर अन्न के अक्षय भण्डार है।

भाद्रपद कृष्णा 12

बुद्धि की दोड आत्मा की परछाई तक नही पा सकती। आत्मा की शोध बुद्धि की सामर्थ्य से परे हे। यही नही बल्कि बुद्धि के द्वारा आत्मा का कल्याण भी होना सम्भव नही है।

सग्रहपरायणता दूसरे सब पापो का मूल हे।

आत्मा कान का भी कान हे, आख की भी आख हे, रस का भी रस हे। इस प्रकार इन्द्रियो को शक्ति देने वाला इन्द्रियो का अधिपति आत्मा हे। आत्मा अमर हे। अमर होने पर भी उसके अस्तित्व पर विश्वास नही किया जाता, यही भयकर भूल हे। इसी भूल के कारण ज्ञानियो को चिन्ता होती हे। अगर कोई पुरुष हीरे को पत्थर का टुकडा कहे तो जोहरी को चिन्ता होना स्वाभाविक हे।

आत्मबल ही एकमात्र सच्चा बल हे। जिसे आत्मबल की लब्धि हो गई हे उसे अन्य बल की आवश्यकता नही रहती।

भाद्रपद कृष्णा 13

जो मनुष्य घडी को देखकर उसके कारीगर को नही पहचानता वह मूर्ख गिना जाता है। इसी प्रकार जो शरीर को धारण करके इसमे विराजमान आत्मा को नही पहचानता और न पहचानने का प्रयत्न करता है उसकी समस्त विद्या अविद्या है। उसके सब काम खटपट रूप है।

जिस आत्मा के सहारे ससार का व्यवहार चल रहा है उस आत्मा को पहचानना ही उत्तम अर्थ है। यह जीवन का सर्वोतम लक्ष्य है। जीवन की चरम सफलता इसी मे है। जो इन्द्रियो के मोह मे पड जाता है, वह आत्मा को भूल जाता है। वह उत्तम अर्थ को नष्ट करता है।

अगर मुझसे कोई प्रश्न करे कि परमात्मा को प्राप्त करने का सरल मार्ग क्या है? तो मै कहूगा–परमात्मा की प्राप्ती का सरलमार्ग परमात्मा को प्रार्थना करना है। अनन्य भाव से परमात्मा की प्रार्थना या भक्ति करने से परमात्मा का साक्षात्कार हो सकता है।

भाद्रपद कृष्णा 14

आत्मा की मौजूदगी मे तो यह शरीर सौ वर्ष टिका रह सकता है पर आत्मा के अभाव मे कुछ दिनो तक भी नही टिकता। यह शरीर जिसका कार्य हे उस कारणभूत आत्मा को देखो और यह मानो कि सुक्ष्म और स्थूल दोनो की आवश्यकता है पर हमारा ध्येय स्थूल की नही, वरन् सूक्ष्म की उपलब्धि करना ही है। क्योकि स्थूल के आधार पर सूक्ष्म नही किन्तु सूक्ष्म के आधार पर स्थूल है। इस प्रकार अध्यात्मवाद को समझना कुछ कठिन नही हे।

मोटर वायुयान आदि साधनो ने तुम्हारी शक्ति का अपहरण किया है। तुम रेडियो सुनना पसन्द करते हो पर उसे सुनते–सुनते अपने स्वर को भी भूल गये हो।

जहा धर्म के नाम पर खून–खराबी हो वहा यही समझना चाहिए कि धर्म के नाम पर ढोग प्रचलित हे। सच्चा धर्म अहिसा ओर सत्य आदि हे। अहिसा के कारण कही खून–खच्चर नही हो सकता।

भाद्रपद कृष्णा 30

जड साइन्स के चकाचौध मे पडकर साइन्स के निर्माता आत्मा को नही भूल जाना चाहिए। अगर तुम साइन्स के प्रति जिज्ञासा रखते हो तो साइन्स के निर्माता के प्रति भी अधिक नही तो उतनी जिज्ञासा अवश्य रक्खो। साइन्स को पहचानते हो तो आत्मा को भी पहचानने का प्रयत्न करो।

परमात्मा अनन्त सूर्यो से भी अधिक तेजस्वी हे। बडे से बडा पापी परमात्मा को बुलाता है तब भी वह उसके हृदय मे वास करने के लिए आ जाता है। उसका विरुद ही ऐसा है।

इन्द्रियानन्द स्वाभाविक सुख का विकार है। यह सुख परावलम्वी है। प्रथम तो वह ससार की भोग्य वस्तुओ पर अवलम्बित है ओर दूसरे इन्द्रियो पर आश्रित है। इन दोनो का सयोग मिल जाने पर अगर सुख का उदय होता है तो भी वह क्षणिक है। अल्पकाल तक ही ठहरने वाला सुख भी परिमित है और विघ्नबाधाओ से व्याप्त है।

भाद्रपद शुक्ला 1

ईश्वर के बल से शत्रु का सहार करने पर न बेरी रह जाता है, न बेर ही रह पाता है।

जब तक आप अपने बल पर विश्वास रखकर अहकार मे डूबे रहेगे तब तक ईश्वरीय बल नसीब नही होगा। इसी प्रकार अन्य भौतिक बलो पर भरोसा करने से भी वह आध्यात्मिक ईश्वरीय बल आप न पा सकेगे। अहकार का सम्पूर्ण रूप से उत्सर्ग करके परमात्मा के चरणो मे जाने से उस बल की प्राप्ति होती हे।

जो तुम्हारा है वह कभी तुमसे विलग नही हो सकता। जो वस्तु तुमसे विलग हो जाती या हो सकती हे वह तुम्हारी नही हे। परपदार्थो के साथ आत्मीयता का भाव स्थापित करना महान भ्रम हे। इस भ्रमपूर्ण आत्मीयता के कारण जगत अनेक कष्टो से पीडित हे। अगर मे ओर मेरी की मिथ्या धारणा मिट जाय तो जीवन मे एक प्रकार की अलोकिक लघुता निरुपम निस्पृहता ओर दिव्य शाति का उदय होगा।

भाद्रपद शुक्ला 2

बडे–बडे शूरवीर योद्धा जो समुद्र के वक्षस्थल पर क्रीडा करते है, विशाल जलराशि को चीरकर अपना मार्ग बनाते है ओर देवो की भाति आकाश मे विहार करते है, जिनके पराक्रम से ससार थर्राता है, वे भी मृत्यु को समीप देखकर कातर बन जाते है, दीन हो जाते है। लेकिन जो महात्मा आत्मबली होते है। मृत्यु उनके लिए सघन अन्धकार नही है, वरन् स्वर्ग–अपवर्ग की ओर ले जाने वाले देवदूत के समान प्रतीत होती है। इसका कारण क्या है? इसका एकमात्र कारण आत्मबल है।

जो अपने आपको इष्ट और ससार को नाटकरूप देखता है, सारी शक्तिया उसके चरणो की सेवा करने को तैयार रहती है।

जिस साइस ने आज ससार को कुछ का कुछ बना दिया है उसके मूल मे आत्मा की ही शक्ति है। आत्मा न हो तो ससार का काम एक क्षण भी नही चल सकता।

भाद्रपद शुक्ला 3

पर्युषण का अर्थ है–आत्मानुभव मे लीन होना, आत्माभिमुख होकर रहना आत्मा के शुद्ध स्वभाव का चिन्तन करना, आत्मोत्कर्ष, की तेयारी करना आत्मोन्नति के साधनो का सग्रह करना, आत्मनिरीक्षण करना, आत्मा की शक्ति को समझना, आत्मा की वर्त्तमानकालीन दुर्बलता को दूर करना बाह्य पदार्थो से नाता तोडना, आत्मा से भिन्न परपदार्थो पर निर्भर न रहना।

उपवास वह है जिसमे कषायो का विषयो का और आहार का त्याग किया जाता है। जहा इन सबका त्याग हो –सिर्फ आहार त्यागा जाय ओर विषय–कषाय का त्याग न किया जाय वह लघन हे–उपवास नही।

जो अनुष्ठान किया जाय वह आत्मस्पर्शी होना चाहिए मात्र शरीरस्पर्शी नही। जा क्रियाकाण्ड सिर्फ शरीर शोषण करता हे आत्मपोषण नही करता अर्थात आत्मिक गुणो के विकास मे जरा भी सहायक नही होता वह आध्यात्मिक दृष्टि से निष्प्रयोजन हे।

भाद्रपद शुक्ला 4

भाद्रपद मास मे जव समस्त पृथ्वीतल हराभरा ओर प्रसादपूर्ण वन जाता हे तो मयूर अपनी भाषा मे ओर मेढक अपनी भापा मे मानो परमात्मा की स्तुति करने लगते हैं। उस समय पर्युषण पर्व हमे चेतावनी देता हे– ऐ मनुष्य, क्या तू इन तिर्यंचो से भी गया–बीता हे कि सार्थक ओर व्यक्त भापा पाकर भी तू प्रभु की विरुदावली का वखान नही करता, ओर उच्च स्वर से शास्त्रो के पवित्र पाठ का उच्चारण नही करता?

इन दृश्यमान वाह्य पदार्थो मे ही विश्व की परिसमाप्ति नही हो जाती। इन भोतिक पदार्थों से परे एक वस्तु ओर भी विश्व मे विद्यमान हे ओर वह आत्मा है। वह आत्मा शाश्वत है–सनातन है।

पर्युषण पर्व शत्रु को भी मित्र बनाने का आदर्श उपस्थित करता हे। चाहे आपका शत्रु अपनी ओर से शत्रुता का त्याग करे या नही, मगर आपको अपनी ओर से शत्रुता का त्याग कर देना चाहिए।

भाद्रपद शुक्ला 5

वेर भूल जाओ। परस्पर प्रेम का झरना बहाओ जिससे तुम्हारा ओर दूसरे का सताप मिट जाय। शान्ति प्राप्त हो ओर अपूर्व आनन्द का प्रसार हो। लेन–देन मे बोलचाल मे किसी से कोई झगडा हुआ हो, मन–मुटाव हो, कलह हो तो उसे भुला दो। किसी प्रकार की कलुषता हृदय मे मत रहने दो। चित्त के विकारो की होली जलाओ। आत्मिक प्रकाश की दीपमालिका जगाओ। प्राणीमात्र की रक्षा के वन्धन मे बध जाओ तो इस महामहिमामय पर्व(पर्युषण) मे सभी पर्वो का समावेश हो जाएगा।

सवत्सरी पर्व आत्मा को निर्मल बनाने का अपूर्व अवसर हे। छोटी–छोटी बातो मे इस सुअवसर को भूल नही जाना चाहिए।

दान देकर ढिढोरा पीटना उचित नही हे। जो लोग अपने दान का ढिढोरा पीटते हें वे दान के असली फल से वचित हो जाते हैं। अतएव न तो दान की प्रसिद्धि चाहो ओर न दान देकर अभिमान करो।

भाद्रपद शुक्ला 6

अगर मनुष्य के जीवन की धारा निर्झर की जीवनधारा के समान सदा शान्त निरन्तर, अग्रगामी, मार्ग मे आने वाली चट्टानो से भी टकरा कर कभी न रुकने वाली विश्व को सगीत के माधुर्य से पूरित कर देने वाली और निरपेक्षता से बहने वाली बन जाय तो क्या कहना है।

कई लोग समझते है कि बाजार से सीधा लेकर खाने मे पाप नही होता मगर उन्हे पता नही है कि बाजारू चीजे किस प्रकार भ्रष्ट करने वाली हे स्वास्थ्य की दृष्टि से भी वे त्याज्य है और धर्म की दृष्टि से भी। उन धर्मभ्रष्ट करने वाली चीजो को खाकर कोई अपनी क्रिया कैसे शुद्ध रख सकता है?

गरीब की आत्मा मे शुद्ध भावना की जो समृद्धि होती है वह अमीर की आत्मा मे शायद ही कही पाई जाती है। प्राय अमीर की आत्मा दरिद्र होती है और दरिद्र की आत्मा अमीर होती है।

भाद्रपद शुक्ला 7

धर्मभावना मनुष्य को घबराने से रोकती है और कठोर से कठोर प्रसग पर भी शान्तचित्त रहने की प्रेरणा करती है। धर्ममय भावना का आन्तरिक आदेश प्रत्येक परिस्थिति को समभाव से स्वीकार करने की क्षमता पदान करता हे।

चिन्ता किसी भी मुसीबत का इलाज नही। वह स्वय एक बडी मुसीवत है जो सैकडो दूसरी मुसीबतो को घेर कर ले आती है। चिन्ता करने से लाभ क्या होता हे। वह उलटा प्राणो पर सकट ला देता है।

पुण्य करुणा मे है। जो पुण्यवान होगा वही करुणावान होगा। वह दीन–दुखियो से प्रेम करेगा। दरिद्र को देखकर वह नफरत नही करेगा। जिसके माता–पिता निष्ठा वाले होते हे वह बालक भी वेसे ही निष्ठावान होते है।

भाद्रपद शुक्ला 8

हे भद्र पुरुषो! तुम जिस प्रकार सासारिक व्यवहार को महत्व देते उसी प्रकार आध्यात्मिक और तात्विक बात को भी महत्व दो। तुम

व्यावहारिक कार्यो मे जेसे कोशल प्रदर्शित करते हो, वही आध्यात्मिक कार्यो मे क्यो नही दिखलाते?

प्रार्थना मे आत्मसमर्पण की अनिवार्य आवश्यकता रहती हे। प्रार्थना करने वाला अपनी व्यक्तिगत सत्ता को भूल जाता हे। वह परमात्मा के साथ अपना तादात्म्य–सा सम्बन्ध स्थापित कर लेता हे। वस्तुत आत्मोत्सर्ग के बिना सच्ची प्रार्थना नही हो सकती।

ईश्वर का ध्यान करने से आत्मा स्वय ईश्वर वन जाता हे। पर जव तक ईश्वरत्व की अनुभूति नही होती तव तक प्राणियो को ही ईश्वर के स्थान पर आरोपित कर लो। ससार के प्राणियो को आत्मा के समान समझने से दृष्टि ऐसी निर्मल बन जायगी कि ईश्वर को भी देखने लगोगे ओर अन्त मे स्वय ईश्वर बन जाओगे।

भाद्रपद शुक्ला 9

पतिव्रता स्त्री को अपने पति से मिलने की जेसी तडप होती हे उससे कही अधिक गहरी तडप आत्मा को परमात्मा से मिलने की होनी चाहिए।

हे भाइयो मेरा कहना मानते हो तो में कहता हूँ कि दूसरे सब काम छोडकर परमात्मा का भजन करो। इसमे तनिक भी विलम्ब न करो। तुम्हारी इच्छा आत्मकल्याण करने की हे ओर यह अवसर भी अनुकूल मिल गया हे, कल्याण के साधन भी उपलब्ध हे, फिर विलम्ब किस लिए करते हो? कोन जानता हे यह अनुकूल दशा कब तक रहेगी?

फल से बचने की कामना करना व्यर्थ हे। इसके अतिरिक्त कर्म करके उसके फल से बचने की कामना करना एक प्रकार की दीनता ओर कायरता हे। अतएव नवीन कर्मो से वचने के लिए ओर पूर्वकृत कर्मो का समभाव के साथ फल भोगने की क्षमता प्राप्त करने के लिए ही भगवान का स्मरण करना चाहिए।

भाद्रपद शुक्ला 10

अनुभूतिशून्य लोग परमात्मा को तो पाते नही परमात्मा का नाम मात्र पाते हे। परमात्मा परम प्रकर्ष को प्राप्त अनन्त गुणो का अखण्ड समूह हे। वह एक भावमय सत्ता हे पर वहिदृष्टि लोग उसे शब्दमय मान बेठते हे।

अनन्त गुणमय होने के कारण लोग परमात्मा के खण्ड–खण्ड करने पर उतारू हो जाते है। उनके लिए परमात्मा से बढकर परमात्मा का नाम है। अतएव वे नाम को पकड बैठते है। नाम के आवरण मे छिपी हुई विराट और व्यापक सता को वे पहचानते है जिन्हे अन्तर्दष्टि का लाभ हो गया है और जो शब्दो के व्यूह को चीरकर भीतर मर्म तक पहुचने का सामर्थ्य रखते है। वे नाम को गोण ओर वस्तु को पधान मानते है। अतएव हमारे हृदय मे यह दिव्य भावना आनी चाहिए कि परमात्मा सबका है। उसे क्लेश कदाग्रह का साधन बनाकर आपस मे लड–मरना नही चाहिए।

अहिसा का विधि अर्थ है मैत्री, बन्धुता, सर्वभूतप्रेम। जिसने मैत्री या बन्धुता की भावना जागृत नही की है उसके हृदय मे अहिसा का सर्वांगीण विकास नही हुआ है।

भाद्रपद शुक्ला 11

धर्म के नाम पर प्रकट किये जाने वाले भूतकालीन और वर्त्तमानकालीन अत्याचार और जुल्म धर्मभ्रम या धर्मान्धता के कारण ही हुए और हो रहे है। धर्म तो सदा–सर्वदा सर्वतोभद्र ही है। जहा धर्म हे वहा अन्याय–अत्याचार नही फटक सकते।

जो लोग धर्म की आवश्यकता स्वीकार नही करते उन्हे भी जीवन मे धर्म का आश्रय लेना ही पडता हे क्योकि धर्म का आश्रय लिये विना जीवन– व्यवहार निभ ही नही सकता हे।

हिसा के सामने दया क्या कर लेगी? इसका उत्तर यह है कि दया हिसा पर विजय प्राप्त करेगी। जिन्होने अहिसा की उपलब्धि की है जिन्हे अहिसा पर अचल आस्था है, वह जानते है कि अहिसा मे अदभुत ओर आश्चर्यजनक शक्ति विद्यमान है। अहिसा के बल के सामने हिसा गल कर पानी–पानी हो जाती हे।

भाद्रपद शुक्ला 12

जो [illegible] अहिसा को लजावेगा वह अहिसक बन नही सकता। [illegible] अपनी [illegible] को छिपाने के लिए अहिसक होने का ढग रच सकता [illegible] पकड सकता है पर

वास्तव मे वह सच्चा अहिसक नही हे। यो तो सच्चा अहिसावादी एक चिउटी के भी व्यर्थ प्राणहरण करने मे थर्रा उठेगा क्योकि वह सकल्पता हिसा हे। वह इसे महान पातक समझता हे। पर जव नीति या धर्म खतरे मे होगा, न्याय का तकाजा होगा ओर सग्राम मे कूदना अनिवार्य हो जाएगा वह हजारो मनुष्यो के सिर उतार लेने मे भी किचित मात्र खेद प्रकट न करेगा। हा वह इस बात का अवश्य पूर्ण ध्यान रक्खेगा कि सग्राम मेरी ओर से सकल्परूप न हो वरन आरम्भरूप हो।

जिसके शरीर के अग–प्रत्यग से आत्मतेज फूट पडता हो उसे अलकारो की अपेक्षा नही रहती। सच पूछो तो सुन्दरतावर्धन के लिए प्रयुक्त किये जाने वाले ऊपरी पदार्थ आन्तरिक तेज की दरिद्रता को सूचित करते हें। और सौन्दर्य–विषयक सम्यग्ज्ञान के अभाव के परिचायक हैं।

भाद्रपद शुक्ला 13

सत्य विचार, सत्य भाषण ओर सत्य व्यवहार करने वाला मनुष्य ही उत्कृष्ट सिद्धि प्राप्त कर सकता है। जिस मनुष्य मे सत्य नही है, समझना चाहिए कि उसकी देह जीवरहित काष्ठ–पाषाण की तरह धर्म के लिए अनुपयोगी है।

भारतवर्ष ने अहिसा ओर सत्य का जो झण्डा गाडा है उस झडे की शरण ग्रहण करने से ही ससार की रक्षा होगी। अन्य देश जहा तोपो ओर तलवारो की शिक्षा देते है, वहा भारतवर्ष अहिसा का पाठ सिखाता हे। भारत ही अहिसा का पाठ सिखा सकता हे, किसी दूसरे देश की सस्कृति मे यह चीज ही नजर नही आती।

तुम्हारे पास धन नही हे तो चिन्ता करने की क्या बात हे? धन से बढकर विद्या बुद्धि बल आदि अनेक वस्तुए हे। तुम उनका दान करो। धन–दान से विद्यादान क्या कम प्रशस्त हे? नही तुम्हारे पास जो कुछ अपना कहने को हे बस उसी का उत्सर्ग कर दो।

भाद्रपद शुक्ला 14

सब मतावलम्बी यदि गम्भीरतापूर्वक निष्पक्ष दृष्टि से विचार करे तो मालूम होगा कि धर्म की नीव सत्य के ऊपर ही हे ओर वह सत्य सबके लिए

एक ह। उस सत्य का समझ लन पर व ही लाग जो [illegible] पर द्वेष रखते हे द्वेषरहित हाकर एक दूसरे से गले मिलकर भाइ की तरह पेमपूर्वक रह सकते हे।

तुम समझते हो कि हमने तिजारी मे धन को कैद कर लिया है पर धन समझता हे कि हमने इतने बडे धनी को अपना पहरेदार मुकर्रर कर लिया है।

जिस राष्टीयता मे एक राष्ट दूसरे राष्ट्र का सहायक और पूरक रहता हे जिसमे पतिस्पर्धा के वदले पारस्परिक सहानुभूति की प्रधानता होती है, जहा विश्व–कल्याण के पयोजन से राष्टीय नीति का निर्धारण होता है वही शुद्ध राष्टीयता हे। जेसे शरीर का पत्येक अग दूसरे अग का पोषक हे उसी पकार पत्येक राष्ट्र विश्व–शरीर का पोषक होना चाहिए।

भाद्रपद शुक्ला 15

असत्य साहसशील नही होता। वह छिपना जानता हे बचना चाहता हे। क्योकि असत्य मे स्वय बल नही हे। निर्वल का आश्रय लेकर कोई कितना निर्भय हो सकता हे। सत्य अपने आप मे बलशाली हे। जो सत्य को अपना अवलम्ब बनाता हे–सत्य के चरणो मे अपने प्राणो को सोप देता हे, उसमे सत्य का बल आ जाता हे ओर उस बल से वह इतना सवल बन जाता हे कि विघ्न और वाधाए उसका पथ रोकने मे असमर्थ सिद्ध होती हे। वह निर्भय सिह की भाति निस्सकोच होकर अपने मार्ग पर अग्रसर होता चला जाता हे।

तुम अपनी कृपणता के कारण धन का व्यय नही कर सकते पर ध न तुम्हारे प्राणो का भी व्यय कर सकता है।

तुम धन को चाहे जितना प्रेम करो, प्राणो से भी अधिक उसकी रक्षा करो, उसके लिए भले ही जान दे दो, लेकिन धन अन्त मे तुम्हारा नही रहेगा–नही रहेगा–वह दूसरो का बन जायगा।

आश्विन कृष्णा 1

ससार के सभी मनुष्य समान होकर रहे इस प्रकार का साम्यवाद कभी समस्त ससार मे फेल सकता हे लेकिन उस समानता मे जब तक बन्धुता न होगी तब तक उसकी नीव बालू पर खडी हुई ही समझना चाहिए। वायु

के एक झकोरे से साम्यवाद की ही नीव हिल जायगी ओर उसके आधार पर निर्मित की हुई इमारत धूल मे मिल जाएगी। साम्य के सिद्धान्त को अगर सजीव वनाया जा सकता हे तो उसमे वन्धुता की भावना का सम्श्रिण करके ही।

हे दानी, तू दान के वदले कीर्ति ओर प्रतिप्ठा खरीदने का विचार मत कर। अगर तेरे अन्त करण मे ऐसा विचार उत्पन्न हुआ हे तो समझ ले कि तेरा दान दान नही हे, व्यापार हे।

सत्य से पूत सकल्प के प्रभाव से विप भी अमृत वन जाता हे, अग्नि भी शीतल हो जाती हे। सत्सकल्प मे ऐसा महान प्रभाव ओर अद्भुत क्षमता हे।

आश्विन कृष्णा 2

तप एक प्रकार की अग्नि हे जिससे समस्त अपवित्रता, सम्पूर्ण कल्मष एव समग्र अशान्ति भस्म हो जाती हे। तपस्या की अग्नि मे तृप्त होकर आत्मा सुवर्ण की भाति तेज से विराजित हो जाती हे।

गाली देने वाला अपनी जिह्वा का दुरुपयोग करता हे, पाप का उपार्जन करता है। वह मानसिक दुर्बलता का शिकार हे अतएव करुणा का पात्र है। जो करुणा का पात्र हे उस पर क्रोध करना विवेकशीलता नही हे। सो निरर्थक बाते करने की अपेक्षा एक सार्थक कार्य करना अधिक श्रेयस्कर है।

समाज मे शिक्षक का स्थान बहुत ऊँचा हे। शरीर मे मस्तिष्क का जो स्थान हे, वही स्थान समाज मे शिक्षक का हे। शिक्षक विधाता हे, निर्माता हे।

आश्विन कृष्णा 3

प्रकृति के निगूढतर रहस्य ओर सूक्ष्मतम अध्यात्मतत्व वुद्धि या तर्क के विषय नही हें। तर्क उनके निकट भी नही पहुच पाता। ऐसी स्थिति मे वुद्धि या तर्क क भरोसे वेठे रहने वाला सम्यग्ज्ञान से वचित रहता हे।

ज्ञानरहित क्रिया वहुत वार हानिकारक सिद्ध होती हे। इसी प्रकार क्रियारहित ज्ञान तोता रटन्त मन्त्र हे। एक आदमी ने तोते को सिखाय। कि

बिल्ली आवे तो उससे बचना चाहिए। तोते ने यह शब्द रट लिए और रटता रहा। एक बार बिल्ली आई और उसने तोते को अपने निर्दय पजे मे पकड लिया। उस समय भी तोता यही रटता रहा बिल्ली आवे तो उससे बचना चाहिए। लोग कहने लगे– मूर्ख तोता, अब कब बिल्ली आयगी और कब तू बचेगा।

असली सौन्दर्य आत्मा की वस्तु है। आत्मिक सौन्दर्य की सुनहरी किरणे जो बाहर प्रस्फुटित होती है उन्ही से शरीर की सुन्दरता बढती है।

आश्विन कृष्णा 4

ज्ञानी पुरुष मानते हैं– समस्त दु ख समाप्त हो जाते है पर मै कभी समाप्त नही हो सकता।

तुम ऐसी जगह खडे हो जहा से दो मार्ग फटते है। तुम जिधर चाहो, जा सकते हो, एक ससार का मार्ग है दूसरा मुक्ति का। एक बन्धन का, दूसरा स्वाधीनता का।

साधारण जनता को अतिशय भीषण प्रतीत होने वाली घटना को भी मुनिराज अपनी सवेदना के साचे मे ढाल कर सुखरूप परिणत कर लेते है। यही कारण है कि गजसुकुमार मुनि मस्तक जलने पर भी दु ख की अनुभूति से बचे रहे।

भाइयो अगर जीवन मे किसी प्रकार की सिद्धि प्राप्त करना है तो पहले उसका स्वरूप, उसके साधन और उसके मार्ग को समीचीन रूप से समझो और फिर तदनुकूल क्रिया करो। ऐसा किये बिना जीवन सफल नही हो सकता।

आश्विन कृष्णा 5

ससार के पदार्थ अलग–अलग दृष्टियोसे देखे जाने पर अलग–अलग प्रकार के दिखाई देने लगते है। हाडपीजरे को देखकर कोई उसे अपना [illegible] समझता है तो कोई उसे अपनी खोज का साधन मानता है। किसी [illegible] अस्थि–पजर रख दिया जाय तो वह अपना भोजन समझकर [illegible] और अस्थि–पजर किसी डॉक्टर के सामने रख दिया जाय तो [illegible] के लिए उसका उपयोग करता है। ज्ञानी और

अज्ञानी के बीच भी इसी प्रकार का अन्तर हे। अज्ञानी लोग हाडपीजरे का बाहरी रूप देखकर मोहित हो जाते हें, ओर ज्ञानीजन बाहर दिखाई देने वाले रूप के पीछे क्या छिपा हे इस प्रकार का विचार करके वेराग्यलाभ करते हें।

यह स्त्रिया जग जननी का अवतार हें। इन्ही की कूख से महावीर, बुद्ध राम, कृष्ण आदि उत्पन्न हुए हें। पुरुष–समाज पर स्त्री–समाज का वडा भारी उपकार हे। उस उपकार को भूल जाना, उनके प्रति अत्याचार करने मे लज्जित न होना, घोर कृतघ्नता हे।

आश्विन कृष्णा 6

माथे पर अगार रक्खे हो ओर मुनि तपस्या मे लीन हो– यह केसी असम्भव– सी कल्पना है। परन्तु यह असम्भावना अपनी निर्बलता को प्रकट करती है। हमने शरीर और आत्मा के प्रति अभेद की कल्पना स्थिर कर ली है। हमारे अन्त करण मे देहाध्यास प्रबल रूप से विद्यमान हे। हम शरीर को ही आत्मा मान बेठे है। अतएव शरीर की वेदना को आत्मा की वेदना मानकर विकल हो जाते हे। परन्तु जिन्होने परमहस की वृत्ति स्वीकार करके स्व–पर– भेदविज्ञान का आश्रय लेकर अपनी आत्मा को शरीर से सर्वथा पृथक् कर लिया है, जो शरीर को भिन्न और आत्मा को भिन्न अनुभव करने लगते है उन्हे इस प्रकार की शारीरिक वेदना तनिक भी विचलित नही कर सकती। वे सोचते है– शरीर के भस्म हो जाने पर भी मेरा क्या बिगडता हे। मे चिदानन्दमय हू, मुझे अग्नि का स्पर्श भी नही हो सकता।

एक व्यक्ति जब तक अपने ही सुख को सुख मानता रहेगा जब तक उसमे दूसरे के दु ख को अपना दु ख मानने की सवेदना जागृत न होगी तब तक उसके जीवन का विकास नही हो सकता।

आश्विन कृष्णा 7

वास्तव मे अखिल ससार सेवा के सहारे टिका हुआ हे। ससार मे जब सेवाभावना कम हो जाती है तब उत्पात होने लगता है और जव सेवाभावना का उत्कर्ष होता हे तो ससार स्वर्ग बन जाता हे।

अगर आसुरी शक्ति को पराजित करना हे तो दैवी शक्ति का विकास करो। जगत के समस्त महान पुरुष देवी शक्ति का विकास करके ही

महान बने है। दैवी शक्ति के विकास द्वारा आत्मा का कल्याण करना महाजनो का राजमार्ग है।

सेवा आत्मा ओर परमात्मा के बीच सम्बन्ध जोडने वाली शृंखला है।

विपत्ति को सम्पत्ति के रूप मे परिणत करने का एकमात्र उपाय यह है कि विपत्ति से घबडाना नही चाहिए। विपत्ति को आत्मकल्याण का श्रेष्ठ साधन समझकर विपत्ति आने पर प्रसन्न रहना चाहिए।

आश्विन कृष्णा 8

बन्दर के शरीर मे मास को पचाने वाली आते नही ह। इस कारण बन्दर कभी मास नही खाता–फल पर वह टूट कर गिरता हे। जरा विचार करो कि जो प्राणी बन्दर सिर्फ मनुष्य की शक्ल का हे वह तो मास नही खाता। वह अपनी आतो को पहचानता हे। पर मनुष्य कहलाने वाला प्राणी इतना विवेकहीन है कि वह मासभक्षण कर लेता हे।

प्रकृति की पाठशाला मे जो सस्कार मय बोध प्राप्त होता हे वह कॉलेज या हाईस्कूल मे नही मिल सकता। जो महापुरुष जगत के कोलाहल से हटकर जगल मे रह कर प्रकृति से शिक्षा लेते हे वे धन्य हे। उन्ही से सभ्यता का निर्माण होता हे। भारतीय सस्कृति नगरो मे नही, वनो मे ही उत्पन्न हुई ओर सुरक्षित रही है।

भोग के कीडे सिह पैदा नही कर सकते। जिन्हे सचमुच सबल और वीर्यवान सन्तान की कामना हो उन्हे ब्रह्मचर्य का समुचित पालन करना चाहिए।

आश्विन कृष्णा 9

शराब पीने वालो को अपने हित–अहित का, भले–बुरे का तनिक भी भान नही रहता। न्याय–अन्याय ओर पाप–पुण्य के विचार शराब की बदबू मे प्रवेश ही नही कर सकते। शराब पीने वालो के हाथ से हजारो खून हुए हे। दुराचार ओर व्यभिचार तो उसका प्रत्यक्ष फल हे। शराब मे इतनी अधिक बुराइया हे कि कोई भी समझदार ओर विवेकशील पुरुष उनके विरुद्ध अपना मत नही दे सकता।

जव देवता भी ब्रह्मचारी पुरुष क चरणो पर लोटते हें तो मनुष्यो का कहना ही क्या हे? ब्रह्मचर्य मे ऐसी अलोकिक शक्ति होती हे कि समस्त प्रकृति उसकी दासी बन जाती हे। समस्त शक्तिया उसके हाथ का खिलोना बन जाती हे उसकी अनुचरी हो जाती हें ओर ऋद्धिया-सिद्धिया उसके पीछे-पीछे दौडती फिरती हे।

गहना-कपडा नारी का सच्चा आभूषण नही है नारी का श्रेष्ठ आभूषण शील है।

आश्विन कृष्णा 10

विरोध जहा दिखाई पडता हो वहा समन्वय-बुद्धि का अभाव समझना चाहिए। विरोध के विष का मन्थन करके उसमे से अमृत निकालने की कला हमे सीखनी होगी। इस कला के अभाव मे ही अनेक विरोधाभास विरोध बनकर हमारी बुद्धि को विकृत एव भ्रान्त बना देते हे। ससार के इतने मत-मतान्तर किस बुनियाद पर खडे हें? इनकी बुनियाद हैं- सिर्फ समन्वय-बुद्धि का अभाव। अगर हम विभिन्न दृष्टिकोणो मे से सत्य का स्वरूप देखने की क्षमता प्राप्त कर ले तो जगत के एकान्तवाद तत्काल विलीन हो जाएगे और वह विलीन होकर भी नष्ट नही हो जावेगे वरन् एक अखण्ड ओर विराट सत्य को साकार बना जाएगे। नदिया जब असीम सागर मे विलीन होती हे तो वह नष्ट नही हो जाती वरन् सागर का रूप धारण कर लेती हे। इसी प्रकार एक दूसरे से अलग-अलग प्रतीत होने वाले दृष्टिकोण मिलकर विराट सत्य का निर्माण करते हे।

मीठे वचनो की कोई कमी तो हे नही। फिर कठोर ओर कष्टकर वचन कहने से क्या लाभ हे?

आश्विन कृष्णा 11

मनुष्यो के लिए अगर मृग निरर्थक हे तो मृगो के लिए क्या मनुष्य निरर्थक नही हे? निरर्थकता ओर सार्थकता की कसोटी मनुष्य का स्वार्थ होना उचित नही हे। मानवीय स्वार्थ की कसोटी पर किसी की निरर्थकता निर्णय नही किया जा सकता। मृग प्रकृति की शोभा हे। उन्हे जीवित रहने का उतना

ही अधिकार है जितना मनुष्य को । क्या समग्र विश्व का पट्टा किसी ने मनुष्य जाति के नाम लिख दिया? अगर नही तो जगली पशुओ का सुख-चैन से क्यो न रहने दिया जाय।

पति और पत्नी का दर्जा बराबर हे तथापि दोनो मे जो अधिक बुद्धिमान हो उसकी आज्ञा कम बुद्धिमान को मानना चाहिए। ऐसा करने से ही गृहस्थी मे सुख-शान्ति कायम रह सकती है।

पति अगर स्वामी है तो पत्नी क्या स्वामिनी नही हे? पति अगर मालिक कहलाता हे तो पत्नी क्या मालकिन नही कहलाती ?

आश्विन कृष्णा 12

परिवर्तन चाहे किसी को इष्ट हो चाहे अनिष्ट हो, शुभ हो या अशुभ हो, वह होता ही है। ससार ही कोई भी शक्ति उसे रोक नही सकती और सच तो यह हे कि परिवर्तन मे ही गति-प्रगति हे, विकास हे, सिद्धि हे। जहा परिवर्तन नही वहा प्रगति को अवकाश भी नही हे। वहॉ एकान्त जडता एव स्थिरता हे शून्यता हे। अतएव परिवर्तन जीवन है ओर स्थिरता मृत्यु हे। परिवर्तन के आधार पर ही विश्व का अस्तित्व है।

सत्पुरुषो की वीरता रक्षा मे है, प्राणियो के सहार मे नही।

ससार मे एक अवस्था के बाद दूसरी अवस्था होती ही रहती हे। अगर उसमे राग-द्वेष का सम्मिश्रण हो गया तो वह सुख-दु ख देने वाला होगा। अगर राग-द्वेष का सम्मिश्रण न होने दिया ओर प्रत्येक अवस्था मे समभाव रक्खा गया तो कोई भी अवस्था दु ख नही पहुचा सकती। दु ख से बचने का यही एक मात्र उपाय हे।

आश्विन कृष्णा 13

परिवर्तन के चक्र पर चढा हुआ सारा ससार घूम रहा हे। लेकिन मनुष्य मोह के वश होकर किसी परिवर्तन को सुखद ओर कल्याणकारी मान लेता हे ओर किसी को दुखद एव अकल्याणकारी । कोई भी नैसर्गिक परिवर्तन मनुष्य से पूछकर नही होता। वह मानवीय इच्छा से परे है। ऐसी स्थिति मे मनुष्य को यही उचित हे कि वह मध्यस्थभाव से परिवर्तन को देखता रहे ओर समभाव धारण करे।

आज ससार मे ब्रह्मचर्य की अत्यन्त आवश्यकता हे।

दु ख को दु ख मानने पर ही दु ख दुखी वना सकता हे। अगर दु ख को दु ख ही न माना जाय तो वह क्या बिगाड सकता है?

विषयवासना की जड वडी गहनी होती हे। उसे उखाउ फेकने पर ही विरक्ति स्थायी हो सकती हे।

आश्विन कृष्णा 14

जो आत्मरक्षा नही कर सकता, अपने आश्रित जनो की रक्षा नहीं कर सकता वह इज्जत के साथ जीवित नही रह सकता। अपनी जान बचाने के लिए दूसरो का मुह ताकना मनुष्यता नही, यहा तक कि पशुता भी नही है। पशु भी अपनी ओर अपने आश्रित की रक्षा करने का पूरा उद्योग करता हे। कायरता मनुष्य का बडा कलक है। तेजस्वी पुरुष प्राण दे देता है पर कायरता नही दिखलाता ।

सच्चा वीर मृत्यु को खिलौना समझता हे। वह मरने से नही डरता और जो मरने से नही डरता वही सच्चा वीर है। जो मृत्यु का आलिगन करने के लिए तत्पर रहता है उसे मारना किसी के लिए भी आसान नही हे। वास्तव मे वही जीवित रहता है जो मृत्यु की परवाह नही करता। मरने से डरने वाले तो मरने से पहले ही मरे हुए के समान है।

मनुष्य को सद्गुणो के प्रति नम्र और दुर्गुणो के प्रति कठोर होना चाहिए।

आश्विन कृष्णा 30

सुख देने मे सुख है सुख लेने मे सुख नही हे। सुख मागने से सुख नही मिलता है। लोग सुख की भीख मागते फिरते हे। सुख के लिए भिखारी बने फिरते है इसी कारण उन्हे सुख नही मिलता।

मनुष्य की महत्ता और हीनता शिष्टता ओर अशिष्टता वाणी मे तत्काल झलक जाती हे। अतएव सस्कारी पुरुषो को बोलते समय बहुत विवेक रखना चाहिए।

जगत उसी को वन्दना करता हे जो जगत के आघात सहन करता हुआ भी जगत के उपकार मे ही अपना सर्वस्व लगा देता हे।

परमात्मा का शरण लन पर विपत्ति ...

सकती, रुला नही सकती वरन रोत का धैर्य ...

ओर सहने की क्षमता मिलती है।

आश्विन शुक्ला 1

जब अन्तर्दृष्टा अपने स्वरूप मे रमण करता ...

मे डूबा होता हे तो बाह्य स्वरूप भी इतना साम्य ...

हिरण जेसे जन्म–विरोधी पशु भी उसकी गादी मे ...

स्वाभाविक वेरभाव भूल जाते हे। उन्हे पूर्ण अभय मिलता ...

के कारण ही इस प्रकार की निर्वेरवृत्ति प्राणियो मे उदित ...

आत्मा की उपलब्धि दृष्टा की वृत्ति से होती है।

आप परमात्मा के शरण मे गये होगे तो आपको ...

आएगा कि जेसे मे परमात्मा का पुत्र हू इसी प्रकार दूसरे प्राणी ...

सभी जीव मेरे बन्धु ओर मित्र हे।

अहिसा के प्रताप से दु ख भी सुख बन सकता है ओर ...

हो सकता हे आग भी शीतल हो सकती हे ओर कठिन से कठिन ...

सरल हो सकता है।

आश्विन शुक्ला 2

मेत्री उन्ही के साथ स्थापित करनी चाहिए जिनके साथ अभी मेत्री नही वेर है। अतएव प्राणीमात्र को परमात्मा के नाते अपना मित्र मानो। किसी के प्रति वेरभाव मत रक्खो।यही वह मार्ग हे जिससे परमात्मा के शरण मे पहुचा जा सकता है।

वस्तुत मारने की अपेक्षा मरने के लिए अधिक वीरता की आवश्यकता होती हे। लेकिन कुत्ता–विल्ली की मौत मरना वीरता नही, शेर की मोत मरने मे अधिक वीरता हे।

चाहे सुख का समय हो चाहे दु ख का हो, चाहे सम्पत्ति हो या विपत्ति हो परमात्मा को मत भूलना। परमात्मा को सदा याद रखना।

सत्य पर दृढ रहने वाले का जहाज नही डूबा करता। जहाज उसका डूबता हे जो सत्य से भ्रष्ट हो जाता है।

आश्विन शुक्ला 3

ससार के समस्त झगडो की जड क्या हे? असली जड का पता लगाया जाय तो प्रतीत होगा कि सवलो द्वारा निर्वलो का सताया जाना ही सव झगडो का मूल हे। तू सताये जाने वाले निर्वलो का समर्थ सहायक वनना– यही मेरा उपदेश हे ओर यही मेरा आशीर्वाद हे।

सट्टेवाज सो–सो शपथ खाकर भी अपनी शपथ को भग कर ही डालता हे। उसे सट्टे किये विना चेन नही पडता। शरावी शराव न पीने का आज निश्चय करता हे ओर शाम होते–होते उसका निश्चय हवा मे उड जाता है। सट्टा भी दुर्व्यसन हे, मदिरापान भी दुर्व्यसन हे। इसी तरह शिकार करना भी दुर्व्यसन हे। शिकारी की भी वही हालत होती हे जो शरावी ओर सट्टेवाज की।

वडो के वडप्पन को सो गुनाह माफ समझे जाते हे। परन्तु मैं कहता हू कि ससार मे अधिक दोष वडे कहलाने वालो ने ही फेलाये हैं।

आश्विन शुक्ला 4

सूर्य अपने मण्डल मे ही छिपा रहे तो उसकी कद्र केसे हो सकती हे? अपने मण्डल के वाहर निकलने से ही उसकी कद्र हे, इसी मे उसकी सार्थकता हे। मानवशक्ति की सार्थकता भी इसी मे हे कि वह दीन–हीन जनो पर अनुकम्पा करने के समय घर मे ही घुसकर न वेठा रहे।

दूसरे के कल्याण के लिए पिया जाने वाला जहर पीने से पहले ही जहर जान पडता हे ओर उसका पीना कठिन भी होता हे परन्तु पीने के पश्चात् वह अमृत वन जाता हे ओर पीने वालो को अमर बना देता हे।

श्रोत्र आदि इन्द्रियो को सयम की अग्नि मे हवन करना महायज्ञ हे।

अगर आप इतना ख्याल रक्खे कि आपके किसी कार्य से भारत की लाज लुटने न पावे तो भी कुछ कम नही हे।

आश्विन शुक्ला 5

समुद्र नदियो को निमन्त्रण देकर वुलाता नही हे फिर भी समस्त नदिया उसी मे जाकर मिलती हे। इसका कारण यह हे कि समुद्र अपनी

मर्यादा उल्लघन नही करता। ससार की सभी नदिया समुद्र मे ... मिलती हे मगर कभी कोई समुद्र चार अगुल भी नही बढता। ... की भाति मर्यादा की रक्षा करते हे ओर निष्काम रहते हैं उन्हे शान्ति ... है ओर उनके पास ऋद्धि दोड–दोड कर आती हे। इससे विपरीत ... के लिए स्त्री के लिए, या कीर्ति के लिए हाय–हाय करता रहता है ... की ही कामना करता हे उसे कभी शान्ति नही मिलती।

वही बात हमारे काम की हे जो धर्मके साथ गत है। धर्म के ... जिसकी सगति नही उससे हमे कोई प्रयोजन नही।

ज्ञान के सयोग के बिना की जाने वाली क्रिया से भी फल की ... नही होती।

आश्विन शुक्ला 6

साधारण मनुष्यो के लिए इतिहास मे कोई स्थान नही। इतिहास मे आसाधारण मनुष्य ही स्थान पाते हैं। अगर उनकी असाधारणता अनुकरणीय होती हे–देश और जाति के लिए प्रेरणा प्रदान करने वाली होती है तब ... पढने वाले लोग उन्हे मस्तक झुकाते हे। और यदि उनकी आसाधारणता ... होती हे तो लोग घृणा के साथ उन्हे याद करते हे।

ब्रह्मचर्य दिव्य शक्ति ओर दिव्य तेज प्रदान करने वाली महान रसायन हे। जो मनुष्य पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन कर सकता हे उसके लिए कोई भी वस्तु दुर्लभ नही रहती।

बलात सयम पलवाना ओर किसी के अधिकार को लूट लेना धर्मनिष्ठ पुरुष का कर्तव्य नही हे। जो स्वय तो बुढापे मे भी नई दुलहिन लाने से नही चूकता ओर लडकी को विधवा बनाकर ब्रह्मचर्य पलवाना चाहता हे उसके लिए क्या कहा जाए? यह धर्म नही, धर्म की विडम्बना हे। स्वार्थी लोग ऐसे कृत्य करके धर्म को लजाते हे।

आश्विन शुक्ला 7

जिस शान्ति मे से अशान्ति का अकुर न फूटे, जो सदा के लिए अशान्ति का अन्त कर दे वही सच्ची शान्ति हे। सच्ची शान्ति प्राप्त करने के लिए सर्वभूतहितरत अर्थात प्राणीमात्र के कल्याण मे रत होना पडता हे।

जिसका बालकपन बिगड गया, उसका सारा जीवन बिगड गया और जिसका बालकपन सुधर गया उसका सारा जीवन सुधर गया।

आप सच्ची शान्ति चाहते हें तो अपने समग्र जीवनक्रम का विचार करे और उसमे अशान्ति पैदा करने वाले जितने अश हे, उन्हे हटा दे। इससे आप आपका परिवार समाज और देश शान्ति प्राप्त करेगा।

दीनता स्वय एक व्याधि हे। उसका आश्रय लेने से व्याधि केसे मिट सकती है?

आश्विन शुक्ला 8

सच्ची शान्ति भोग मे नही त्याग मे है ओर मनुष्य सच्चे हृदय से ज्यो–ज्यो त्याग की ओर बढता जाएगा त्यो–त्यो शान्ति उसके समीप आती जाएगी।

कुकर्म जहर से बढकर हैं। जब इनकी ओर आपका चित्त खिचने लगे तब आप भगवान शान्तिनाथ का स्मरण किया करो। ऐसा करने से आपका चित्त स्वस्थ होगा, विकार हट जाएगा और पवित्र भावना उत्पन्न होगी।

भोगो मे अतृप्ति है, त्याग मे तृप्ति हे। भोगो मे असतोष ईर्षा ओर कलह के कीटाणु छिपे है। त्याग मे सन्तोष की शाति है। निराकुलता अद्‌भुत आनन्द है, आत्मरमण की स्पृहणीयता है।

तत्वज्ञान की कुशलता इस बात मे हे कि वह वेश्या को भी ज्ञान–प्राप्ति का साधन बना ले।

आश्विन शुक्ला 9

तुम्हारे दोनो हाथो मे से एक मे नरक की ओर दूसरे मे स्वर्ग की चाबी है। जिसका द्वार खोलना चाहो खोल सकते हो।

भूख के कारण जिसके प्राण निकल रहे हे उसे एक टुकडा मिल जाय तब भी उसके लिए वहुत हे। मगर लोगो को उसकी ओर ध्यान देने की फुर्सत ही कहा?

प्रत्येक कार्य को आरम्भ करते समय उसे धर्म की तराजू पर तोल लो। धर्म इतना अनुदार नही हे कि वह आपकी अनिवार्य आवश्यकताओं पर

पाबन्दी लगा दे। साथ ही इतना उदार भी नही है कि आपकी प्रत्यक प्रवृत्ति की सराहना करे।

गहनो मे सुन्दरता देखने वाला आत्मा के सदगुणो के सौन्दर्य को देखने मे अन्धा हो जाता है। त्याग सयम ओर सादगी मे जो सुन्दरता है पवित्रता हे, सात्विकता है, वह भोगो मे कहा?

आश्विन शुक्ला 10

क्रमश अपनी भावना का विकास करते चलने से एक समय आपकी भावना प्राणीमात्र के प्रति आत्मीयता से परिपूर्ण बन जाएगी। आपके अह जो अभी सीमित दायरे मे गाठ की तरह सिमटा हुआ है, बिखर जायगा ओर आपका व्यक्तित्व विराट रूप धारण कर लेगा। उस समय जगत के सुख मे आप अपना सुख समझेगे।

ससार के भोगोपभोग और सुख के साधन असलियत को भुलाने वाले है। यह इतने सारहीन हैं कि अनादि काल से अव तक भोगने पर भी आत्मा इनसे तृप्त नही हो पाया। अनन्त काल तक भोगने पर भी भविष्य मे तृप्ति होने की सम्भावना नही है।

जो कन्याओ की शिक्षा का विरोध करते है वे उनकी शक्ति का घात करते हे। किसी की शक्ति का घात करने का किसी को अधिकार नही है। हा शिक्षा के साथ सत्सस्कारो का भी ध्यान रखना आवश्यक है।

आश्विन शुक्ला 11

हम चाहे कितने ही अशक्त हो कितने ही कम पढे–लिखे हो अगर महापुरुषो के मार्गरूपी पुल पर आरूढ हो जाएगे तो अवश्य ही अपने लक्ष्य को– आत्मशुद्धि को प्राप्त कर सकेगे। महापुरुषो का मार्ग ससार–सागर पार करने के लिए पुल के समान हे। उनके मार्ग पर चलने से सब सिद्धियॉ प्राप्त हो जाती हे।

साप ऊपर की केचुल त्याग दे, मगर विष का त्याग न करे तो उसकी भयकरता कम नही होती। इसी प्रकार जो ऊपर से त्यागी होने का दोग करते हे परन्तु अन्दर के राग–द्वेष आदि विकारो से ग्रस्त है वे महापुरुषो की गणना मे नही आ सकते।

जिस दिन कर्म चेतना के साथ शत्रुता का व्यवहार करता हे उस दिन कुटुम्बजन क्या कर सकते हे? वह व्याकुल भले ही हो जाए ओर सहानुभूति भले प्रकट करे किन्तु कष्ट से छुडाने मे समर्थ नही होते।

आश्विन शुक्ला 12

अपनी आत्मीयता की सीमा क्षुद्र मत रहने दो। तत्व–दृष्टि से देखगे तो पता चलेगा कि अन्य जीवो मे और आपके अपने माने हुए लोगो मे कोई अन्तर नही है।

आत्मा को अमृतमयी बनाओ। यह मत समझो कि माला हाथ मे ले लेने से ईश्वर का भजन हो जायगा। ईश्वर को अपने हृदय मे विराजमान करो। जब तक शरीर मे प्राण है तब तक जैसे निरन्तर श्वास चलता रहता है उसी प्रकार परमात्मा का ध्यान भी चलता रहना चाहिए। ईश्वर को प्राप्त करने के लिए अपथ्य और तामसिक भोजन तथा खोटी सगत को त्याग कर शुद्ध अन्त करण से उसका भजन करोगे तो उसे प्राप्त करने की सिद्धि भी अवश्य मिलेगी।

प्रबल पुण्य का व्यय करके आत्मा ने कान इन्द्रिय प्राप्त की है सो क्या इसलिए कि उसे पाप के उपार्जन मे लगा दिया जाय? नही इनसे परमात्मा की वाणी सुनना चाहिए। यही कानो का सदुपयोग हे।

आश्विन शुक्ला 13

हमला होने पर जो परमात्मा की शरण जाता हे उसे क्षण–क्षण मे सहायता मिले विना नही रहती । जो मन और वाणी के भी अगोचर हे, जिसकी शक्ति के सामने तलवार, आग, जहर ओर देवताओ की शक्ति भी तुच्छ हे उस महाशक्ति के सामने सारा ससार तुच्छ हे।

ऐ साधुओ तुम सावधान होओ। तुमने जिस महान ध्येय को प्राप्त करने के लिए ससार के सुखो का परित्याग किया हे, जिस सिद्धि के लिए तुम अनगार अकिचन ओर भिक्षु हुए हो उस ध्येय को क्षण भर भी मत भूलो। उसकी पूर्ति के लिए निरन्तर उद्योगशील रहो। तुम्हारा प्रत्येक कार्य उसी लक्ष्य की सिद्धि म सहायक होना चाहिए।

आप फूल की छडी बना सकते है तो नागिन क्यो बनाते है। आपकी आत्मा मे जो शक्ति है वह अनन्त पुण्य का निर्माण कर सकती है फिर उसे आप घोर पाप के निर्माण मे क्यो लगा रहे है?

आश्विन शुक्ला 14

धर्मात्मा पुरुष किसी के साथ दगा नही करता। वह प्राण देने को तेयार हो जाता हे पर अपना धर्म नही छोडता । धर्म को वह प्राणो से ज्यादा प्यारा समझता है। धर्म उसके लिए परम कल्याणमय होता है। वह समझता है कि मैं नास्तिक नही, आस्तिक हू। आत्मा अमर है, मै अनन्तकाल तक रहने वाला हू। इसलिए थोडे समय तक रहने वाली तुच्छ चीज के लोभ मे पडकर मैं धर्म का परित्याग नही कर सकता। इस प्रकार विचार करने वाला मनुष्य सदा सुखी रहता है।

सम्यग्ज्ञान के अपूर्व प्रकाश मे दु खो के आद्य स्रोत को देखकर उसे बन्द कर देने से ही दु खो का अन्त आता है। दु खो का आद्य स्रोत आत्मा का विकारमय भाव हे।

तू भ्रम मे क्यो पडा है? अपने अन्तरतर की ओर देख, वही तो वह बडा कारखाना चल रहा है। जहा सुख और दु ख तेरी भावनाओ के साचे मे ढल रहे है।

आश्विन शुक्ल 15

हे मानव! तू बाहरी वेभव मे क्यो उलझा है? स्थूल और निर्जीव पदार्थो के फेर मे क्यो पडा हे? उन्हे सुख–दु ख का विधाता क्यो समझ रहा हे? सुख–दु ख के मूल स्रोत की खोज कर। देख कि यह कहा से और कैसे उत्पन्न होते हैं? अपने मन को स्थिर करके, अपनी दृष्टि को अन्तर्मुखी बनाकर विचार करेगा तो स्पष्ट दिखाई देगा कि तेरा आत्मा ही तेरे सुख और दु ख के आदि का विधाता हे। उसी ने इनकी सृष्टि की है और वही इनका विनाश करता हे। इस तथ्य को समझ जाने पर तेरी बुद्धि शुद्ध ओर स्थिर हो जायेगी आर तू बाह्य पदार्थो पर राग–द्वेष करना छोड देगा। उस अवस्था मे तुझे समता का ऐसा अमृत प्राप्त होगा जो तेरे समस्त दु खो का समस्त व्यथाओ का ओर समस्त अभावो का अन्त कर देगा।

जब राग–द्वेष नही होता तो आत्मा मे समता की सुधा प्रवाहित होने लगती है। उस सुधा मे ऐसी मधुरता होती है कि उसका आस्वादन करके मनुष्य निहाल हो जाता है। आत्मा को सुखी और शान्त बनाने के लिए यह भावना अत्यन्त उपयोगी है।

कार्तिक कृष्णा 1

न तो ज्ञानविकल पुरुष सिद्धि पाता है और न क्रिया–विकल पुरुष सिद्धि पाता है। जब ज्ञान और क्रिया का सयोग होता है तभी मुक्ति मिलती है। जो लोग ज्ञानहीन हें और थोथी क्रिया को ही लिए बैठे हें उन्हे ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। ज्ञान के अभाव मे वे भ्रष्ट हुए बिना नही बच सकते और जो लोग अकेले ज्ञान को ही लेकर बेठे हें और क्रिया को निरर्थक मानते हैं उन्हे क्रिया का भी आश्रय लेना चाहिए। क्रिया के बिना वे भी भ्रष्ट हुए बिना नहीं रहेगे। अनन्त पुण्य की पूजी लगाकर आपने यह मानव भव पाया हे और दूसरी सामग्री पाई है। अब इस सामग्री से आप क्या कमाई कर रहे हें?

ज्ञानी लोग जिसे मूर्ख कहते हैं, उसे अज्ञानी बुद्धिमान् कहते हें और ज्ञानी जिसे बुद्धिमान् कहते है, उसे अज्ञानी मूर्ख कहते हें।

कार्तिक कृष्णा 2

सोने–चादी मे सुख होता तो सबसे पहले सोने–चादी वालो की ही गर्दन क्यो काटी जाती? स्त्री से सुख होता तो जहर क्यो दिया जाता? इन सब बाह्य वस्तुओ से सुख होने का भ्रम दूर कर दे। निश्चय समझ ले कि सुख तेरी शान्ति समता सन्तोष और स्वस्थता मे समाया हे। तेरी भावनाए ही सुख को उत्पन्न करती हें। स्त्री, पुत्र और धनवेभव का अहकार छोड दे।

जो परिस्थिति उत्पन्न हुई हे वह हमारे ही प्रयत्नो का फल हे। हमारे ही प्रयत्न से उसका अन्त होगा। दीन बनकर दूसरे का आश्रय लेने से कुछ हासिल होने वाला नही हे।

दया रूप मोक्षमार्ग ही भगवान का चरण हे ओर उस मोक्षमार्ग को ग्रहण करना ही भगवान के चरण ग्रहण करना है। सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान ओर सम्यकचारित्र को ग्रहण न किया जाय तो भगवान के साक्षात् मिल जाने पर भी कोई प्रयोजन सिद्ध नही होता।

कार्तिक कृष्णा 3

कहा जा सकता हे कि व्यापार मे नफा लेकर धर्म का [illegible] देने मे क्या हानि हे? इसका उत्तर यह हे कि पहले कीचड़ मे [illegible] और फिर धोए जाए, ऐसा करने से क्या लाभ हे?

आरम्भ ओर परिग्रह का त्याग किये विना केवलि-[illegible] धर्म नही सुहाता। यह पीली ओर सफेद मिट्टी (अर्थात सोना और चांदी) [illegible] धर्म का आचरण करने मे बाधक नही है वरन् लोगो की चढ़ी हुई [illegible] बाधक है।

अगर आप धन के सेवक नही हें तो भगवान् की सेवा कर [illegible] हे और यदि धन के सेवक है तो फिर भगवान् के सेवक नही बन [illegible]

पुरुषार्थ करने से कुछ न कुछ फल निकल सकता है मगर [illegible] अपने आपको डुबाना ही है।

कार्तिक कृष्णा 4

चार आने के लिए झूठ बोलना, कम तोलना, कम नापना अच्छी चीज मे बुरी मिलाकर बेचना ओर झूठे दस्तावेज बनाना धन की गुलामी करना नही है तो क्या है? ऐसा धन धनी को भोगता है, धनी उसको नही भोगता।

बुद्धिमत्ता का ढोग छोडकर अगर आप अपने अन्त करण मे बालसुलभ सरलता उत्पन्न कर ले तो कल्याण आपके सामने उपस्थित हो जाय।

क्या ऋद्धिमान् के प्रति ईर्षा करने से आप ऋद्धिशाली हो जाएगे? अथवा वह ऋद्धिशाली ऋद्धिहीन हो जायेगा? अगर आपकी ईर्षा इन दोनो मे से कोई भी परिवर्तन नही कर सकता तो फिर उससे लाभ कहा है? ईर्षा करने से लाभ तो कुछ भी नही होता, उलटी हानि होती है। ईर्षालु पुरुष अपने आपको व्यर्थ जलाता है ओर अपने विवेक का विनाश करता है। वास्तव मे ऋद्धि का बीज पुरुषार्थ हे। पुरुषार्थ करने वाले ही ऋद्धि के पात्र बनते हे।

कार्तिक कृष्णा 5

सच्चा पुरुषार्थी कभी हार नही मानता। वह अगर असफल भी होता है तो उसकी असफलता ही उसे सफलता प्राप्त करने की प्रेरणा करती हे।
[illegible]

मुक्ति का मार्ग लम्बा हे ओर कठिन भी हे, यह सोचकर उस ओर पैर ही न बढाना एक प्रकार की कायरता हे। मार्ग कितना ही लम्बा क्यो न हो, अगर धीरे–धीरे भी उसी दिशा मे चला जायेगा तो एक दिन वह तय हो ही जायेगा, क्योकि काल भी अनन्त है ओर आत्मा की शक्ति भी अनन्त हे। अपने गुणो पर ध्यान न देकर दोषो पर ध्यान देना आवश्यक हे। यह देखना चाहिए कि आत्मा कहा भूल करता हे?

जिसके अन्त करण मे भगवदभक्ति का अखण्ड स्रोत बहता हे वह पुरुष बडा भाग्यशाली हे। उसके लिए तीन लोक की सम्पदा–निखिल विश्व का राज्य भी तुच्छ है।

कार्तिक कृष्णा 6

जैसे मामूली वस्तु भी नदी के प्रवाह मे बहती हुई समुद्र मे मिल जाती है, उसी प्रकार भक्ति के प्रवाह मे बहने वाला मनुष्य ईश्वर मे मिल जाता है अर्थात् स्वय परमात्मा बन जाता हे। भक्ति वह अलोकिक रसायन है जिसके द्वारा नर नारायण हो जाता है। भक्ति से हृदय मे अपूर्व शान्ति और असाधारण सुख प्राप्त होता है।

जिसमे भक्ति है उसमे शक्ति आये बिना न रहेगी।

जो अपनी लघुता को समझता है और उसे बिना सकोच प्रकट कर देता है, समझना चाहिए कि वह अपनी लघुता को त्यागना चाहता हे ओर पूर्णता प्राप्त करने का अभिलाषी है।

दूसरो के दु ख को अपना दु ख मानकर उनकी सहायता करना ओर अपनी सकीर्ण वृत्तियो को व्यापक बना लेना ही आध्यात्मिक उत्कर्ष का उपाय है।

कार्तिक कृष्णा 7

तुम जो भक्ति करो, अपनी अन्त प्रेरणा से करो। दूसरे के दबाव से या दूसरे को खुश करने के उद्देश्य से भक्ति मत करो। ऐसा करने मे परमात्मा की भक्ति से वचित रह जाना पडता हे।

लोग मनुष्य के शरीर को अछूत मानकर उससे परहज करते हे। मगर हृदय की अपवित्र वासनाओ से उतना परहेज नही करते। वास्तव म

अपावन वासनाए ही मनुष्य को गिराती है और ... की आवश्यकता है।

परमात्मा का यह आह्वान है कि तू ... यह मत विचार कि मेरे पास ऋद्धि सम्पदा या ... के पथ पर केसे पाव रख सकूगा। इस विचार का ... ही परमात्मा की शरण मे जा। जेसे कमल के पत्ते पर ... साधारण बूद भी मोती की कान्ति पा जाती है ... सयोग पाकर असाधारण बन जायेगा।

कार्तिक कृष्णा 8

गरीबो की सहायता की पद–पद पर आवश्यकता ... की विशाल और सुन्दर हवेलिया गरीबो के परिश्रम ... का षटरस भोजन गरीबो के पसीने से ही बना है। ... मुलायम वस्त्र गरीबो की मेहनत के तारो से ही बने है।

इस विशाल विश्व मे एक पर दूसरे की सत्ता चल ... सत्ता वह हे जिस पर किसी की सत्ता नही चलती। उस ... समस्त दु खो का अन्त करने वाला है। वह स्वत मगलमयी ... आश्रित को मगलमय बना लेती है।

हृदय ओर मस्तिष्क का अन्तर समझ लेने की आवश्यकता ... के काम प्राय जगत्–कल्याण के लिए होते हे और मस्तिष्क के ... जगत क अकल्याण के लिए हुआ करते हे। कपटाचार मस्तिष्क ... ह जिसमे दिखलाया कुछ जाता हे ओर किया कुछ और जाता है ...

कार्तिक कृष्णा 9

जो शक्ति आखो से देखी नही जा सकती ओर जिसका वाणी द्वारा वर्णन नही हो सकता उस पर विश्वास हुआ, वह शक्ति आपके ध्यान मे आ गई तो आपके भीतर एक अभूतपूर्व ओर अद्भुत शक्ति पेदा होगी। वही शक्ति रसायन हे।

ससार की समस्त शक्तियो से आपकी चेतन्य शक्ति ... अलोकिक हे। जड शक्तियो ...

तालेंगे तो पता चलेगा कि अन्य शक्तिया चेतन्य शक्ति के सामने कुछ भी नही हे—नगण्य हे।

पाप मे वाणी भले हो, कलेजा नही होता।

भगवद्भक्ति की प्राथमिक भूमिका भूतमात्र को अपना भाई मानकर उसके प्रति सहानुभूति रखना हे। प्राणीमात्र के प्रति आत्मभाव रखकर भगवान् की स्तुति करने से कल्याण का द्वार खुलता हे।

कार्तिक कृष्णा 10

हृदय की उपज ओर मस्तक की उपज के कामो की पहचान यह है कि जिस काम से अपना ही भला हो और दूसरे का भी भला हो वह काम हृदय की उपज है। जिन कामो से अपना ही स्वार्थ सिद्ध करना होता हे दूसरे के कल्याण की ओर दृष्टिपात नही किया जाता किन्तु दूसरो को पगु बनाना अभीष्ट होता है, वे काम मस्तिष्क की उपज है। मस्तिष्क की उपज के काम राक्षसी राज्य के हैं और हृदय की उपज के काम राम राज्य के हे।

अगर आपके हृदय मे इस प्रकार की भावना बद्धमूल हो गई कि मनुष्य ईश्वर का प्रतिनिधि है और उसके प्रति दुर्व्यवहार करना परमात्मा के प्रति दुर्व्यवहार करना हे तो आप थोडे ही दिनो मे देखेगे कि आपके अन्त करण मे अपूर्व भक्तिभाव पैदा होगा और आप परमात्मा के सच्चे उपासक बन जाएगे।

विश्व के कल्याण मे ही परमेश्वर का वास हे। ससार के कल्याण की आन्तरिक कामना ही परमेश्वर का दर्शन कराती है।

कार्तिक कृष्णा 11

मनुष्यशरीर स्वाभाविक रीति से बनी हुई ईश्वर की आकृति हे। लाख प्रयत्न करने पर भी कोई कारीगर ऐसी आकृति नही बना सकता। जब मनुष्य परमात्मा की मूर्ति हें तो इन्हे देखकर परमात्मा का ध्यान आना चाहिए।

मत भूलो कि आज जो लखपति हे, वही कल कगाल हो जाता हे। फिर परोपकार करने मे क्यो कृपण बनते हो? कृपणता करके बचाया हुआ धन साथ नही जायेगा किन्तु कृपणता क द्वारा लगने वाला पाप साथ जायेगा।

जीवन के गुलाम ही जीवन ...
की इच्छा पर छोड देते हे।

सत्य क्या शक्तिहीन हे? नहीं। ...
बल पबल हे। सत्य की शक्ति असीम ह। ...
सकता है।

कार्तिक कृष्णा 12

जो तृष्णा की विकराल नदी म ...
सुख तो तभी मिलेगा जब तृष्णा की नदी म ...
से बाहर निकल जाने वाला अक्षय असीम ...
बनता हे।

जो काम एक चुल्लू पानी से हो सकता ...
नही होगा? इसी प्रकार जो काम मन्त्र या भूत ...
से नही होगा?

त्याग के बदले मे किसी वस्तु की कामना ...
ऐसे त्यागी ओर सट्टेबाज मे क्या अन्तर हे? ...
निष्कामभावना से त्याग करता हे।

चाहे नोकर रहो या मालिक बनो जब तक पारस्परिक ...
कमी रहेगी काम नही चलेगा ओर पारस्परिक विश्वास ...
स जनमता हे।

कार्तिक कृष्णा 13

भूत के भय से अगर परमात्मा को स्मरण करते हो तो समझो ...
तुमने परमात्मा को समझ ही नही पाया। उस परमदृष्टा परमात्मा को ...
के पश्चात उसके धर्म को धारण के बाद भी अगर वहम बना रहा तो फिर
कब तुम्हारा उद्धार होगा?

जिस महानुभाव के चित्त मे ईश्वर का दिव्य स्वरूप बस जाता ह
जो दया से भूषित हे अहिसा की भावना से जिसका हृदय उन्नत है, वह कभी
किसी प्राणी का अनिष्ट नहीं करता। अगर कोई उसका अनिष्ट करता हे तो
भी वह उससे बदला लेने का विचार नही करता।

सासारिक वस्तुओ पर जितनी अधिक आसक्ति रखोगे उतनी ही दूर वह होती जाएगी। आसक्ति रखने पर वस्तु कदाचित मिल भी गई तो वह सुख नही, दु ख ही देगी। उदार के पास धन होगा तो वह सुख पाएगा। कजूस उसी धन से व्याकुल रहता हे, वल्कि हाय–हाय करके मरता हे।

कार्तिक कृष्णा 14

प्रभो! मेरे हृदय मे ऐसा भाव भर दो कि मैं किसी के प्रति अन्याय न करू। राजसत्ता का मद मेरे मन को मलिन न होने दे। मे प्रजा की सुख–शान्ति के लिए अपने स्वार्थो को त्यागने के लिए सदैव उद्यत रहू।

ससार के समस्त दु खो की जड है–मेरे–तेरे का भेदभाव। जब तक यह जड हरी–भरी है, दु खो का अकुर फूटता ही रहेगा। दु खो से बचने के लिए इस भेदभावना को नष्ट करना आवश्यक है।

जेसे अमृत बिना धोखे की चीज हे उसी प्रकार परमात्मा की प्रीति भी बिना धोखे की है।

मित्रो! परमात्मा को प्रसन्न करना हो, परमात्मप्रेम जगाना हो तो वह तुम्हारे सामने मूर्त्तिमान् खडा है। उसे अपना लो। दीन–दुखिया से प्रेम लगा कि परमात्मा से प्रेम लग गया।

कार्तिक कृष्णा 30

जाग, ऐ मानव, उठ। समय सरपट चाल से भागा जा रहा हे। तुझे जो क्षण मिला हे वह फिर कभी नही मिलेगा। मनुष्य जीवन की यह अनमोल घडिया अगर भोगविलास मे गवा देगा तो सदा के लिए पश्चात्ताप करना ही तेरी तकदीर मे होगा। इसलिए अक्षय कल्याण की साधना के मार्ग पर चल। देख, अनन्त मगल तेरे स्वागत की प्रतीक्षा कर रहा हे।

तप से शरीर भले दुर्वल प्रतीत हो मगर आत्मा असाधारण बलशाली वन जाती हे।

गृहस्थ अगर प्राणीमात्र के प्रति मेत्रीभावना धारण नही कर सकता तो इसके मायने यह हुए कि वह धर्म का ही पालन नही कर सकता। क्या धर्म इतना सकीर्ण हे कि सर्वसाधारण उससे लाभ नही उठा सकते? धर्म का प्रागण बहुत विशाल हे। उसमे सभी के लिए स्थान हे।

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर

– एक परिचय –

स्थानकवासी जैन परम्परा मे आचार्य श्री [illegible] सा एक महान् क्रांतिकारी संत हुए है। आषाढ शुक्ला [illegible] भीनासर मे सेठ हमीरमलजी बांठिया स्थानकवासी [illegible] उन्होने संथारापूर्वक अपनी देह का त्याग किया। उनकी [illegible] यात्रा के बाद चतुर्विध संघ की एक श्रद्धांजलि सभा [illegible] जिसमे उनके अनन्य भक्त भीनासर के सेठ श्री चम्पालाल [illegible] ने उनकी स्मृति मे भीनासर मे ज्ञान–दर्शन चारित्र की [illegible] एक जीवन्त स्मारक बनाने की अपील की। तदन्तर दिनांक [illegible] को श्री जवाहर विद्यापीठ के रूप मे इस स्मारक ने मूर्त [illegible]

शिक्षा–ज्ञान एवं सेवा की त्रिवेणी प्रवाहित करते हुए [illegible] अपने छह दशक पूर्ण कर लिए है। आचार्य श्री जवाहरलालजी [illegible] के व्याख्यानो से संकलित, सम्पादित ग्रंथो को 'श्री जवाहर किरणावली' के नाम से प्रकाशित किया जा रहा है। वर्तमान मे इसकी 32 किरणो का प्रकाशन संस्था द्वारा किया जा रहा है इसमे गुम्फित आचार्यश्री की वाणी को जन–जन तक पहुचाने का यह कीर्तिमानीय कार्य है। आज गौरवन्वित है गंगाशहर–भीनासर की पुण्यभूमि जिसे दादा गुरु का धाम बनने का सुअवसर मिला और ज्योतिर्धर आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा की कालजयी वाणी जन–जन तक पहुच सकी।

संस्था द्वारा एक पुस्तकालय का संचालन किया जाता है जिसमे लगभग 5000 पुस्तके एवं लगभग 400 हस्तलिखित ग्रंथ है। इसी से सम्बद्ध वाचनालय मे दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक–कुल 30 पत्र–पत्रिकाये उपलब्ध करवाई जाती है। प्रतिदिन करीब 50–60 पाठक इससे लाभान्वित होते है। ज्ञान–प्रसार के क्षेत्र मे पुस्तकालय वाचनालय की सेवा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और क्षेत्र मे अद्वितीय है।

महिलाओ को स्वावलम्वी बनाने हेतु सस्था द्वारा सिलाई, बुनाई, कढाई प्रशिक्षण केन्द्र का सचालन किया जाता है, जिसमे योग्य अध्यापिकाओ द्वारा महिलाओ व छात्राओ को सिलाई, बुनाई, कढाई व पेन्टिग कार्य का प्रशिक्षण दिया जाता है। इससे वे अपने गृहस्थी के कार्यो मे योगदान दे सकती है और आवश्यकता पडने पर इस कार्य के सहारे जीवन मे स्वावलम्बी भी बन सकती है।

सस्था के सस्थापक स्वर्गीय सेठ चम्पालाल जी बाठिया की जन्म जयन्ती पर प्रत्येक वर्ष उनकी स्मृति मे एक व्याख्यानमाला का आयोजन किया जाता है जिसमे उच्च कोटि के विद्वानो को बुलाकर प्रत्येक वर्ष अलग–अलग धार्मिक, सामाजिक विषयो पर प्रवचन आयोजित किए जाते है।

उपरोक्त के अलावा प्रदीप कुमार जी रामपुरिया स्मृति पुरस्कार के अन्तर्गत भी प्रतिवर्ष स्नातकस्तरीय कला, विज्ञान एव वाणिज्य सकाय मे बीकानेर विश्वविद्यालय मे प्रथम व द्वितीय स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियो को नकद राशि, प्रशस्ति–पत्र एव प्रतीक–चिन्ह देकर सम्मानित किया जाता है एव स्नातकोत्तर शिक्षा मे बीकानेर विश्वविद्यालय मे सर्वाधिक अक प्राप्त करने वाले एक विद्यार्थी को विशेष योग्यता पुरस्कार के रूप मे प्रशस्ति–पत्र एव प्रतीक–चिन्ह देकर सम्मानित किया जाता है।

विद्यापीठ द्वारा ठण्डे मीठे जल की प्याऊ का सचालन किया जाता हे। जनसाधारण के लिए इसकी उपयोगिता स्वय–सिद्ध हे। इस प्रकार अपने बहुआयामी कार्यो से श्री जवाहर विद्यापीठ निरन्तर प्रगति–पथ पर अग्रसर हे।